इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
मानविकी विद्यापीठ

BHDC-133
आधुनिक हिंदी कविता

खंड

2

छायावाद

इकाई 7

छायावादः स्वरूप और विकास 169

इकाई 8

जयशंकर प्रसाद और उनकी कविता 196

इकाई 9

सूयंकांत त्रिपाठी 'निराला' और उनकी कविता 232

इकाई 10

सुमित्रानंदन पंत और उनकी कविता 257

इकाई 11

महादेवी वर्मा और उनकी कविता 273

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

खंड 2 परिचय

पाठ्यक्रम का यह दूसरा खंड 'छायावाद' पर केन्द्रित है। छायावादी काव्य के स्वरूप, विकास तथा उसके चार आधार-स्तम्भ कवियों के जीवन वृत्त, व्यक्तित्व एवं काव्य की विस्तृत एवं गहन जानकारी आप इस खंड में पा सकेंगे। ये चार प्रमुख कवि हैं-महाकवि जयशंकर प्रसाद, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, सुमित्रानंदन पंत तथा महादेवी वर्मा।

इस पाठ्यक्रम में पहले खंड में आपने आधुनिक काल के पहले दो काव्य युगों (भारतेन्दु युग तथा महावीर प्रसाद द्विवेदी युग) के कवियों और काव्य-प्रवृत्तियों का भी गहन अध्ययन किया है। महावीर प्रसाद द्विवेदी युग के बाद आधुनिक हिंदी काव्य में 'छायावाद' नामक काव्यान्दोलन का आगमन हुआ। इस काव्यान्दोलन ने आधुनिक कविता के दोनों युगों से हटकर चिंतनपरक-मानवीय-मूल्यों और भाषागत सूक्ष्म व्यंजनाओं को अपनाते हुए सांस्कृतिक तथा राष्ट्रीय जागरण का बीड़ा उठाया। वर्णन प्रधान तथा आख्यानक-कविताओं का स्थान अब युवा मन की स्वच्छंद भावनाओं और उनके मानसचित्रों ने ले लिया। व्यक्ति-स्वातंत्र्य के स्वर तथा जन-जागरण की लहर ने काव्य को विषय एवं शिल्प दोनों ही दृष्टियों से वैशिष्ट्य प्रदान किया। स्वानुभूति, कल्पना एवं प्राकृतिक-स्वंदन, लाक्षणिक वैचित्र्य तथा आध्यात्मिक-स्पर्श ने छायावादी काव्य को अद्‌भुत, अनुपम तथा अपूर्व सौन्दर्य से सुसज्जित किया। सन् 1915-16 से सन् 1937-38 तक के इस काल खंड की कविता ने हिंदी-साहित्य में ही नहीं समग्र भारतीय साहित्य में भी एक क्रांति पैदा कर दी। नवजागरण और जागृति-चेतना के इसी प्राणवान काव्य का विस्तृत एवं गहन अध्ययन ही इस खंड की पाँच इकाइयों में आप करेंगे। सभी इकाइयों में छायावादी काव्य की पृष्ठभूमि और युगीन-परिवेश के परिप्रेक्ष्य में काव्य-प्रवृत्तियों का व्यापक विवेचन करने का प्रयास रहा है।

पहली इकाई (इकाई संख्या 7) 'छायावाद : स्वरूप और विकास' है। इसमें छायावाद की पृष्ठभूमि की चर्चा करते हुए युगीन परिस्थितियों और साहित्यिक-परिवेश का विवेचन सर्वप्रथम किया गया है। तदोपरांत छायावाद का प्रारंभ, उसका अर्थ विस्तार तथा व्यापकता, छायावाद के गौण कवियों की चर्चा करते हुए चारों प्रमुख कवियों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। छायावाद की अन्तर्वस्तु पर चर्चा करते हुए काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियों पर विचार किया गया है। अंत में छायावाद के रचना-विधान में स्वच्छंद-कल्पना, काव्य-भाषा तथा काव्य-शिल्प की चर्चा करते हुए छायावाद की शक्ति और सीमाओं का मूल्यांकन किया गया है।

इकाई संख्या 8 में छायावाद के प्रवर्तक कवि जयशंकर प्रसाद के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर विस्तार से विवेचन किया गया है। जीवन, व्यक्तित्व, युग-परिवेश, रचनाएँ, रचना-संसार तथा काव्य की प्रमुख प्रवृत्तियों पर प्रकाश डालते हुए कवि के रचना-विधान की समीक्षा की गई है। अंत में महाकवि प्रसाद की तीन कविताओं का वाचन एवं संदर्भ-सहित उनकी व्याख्या करते हुए व्याख्या-पद्धति को भी स्पष्ट किया गया है।

इसी प्रकार इकाई संख्या 9, 10 तथा 11 में क्रमशः सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, सुमित्रानंदन पंत तथा महादेवी वर्मा के जीवन, व्यक्तित्व, युग परिवेश तथा रचनाओं आदि का विवेचन करते हुए उनकी काव्य-प्रवृत्तियों के साथ-साथ रचना-विधान की भी समीक्षा की गई है। इन तीनों कवियों की दो-दो कविताओं के वाचन एवं संदर्भ सहित-व्याख्या द्वारा काव्य की मूल-संवेदना को स्पष्ट करने का प्रयास भी रहा है।

प्रत्येक इकाई के अंत में मूल्यांकन-परक सारांश देते हुए इकाई में प्रयुक्त कठिन शब्दावली के अर्थ भी दे दिए गए हैं। इकाई संबंधी महत्वपूर्ण पुस्तकों की एक सूची भी अतिरिक्त जानकारी के लिए दी जा रही है। प्रत्येक इकाई में कुछ बोध प्रश्न/अभ्यास भी दिए गए हैं जिससे आप प्रत्येक-चरण में अपने बोध और प्रगति की जाँच कर सकें। इकाई के अंत में इन बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर या संकेत भी दे दिए गए हैं।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 7 छायावादः स्वरूप और विकास

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 छायावाद की पृष्ठभूमि

- 7.2.1 युगीन परिस्थितियाँ
- 7.2.2 साहित्यिक परिवेश

7.3 छायावाद का प्रारम्भ

- 7.3.1 ''छायावाद'' शब्द का प्रयोग
- 7.3.2 अर्थ विस्तार तथा व्यापकता

7.4 छायावाद के प्रमुख कवि

- 7.4.1 प्रवर्तक कवि जयशंकर प्रसाद
- 7.4.2 सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला
- 7.4.3 सुमित्रानन्दन पन्त
- 7.4.4 महादेवी वर्मा

7.5 छायावाद की अन्तर्वस्तु

- 7.5.1 व्यक्ति-स्वातंत्र्य का स्वर
- 7.5.2 रूढ़ियों से मुक्ति का प्रयास
- 7.5.3 प्राकृतिक स्पंदन
- 7.5.4 गीतात्मक मधुर वेदना
- 7.5.5 नारी विषयक नव्य धारणा
- 7.5.6 युगीन सत्य और यथार्थ-अभिव्यक्ति
- 7.5.7 राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक चेतना

7.6 छायावाद का रचना-विधान

- 7.6.1 स्वच्छंद कल्पना का नवोन्मेष
- 7.6.2 काव्य-भाषा
- 7.6.3 काव्य-शिल्प

7.7 छायावाद का महत्वः शक्ति और सीमाएँ

- 7.7.1 ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य
- 7.7.2 प्रासंगिकता

7.8 सारांश

7.9 शब्दावली

7.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

7.11 बोध प्रश्नों अभ्यासों के उत्तर

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

7.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आपः

- छायावाद नामक काव्यान्दोलन तथा छायावादी काव्य का निर्माण करने वाली परिस्थितियों को जान सकेंगे;
- आधुनिक हिंदी काव्य के विकास में छायावाद की सही परख और पहचान कर सकेंगे;
- छायावाद के चार आधार-स्तम्भ कवियों- जयशंकर प्रसाद, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, सुमित्रानन्दन पन्त तथा महादेवी वर्मा-का परिचय तथा उनकी कविताओं का सम्यक् अर्थबोध प्राप्त कर सकेंगे;
- छायावाद की विषय-वस्तु तथा वैचारिक पृष्ठभूमि को समझ सकेंगे; और
- छायावाद युग में परिवर्तित रचना-विधान का प्रामाणिक परीक्षण करते हुए उसकी शक्ति एवं सीमाओं का मूल्यांकन कर सकेंगे।

7.1 प्रस्तावना

आधुनिक हिंदी कविता के इतिहास का दूसरा युग ''द्विवेदी युग'' के नाम से जाना जाता है। द्विवेदी-युगीन काव्य की वर्णनात्मक काव्य प्रवृत्तियों का अध्ययन आप कर ही चुके हैं। द्विवेदी युगीन काव्य के अंतिम चरण में सन् 1916 के आस-पास जिस नूतन-काव्यधारा का अविर्भाव हो रहा था उसे ही आगे चलकर ''छायावाद'' की संज्ञा से अभिहित किया गया। द्विवेदी युगीन कविता खड़ी बोली में लिखी गई **वर्णन प्रधान कविता** बनकर भी लोकप्रिय तो हुई किन्तु साहित्य के अभाव तथा उपदशात्मक पद्धति ने उस कविता में **एकरूपता** पैदा कर दी थी। रीति-काव्य परंपरा का अनुसरण इस युग के ब्रजभाषा-काव्य में यथावत् हो रहा था। कविता अपने युग की समस्याओं का प्रतिबिंब मात्र बनकर रह गई थी। पौराणिक आख्यानों और ऐतिहासिक कथाओं को पद्यबद्ध कर देने की इस होड़ में रचनाधर्मिता का वैशिष्ट्य कवि-कर्म से विलग होता रहा था। चिरन्तन मानवीय मूल्य, भाषागत बारीक-व्यंजनाएँ तथा तराशे गए शब्दों में अर्थ की नई संभावनाएँ पैदा करने की इस जरूरत को पूरा करने का उद्देश्य ''छायावाद'' ने चुना। युवा मत की स्वच्छंद भावनाएँ और उनके विकास के गतिशील मानसचित्र, राष्ट्रीय-स्वाधीनता और व्यक्ति-स्वातंत्र्य का स्वर तथा जन-जागरण की विश्वव्यापी लहर को संवार कर प्रवाहमान बनाने का दायित्व निभाया छायावादी-काव्य ने। अनुपम भावभंगिमा तथा विषय एवं शिल्प का पूर्ववर्ती काव्य से पार्थक्य इस कविता की अलग पहचान बनी। इस कविता की सर्वप्रमुख विशिष्टता यह थी कि अधिकाशंतः इसमें बाह्य अर्थ से भिन्न एक भीतरी सूक्ष्म-अर्थ-छवि की छाया प्रतीत हो रही थी, इसीलिए इस कविता को ''छायावाद'' नाम दिया गया और यही देखते-देखते एक युग-प्रवृत्ति के रूप में भी स्थापित हो गया।

स्वानुभूति, कल्पना, प्रकृति का मानवीकरण, लाक्षणिक विचित्रता, मूर्तिमत्ता तथा आध्यात्मिक-छाया आदि विशेषताओं से सम्पन्न छायावादी काव्य में व्यक्ति की स्वाधीनता की भावना से उत्पन्न सौन्दर्य को ही संपूर्ण समाज के स्वाधीनता-सौन्दर्य की अभिव्यक्ति बनाकर प्रस्तुत किया गया है। वस्तुओं को असाधारण दृष्टि से देखने वाले छायावादी कवि की दृष्टि में उन्मादकता के साथ-साथ अंतरंगता का संस्पर्श भी रहा है। छायावाद की इसी विचित्र प्रकाशन-रीति के कारण उसके लिए **''मिस्टिसिज़्म''** और छायावाद जैसे शब्द तो प्रयुक्त हुए ही, साथ ही रहस्यवाद और छायावाद को भी कुछ लोगों ने एक ही मान लिया। इस मान लेने का मुख्य आधार था उस अज्ञात सत्ता के प्रति प्रस्तुत जिज्ञासा का आध्यात्मिक रंग में डूबा होना। यही कारण है कि ईसाई मत में ''छाया'' अर्थ देनेवाला

''फैंटसमेटा'' शब्द भी प्रयोग हुआ और छायावाद पर नाम तथा भाव से यूरोप का प्रभाव भी मान लिया गया। इतना ही नहीं, कुछ समय बाद छायावाद के लिए **''रोमैण्टिसिज़्म''** शब्द का प्रयोग भी किया गया। इसी के आधार पर इसका हिंदी अनुवाद **''स्वच्छन्दतावाद''** सामने आया। कवि तथा आलोचकों ने छायावाद और रोमैण्टिसिज़्म को पर्याय समझना प्रारम्भ कर दिया। परन्तु मूलतः रहस्यवाद, छायावाद और स्वच्छन्दतावाद में सूक्ष्म अंतर है और छायावादी-काव्य में ये अन्य दो प्रवृत्तियाँ भी देखने को मिलती हैं। अतः छायावाद विदेशी पराधीनता और स्वदेशी जीर्ण-शीर्ण रूढ़ियों से मुक्त होने के मूक प्रयासों का मुखर स्वर है जिसमें राष्ट्रीय जागरण की चेतना प्रधान है। इसे विस्तार से हम इसी इकाई में आगे चलकर तो देखेंगे ही, साथ ही इस खंड की अन्य चार इकाइयों में भी देख सकेंगे। यहाँ केवल इतना जान लेना पर्याप्त है कि विवाद और आरोप-प्रत्यारोपों के कटघरे में डाले जाने पर भी इस नव्यतम-काव्यान्दोलन ने जन-जागरण और राष्ट्रीय-सांस्कृतिक चेतना की सार्वभौमिक-लहर प्रवाहित करके काव्य-प्रेमियों और रसिकों की संवेदनाओं को स्पंदित कर दिया। ''इन्दु'', ''मतवाला'' तथा ''सुधा'' आदि पत्रिकाओं एवं ''पल्लव'' और ''परिमल'' की भूमिकाओं के माध्यम से जयशंकर प्रसाद, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, सुमित्रानन्दन पन्त तथा महादेवी वर्मा ने छायावादी काव्य को आधुनिक हिंदी कविता का उत्कर्ष काव्य कहकर स्थापित किया। अतः युवा मन की स्वच्छंद भावनाओं के विकास एवं उनकी गतिशील-चित्रात्मकता को समझने के लिए हमें पूरे मनोयोग से इस काव्य-युग का अध्ययन करना होगा। यहाँ सर्वप्रथम हम इस अनुपम काव्य-फल के पालन-पोषण में ही नहीं जन्म में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाली युगीन-पृष्ठभूमि पर दृष्टिपात कर लें तो उचित होगा।

7.2 छायावाद की पृष्ठभूमि

साहित्य और समाज का शाश्वत सम्बन्ध होता है। प्रत्येक सभ्य-समाज को विरेचित करने का महत्वपूर्ण कार्य करती है 'कविता'। इसी कारण उसे 'प्राणदायिनी-औषधि' भी कहा जा सकता है। समाज को कल्याण के मार्ग पर अग्रसर करके स्थायी प्रेरणा-स्रोत बनने वाली, छायावाद-युग की कविता का भी समाज से घनिष्ठ संबंध रहा है। इस सम्बन्ध की गहराई और व्यापकता को उस युग की परिस्थितियों और परिवेश से परखा जा सकता है।

सन् 1857 की क्रांति की चिंगारी ही धीरे-धीरे सुलगती रही और आगे चलकर यही अग्नि पुंज स्वतंत्रता-संघर्ष का पुण्य प्रारम्भ बना। ऐसे में आधुनिक युग तक आकर राष्ट्रीय-आकांक्षा की नवजागरणवादी-भावना, नैतिकता के साथ-साथ पुनरूत्थानवादी दृष्टि से जुड़कर अधिक सक्रिय होने लगी। द्विवेदी युग में अतीत के गौरव का स्मरण करते हुए सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक विरासत को रेखाकिंत कर गीतों में पिरोया जाना प्रारम्भ हुआ। छायावाद तक आते-आते विवेकानन्द के प्रेरक विचारों ने, महर्षि अरविन्द के क्रांतिकारी-स्वर ने तथा महात्मा गांधी के अहिंसावादी सिद्धातों ने क्रमशः स्फूर्ति और उत्तेजना तथा आत्मिक खोज, आध्यात्मिक और सांस्कृतिक चेतना की ज्योति का प्रज्वलन और राष्ट्रीय भावना के सात्विक भाव का जन-जन तक प्रचार-प्रसार करते हुए साहित्य की सुदृढ़ पृष्ठभूमि तैयार कर दी। इनके साथ-साथ रवीन्द्रनाथ टैगोर, लोकमान्य तिलक, सुभाषचन्द्र बोस तथा गोखले आदि राष्ट्र-नेताओं ने जिस राष्ट्रीय-सांस्कृतिक चेतना का आध्यात्मिक प्रसार किया छायावादी काव्य उसे अपने में आत्मसात करके साहित्य-जगत में उपस्थित हुआ। राष्ट्रीयता की इस बुलन्दी का प्रखर स्वर छायावादी काव्य के सभी प्रमुख कवियों में देखा जा सकता है। प्रसाद और निराला में तो यह चेतना अपने विशिष्ट-स्वरूप को लेकर सामने आती है। स्वष्ट है कि युग परिवश की प्रेरणा और उत्साह का आह्वान ही छायावादी काव्य में ध्वनित होकर उपस्थित होता है। इसे हम छायावाद के चारों प्रमुख कवियों की आगामी इकाइयों में स्वतंत्रतः भी देखेंगे। सभी छायावादी कवियों ने अनुभव किया कि देश की जनता को जीवित और जागृत रखने के लिए उसमें मानवीय रागात्मक-बोध और सौन्दर्य-बोध का सम्मोहन भरना होगा। इसके लिए उन्होंने प्रकृति को अपना

विषय बनाया और समूची संवेदना के साथ अपना सन्देश दिया। उन्होंने राष्ट्रीय चेतना के साथ ही विश्व दृष्टि का परिविस्तार किया और इस प्रकार एक बड़े व्यापक धरातल पर अपने काव्यान्दोलन का मंगलारम्भ किया। ऐसा विषद् आयाम छायावाद के पूर्व या परवर्ती दूसरी किसी काव्य प्रवृत्ति के साथ नहीं दिखाई देता है।

7.2.1 युगीन परिस्थितियाँ

छायावादी कविता अपने युग की अवश्यम्भावी परिणति है। 1857 के बाद भारत में ब्रिटिश शासन पूरी शक्ति के साथ स्थापित हो गया। उसकी घोषणा और आरम्भिक सुधार योजना का भारतीय जनता ने स्वागत किया, किन्तु शीघ्र ही मोहभंग भी हो गया। प्रबुद्ध कवियों को यह पूर्वाभास हो गया कि इस साम्राज्यवादी उपनिवेश में उनकी अस्मिता अर्थात भारतीय संस्कृति का अस्तित्व संकट में है। अस्तु, उनका राष्ट्रीय स्वाभिमान स्वतंत्रता के लिए छटपटाने लगा, किन्तु अंग्रेज़ों के दमनचक्र और शोषण के कारण उन्हें अभिव्यक्ति का मुक्त अवसर नहीं मिल सका। देश की युवा पीढ़ी रक्त क्रांति एवं असहयोग आन्दोलन की दिशा में सक्रिय थी। इस अवसर पर समाज के व्यापक नवजागरण की आवश्यकता थी। जन-साधारण में अपने स्वर्णिम अतीत के प्रति आस्था जागृत करनी थी, उन्हें एकता के सूत्र में बांधना था और समकालीन राजनीतिक व्यवस्था से ऊपर उठकर उच्चतर मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा करनी थी। बंगाल के अकाल से जो मृत्यु की विभीषिका छा गयी थी और जलियाँवाला बाग के सामूहिक हत्याकाण्ड का जो आतंक जन-जीवन में भर गया था, उसे दूर करने के लिए स्वर्णिम भविष्य की मंगलाशा पैदा करनी थी, अन्यथा हताश जन-समुदाय कुंठाग्रस्त हो जाता, जिससे समूची जाति के नष्ट-भ्रष्ट हो जाने की आशंका थी।

7.2.2 साहित्यिक परिवेश

छायावाद के पूर्व द्विवेदीयुगीन- **इतिवृत्तात्मक** कविता कुछ वर्षों तक जो बहुत लोकप्रिय रही, किन्तु शीघ्र ही उसका प्रभाव मंद पड़ गया, क्योंकि वह अधिकतर संवेग को ऊपरी स्तर पर छूती थी। उसकी भाषा भी सरल सुबोध थी, वह गेय और छंदोबद्ध थी और सामाजिक संदर्भों से जुड़ी हुई थी। द्विवेदी युग के ही समानांतर रीतिकाव्य के अवशिष्ट के रूप में समस्यापूर्ति-कला चल रही थी, जो साहित्यनुरागी जनता का कलात्मक विनोद कर रही थी। उसमें उद्भावना का चमत्कार था, शब्दों का कलाकौतुक था, किन्तु जीवन की कोई अंतदृष्टि और चिन्तन की कोई गूढ़ सम्पदा न थी अतएव यह काव्य परम्परा 1920 तक पहुँचते-पहुँचते निष्प्रभ हो गयी। खड़ीबोली अब अपेक्षाकृत अधिक प्रौढ़, परिमार्जित एवं काव्योपम बन गई थी। जनमानस संचार के नए साधनों से सम्बद्ध होकर अब अधिक जानकार और जिज्ञासु हो गया था। उसकी संचेतनता के अनुकूल कविता को भी सुविचारित तथा विचारोत्तेजक बनाया जा रहा था। ज्ञान-विज्ञान की नई चुनौतियाँ इन कवियों के सामने थीं। ये कवि स्वयं चिन्तनधर्मी थे। अपने स्वाध्याय एवं चिन्तन मनन के सहारे वे नाना विचार-भूमियों से गुज़र रहे थे, फलतः ये जीवन-जगत की भावी परिकल्पना में प्रवृत्त हुए। उन्होंने सर्वप्रथम अपने युग को पौराणिकता से मुक्त किया और आधुनिकता का वरण करते हुए नूतन-पुरातन के संकट बिन्दु का सन्धान किया। छायावाद की यह भावभूमि आज के लिए प्रासंगिक बनी हुई है। चिन्तन और सृजन की समस्त रूढ़ियों से मुक्त होने के कारण छायावाद ने नयी भाषा, नए छन्द, नए विषय, नए काव्य रूप, अर्थात नए-नए मानदण्डों का निर्धारण किया। प्रतीक, बिंब एवं कल्पना-विधान में तो उनका कोई प्रतिस्पर्धी नहीं रहा। विषय-वस्तु के रूप में छायावादी कविता ने जन-चेतना से **लेकर अतिमानव** की लोकोत्तर चेतना की व्यथा-कथा कही अथवा उनके सपने संजोए। इसीलिए स्वच्छन्दतावादी विद्रोह और आध्यात्मिक आस्था, रहस्य एवं दर्शन, लोक-करूणा और आनन्द अर्थात् जीवन के समस्त सम-विषम सिद्धान्त छायावादी काव्य में अन्तर्निहित दिखाई देते हैं। वस्तुतः छायावाद जैसी वैविध्यपूर्ण काव्य प्रवृत्ति दूसरी नहीं है।

7.3 छायावाद का प्रारम्भ

छायावादी काव्य का प्रारम्भ कब हुआ? यह प्रश्न आज भी विवाद का विषय बना हुआ है। स्थूल रूप से यह माना जाता है कि द्विवेदी युग सन् 1920 के बाद निष्प्रभाव हो गया था। वस्तुतः आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी द्वारा संपादित पत्रिका ''सरस्वती'' ही संपादन अवधि को ही द्विवेदी युग की संज्ञा देना उपयुक्त है। उनके कार्यकाल के अन्तिम चरण में (सन् 1915 के आसपास) छायावाद का आरंभ अब लगभग सर्वमान्य हो गया है।

7.3.1 ''छायावाद'' शब्द का प्रयोग

छायावादी शैली से सुपरिचित एक तत्कालीन कवि श्री मुकुटधर पाण्डेय ने 70 वर्ष पूर्व जबलपुर से प्रकाशित ''श्रीशारदा'' नामक पत्रिका के 1920 के अंकों में ''हिंदी कविता में छायावाद'' नाम से एक लेखमाला आरम्भ की और उसमें न केवल पहली बार छायावाद का नामकरण किया बल्कि छायावादी कविता के आरम्भिक चरण-चिन्हों को अंकित भी किया। उन्होंने लिखा था- ''छायावाद एक मायामय सूक्ष्म वस्तु है। इसमें शब्द और अर्थ का सामंजस्य बहुत कम रहता है।'' किन्तु इस लक्ष्ण निरूपण को परवर्ती आलोचक तथा इतिहासकार नहीं समझ पाए! शायद इसीलिए आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने यह अनुमान लगा लिया कि छायावाद और रहस्यवाद बंगाल के ब्रह्म-समाजियों के छायापदों और रवीन्द्रनाथ टैगोर की रहस्यानुभूतियों का नव रूपान्तरण है तथा इनकी प्रेरणा भूमि है- यूरोप के ईसाई प्रचारकों का रहस्य -दर्शन अर्थात **फैंटसमाटा**। उन्होंने छायावाद को **वाच्यार्थ की जगह लक्षक** या अन्योक्तिपरक शब्द प्रयोग को प्रश्रय देने वाली मात्र एक शैली घोषित कर दिया। आचार्य शुक्ल जैसे उद्भट समीक्षक द्वारा न पहचानी गयी इस छायावादी कविता की सही परख-पहचान अर्से तक दबी रही। परिणामस्वरूप छायावाद के प्रवर्तक कवि और छायावादी धारा का सही उल्लेख नहीं हो पाया। किसी समीक्षक को मैथिलीशरण गुप्त प्रथम छायावादी प्रतीत हुए, किसी को सियारामशरण गुप्त। इसी प्रकार माखनलाल चतुर्वेदी, प्रसाद, पन्त, निराला आदि को अलग-अलग यह श्रेय दिया जाता रहा। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इसे पाश्चात्य-प्रभावप्रेरित वैयक्तिक स्वातंत्र्य का काव्य कहा तो आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी ने इस सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक चेतना का नवोन्मेष घोषित किया। डॉ. नगेन्द्र इसे दमित रोमानी स्थूल वृत्ति की सूक्ष्म प्रतिक्रिया माने रहे तो शिवदान सिंह चौहान इसे पलायनोन्मुखी प्रवृत्ति कहते रहे। विडम्बना यह है कि छायावाद के प्रवर्तक महाकवि प्रसाद ने ''काव्य और कला तथा अन्य निबन्ध'' नामक कृति में स्वयं छायावाद विषयक एक घोषणा-पत्र प्रस्तुत किया था, किन्तु उसके मुख्य बिन्दुओं पर किसी का ध्यान नहीं गया।

7.3.2 अर्थ विस्तार तथा व्यापकता

छायावाद को परिभाषित करने वाले समीक्षकों में इसे रहस्यवाद, स्वच्छन्दतावाद, प्रकृतिवाद, वेदनावाद, सर्वोत्मवाद, पलायनवाद आदि में इस प्रकार उलझा दिया कि जहाँ कहीं प्रेम, सौन्दर्य, प्रकृति-चित्रण, अवसाद और भावोद्रेक दिखाई पड़ा, उसे छायावाद भावुकता तथा छायावादी अवसाद का नाम दे दिया गया। इस भ्रम को बढ़ावा देने का कुछ दायित्व छायावादी कवियों पर भी है। निराला जी ने इसमें दर्शन का सन्निवेश आवश्यकता से अधिक किया। महादेवी जी ने अपनी भूमिकाओं में बौद्ध करुणा तथा रहस्य वेदांत का विश्लेषण करके इसका अन्यथा अर्थ इंगित कर दिया। सम्भवतः समीक्षकों के आरोपों की प्रतिक्रिया के रूप में ही ऐसा हुआ। पन्त जी ने छायावाद पर सबसे अधिक लिखा और सबसे अधिक भ्रम पैदा किया। आधुनिक कवि की भूमिका में उन्होंने एक ओर तो छायावाद के अन्त की घोषणा कर दी, इसलिए कि वे प्रगतिवाद की ओर आकृष्ट थे। ''छायावाद पुनर्मूल्यांकन'' में उन्होंने छायावाद को जीवित काव्य प्रवृत्ति घोषित किया और उसमें मधु काव्य, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद और नई कविता के प्रतिनिधि कवियों को सम्मिलित कर

लिया। यह उल्लेखनीय है कि प्रथम उन्मेष में छायावाद की बृहत्रयी (तीन बड़े कवियों का समूह) में मात्र प्रसाद, निराला तथा पन्त की मान्यता थी। इसके पश्चात् महादेवी जी को सम्मिलित करके **''बृहच्चतुष्टय''** (चार बड़े कवियों का समूह) की स्थापना हुई। अनन्तर माखनलाल चतुर्वेदी और डॉ. रामकुमार वर्मा को सम्मिलित करके बृहत्त्रयी और लघुत्रयी की चर्चा की गई। इसी के साथ-साथ उत्तर छायावाद के ''गौण छायावादी'' या ''उपछायावादी'' कवियों के रूप में मोहनलाल महतो वियोगी, जनार्दन झा ''द्विज'', आरसी प्रसाद सिंह, मुकुटधर पाण्डेय, हरिकृष्ण प्रेमी, इलाचन्द्र जोशी, डॉ. नगेन्द्र, चन्द्र कुंवर, उदय शंकर भट्ट, जानकीबल्लभ शास्त्री, कुंवर चन्द्र प्रकाश सिंह, रामधार सिंह, आदि नामों की तालिकाएँ प्रस्तुत की गई। इसमें छायावाद का जहाँ अर्थ विस्तार हुआ, वहीं उसके स्वरूप-निर्धारण में विभ्रम भी उत्पन्न हुआ और इससे सही मूल्यांकन बाधित हुआ। यह ज्ञातव्य है कि ''छाया'' की अर्थच्छाया अथवा उसकी यह छायांकन शैली सबके लिए सहज साध्य नहीं है। स्वयं बृहच्चतुष्टय के ये सिद्ध छायावादी कवि भी आद्यंत छायावादी नहीं रहे। निराला और पन्त का बड़ा रूपान्तरण हुआ है। प्रसाद जी के आरम्भिक काव्य में छायावृत्ति का अभाव है। उनके प्रथम गीत संग्रह ''झरना'' में पहली-पहली बार छायावाद का स्वरूप उद्घाटित हुआ है, इसलिए छायावाद का आरम्भ 1915 ई. के आस-पास मानना समीचीन होगा। इस अभियान की घोषणा 1920 ई. में हुई और फिर इसे स्वीकार करके छायावादी कवियों तथा समीक्षकों ने इसकी विवेचना की। प्रसाद जी ने आचार्य आनंदवर्धन के ध्वनि-सिद्धांत और कुंतक के वक्रोक्ति सिद्धान्त ने इसका उद्गम घोषित करते हुए इसे ''स्वानुभूतिमयी विवृत्ति'', ''विच्छित्ति'' आदि का नया रूपान्तरण सिद्ध किया। पन्त जी ने इसे ''रत्नच्छयामय सौंदर्य'' का दर्शन माना और महादेवी जी ने इसके लिए ''छायावृत्ति'' (अर्थात् एक विशिष्ट मनः संस्थान या मनोवृत्ति) क प्रयोग किया। इन सूत्रों के सहारे ही छायावाद का सही स्वरूप उभारा जा सकता है।

बोध प्रश्न 1

टिप्पणीः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।
ii) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1. दो-तीन पंक्तियों में उत्तर दीजिएः

i) छायावादी कविता की अलग पहचान कैसे बनी?

.....

.....

.....

.....

.....

ii) छायावादी कविता ने अपना क्या उद्देश्य चुना था?

.....

.....

.....

.....

.....

iii) छायावादी कविता के युग को ''छायावाद'' नाम क्यों दिया गया?

.....

.....

.....

iv) ''छायावाद'' के लिए अन्य कौन-कौन से शब्दों का प्रयोग भी किया गया?

.....

.....

.....

.....

v) छायावादी-काव्य के चार प्रमुख कवियों को लेकर ''बृहच्चतुष्टय'' की स्थापना की गई थी। ये चार कवि कौन-कौन से थे?

.....

.....

.....

.....

2. नीचे दिए कथनों में से कुछ सही हैं, कुछ गलत। उपयुक्त चिन्ह लगाकर स्पष्ट कीजिए।

i) पल्लव और परिमल की भूमिका तथा ''इन्दु'', ''मतवाला'' और ''सुधा'' आदि पत्रिकाओं में चारों प्रमुख छायावादी कवियों ने छायावादी काव्य को आधुनिक हिंदी काव्य का उत्कर्ष काव्य कहा था। ( )

ii) छायावादी काव्य की पृष्ठभूमि में विवेकानन्द, महर्षि अरविन्द, महात्मा गांधी, तिलक, बोस तथा टैगोर आदि की विचारधारा की महत्वपूर्ण भूमिका है। ( )

iii) छायावादी काव्य में वर्णन प्रधानता, उपदेशात्मकता तथा एकसरसता का सम्मिश्रवण है। ( )

iv) चिन्तन और सृजन की समस्त रूढ़ियों से मुक्त होने के कारण छायावाद ने नई भाषा, नए छन्द, नए विषय और नए काव्य रूपों का निर्धारण किया। ( )

v) छायावाद का आरम्भ सन् 1915 के आसपास सर्वमान्य हो गया है। ( )

3. केवल पाँच-छह पंक्तियों में उत्तर दीजिएः

i) छायावादी काव्य की युगीन परिस्थितियाँ क्या थीं?

.....

.....

.....

ii) छायावाद का अर्थ विस्तार तथा उसकी व्यापकता पर प्रकाश डालिए।

.....

.....

.....

.....

4. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिएः

i) छायावाद का आरम्भ सन् ..... के आसपास सर्वमान्य हो गया है।

ii) ''हिंदी कविता में छायावाद'' नामक लेखमाला सन्..... ..... में तत्कालीन कवि श्री..... ने ..... नामक पत्रिका में प्रारम्भ की थी।

iii) छायावाद के प्रवर्तक कवि .....थे तथा ''छायावाद-बृहच्चतुष्टय'' के अन्य तीन कवि .....माने जाते हैं।

iv) उत्तरछायावादी या गौण छायावादी कवियों में ....नामक पाँच कवियों की चर्चा की जाती है।

7.4 छायावाद के प्रमुख कवि

''छायावाद'' जैसा कि पहले ही चर्चा की गई है, अपने आप में कविता का एक ऐसा युग है जिसका सम्बन्ध भाव-जगत से है, हृदय की भूमि से है। भावलोक की तो सत्ता ही अनुभव विषय है, हृदय से जानने, समझने और महसूस करने की वस्तु है। उसी छायावाद में समय-समय पर अनेक रचनाकारों और कवियों का समावेश होता रहा। कभी वहाँ ''बृहतत्रयी'' के रूप में ''प्रसाद'', ''निराला'' और ''पन्त'' की चर्चा की जाती रही तो कभी बृहच्चतुष्ट्य के रूप में इन तीनों कवियों के साथ ''महादेवी'' का नाम जोड़कर देखा जाता रहा। कुल मिलाकर छायावाद प्रमुख कवियों या आधार-स्तम्भों में इन चारों महाकवियों की चर्चा, किसी न किसी रूप में चलती ही रही। यह अलग बात है कि इन चार कवियों के साथ-साथ छायावाद के अन्य कवियों में, उत्तरछायावादी कवि या गौण छायावाद कवि कहकर माखनलाल चतुर्वेदी, डॉ. रामकुमार वर्मा, जानकीबल्लभ शास्त्री, हरिकृष्ण प्रेमी, जनार्दन झा ''द्विज'', लक्ष्मी नारायण मिश्र, इलाचन्द्र जोशी, डॉ. नगेन्द्र, चन्द्र प्रकाश सिंह, विद्यावती कोकिल, तारा पाण्डेय, मुकुटधर पाण्डेय, उदय शंकर भट्ट तथा नरेन्द्र शर्मा आदि कवियों को भी इसमें समाविष्ट किया जाता रहा। छायावाद के चार प्रमुख कवियों से इतर इन सभी कवियों के काव्य और उनकी प्रवृत्तियों को लेकर विवाद भी चलते रहे परन्तु इन्हें छायावाद के प्रमुख कवियों में सर्वमान्यता से शामिल नहीं किया जा सका। अतः यहाँ हम छायावाद के चार प्रमुख कवियों का ही संक्षिप्त साहित्यिक परिचय देकर छायावाद की मूल वस्तु पर आएंगे। इन चारों प्रमुख कवियों के संदर्भ में विस्तृत जानकारी आप अगली चार इकाइयों में हासिल करेंगे।

7.4.1 प्रवर्तक कवि जयशंकर प्रसाद

छायावाद के अग्रदूत या प्रवर्त्तक के रूप में हमारे सामने केवल जयशंकर प्रसाद का ही नाम उभर कर आता है। केवल भाषा या विषय-वस्तु ही नहीं, प्रसाद ने जीवन दृष्टि भी नवीन बना डाली। 20वीं शताब्दी को अपने व्यक्तित्व और कृतित्व से सर्वाधिक प्रभावित और

प्रेरित करने वाले इस ''बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न'' कलाकार ने कविता के साथ-साथ नाटक, उपन्यास, कहानी, निबन्ध तथा समीक्षा आदि विभिन्न गद्य-पद्य विधाओं में अपनी ऐतिहासिक तथा महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है।

सन् 1889 ई. में वाराणसी के एक प्रतिष्ठित परिवार में जन्मे ''प्रसाद'' का जीवन परिस्थितियों से संघर्ष करते हुए प्रारम्भ हुआ। घर में ही शिक्षार्जन तथा पारिवारिक व्यवसाय का दायित्व निभाते हुए भी सरस्वती के इस लाडले पुत्र ने अपनी अप्रतिम प्रतिभा का परिचय दिया और कई काव्य-कृतियों की रचना कर डाली। प्रारम्भ में ''कलाधर'' के नाम से कतिपय ब्रजभाषा-छन्द भी प्रसाद ने लिखे जो आगे चलकर ''चित्राधार'' में संकलित किए गए। खड़ी बोली को परिष्कृत, परिमार्जित और अपनी काव्य कृतियों से पुरस्कृत करने वाले इस महाकवि की प्रारम्भिक काव्य कृतियाँ हैं ''प्रेम पथिक'', ''करुणालय'', ''कानन-कुसुम'' तथा ''महाराणा का महत्व''। सन् 1918 ई. में ''झरना'' लिखी और कवि प्रसाद छायावाद के प्रवर्त्तन की ओर अग्रसर होने लगे। इसके बाद सन् 1925 ई. में ''आंसू'', सन् 1933 ई. में ''लहर'' तथा सन् 1935 ई. में ''कामायनी'' का सृजन हुआ और प्रसाद काव्य-साधना के उच्चतम शिखर पर पहुँच गए।

प्रसाद की काव्य-चेतना की विविध प्रवृत्तियों से समृद्ध इन कृतियों की अन्तर्वस्तु की विस्तृत चर्चा हम आगे की इकाई में करेंगे। यहाँ केवल इतना कहना पर्याप्त होगा कि आधुनिक कविता के इतिहास में एक तरफ प्रेम, सौन्दर्य तथा आनन्द और दूसरी तरफ भाव, विचार तथा आनन्द का अद्भूत सामंजस्य देने वाला यह कवि मानव-मूल्यों के बहुत व्यापक फलक का कवि है। केवल 48 वर्ष की अवस्था में यक्षमा से पीड़ित इस महाकवि का 15 नवम्बर सन् 1937 को स्वर्गवास हो गया। किन्तु महाकवि जयशंकर प्रसाद सभी काव्य प्रेमियों और रसिकों को काव्य का ऐसा अद्भूत और अनुपम आस्वाद प्रदान कर गए, जो सदैव ही अतुलनीय तथा अमर बना रहेगा।

7.4.2 सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला

छायावाद के प्रवर्त्तक कवि प्रसाद के बाद महत्वपूर्ण स्थान रखने वाले कवि हैं महाप्राण ''निराला''। अपने प्रचण्ड विद्रोह, उदग्र सौन्दर्य तथा उदात्त एवं आदर्श-जीवन दर्शन के इस कवि को हिंदी काव्य का शलाका पुरुष कहा जाता है। सन् 1896 ई. में बंगाल के मेदिनीपुर महिषादल में जन्में इस महाकवि के जीने का अंदाज़ भी उपमान की तरह ''निराला'' ही था। जीवन की विषम परिस्थितियों से जूझते और संघर्ष करते हुए भी साहित्य की महान् सेवा करने वाले इस आधार स्तम्भ ने ''परिमल'', ''अनामिका'', ''तुलसीदास'', ''गीतगुन्ज'', ''कुकुरमुत्ता'', ''गीतिका'', ''अणिमा'', ''बेला'', ''नये पत्ते'', ''सांध्य-काकली'', ''अर्चना'' तथा ''आराधना'' जैसी महानतम कृतियाँ प्रदान कीं। छायावादी काव्य को अनुपम तथा नवीनतम गति देने वाले इस विद्रोही कवि ने भाव, भाषा और छंद आदि क्षेत्रों में युगान्तकारी परिवर्तन उपस्थित कर डाला। वेदान्त दर्शन के गहन अध्येता महाकवि निराला ने भी प्रसाद की तरह ही अपनी प्रतिभा के बल पर दर्शन और काव्य में अद्भुत समन्वय स्थापित किया। छायावाद ही नहीं हिंदी साहित्य के इतिहास में महाप्राण निराला को उनकी भाषा तथा मुक्त-छंद के संदर्भ में युगों-युगों तक याद किया जाता रहेगा। काव्य के अतिरिक्त कहानी, उपन्यास, निबन्ध तथा पत्रकारिता के क्षेत्र में भी निराला जी की विशिष्ट रुचि एवं देन रही। अक्तूबर, 1961 में भौतिक अस्तित्व को तज देने वाले इस चिरन्तन ''कवि-व्यक्तित्व'' के अमर-प्रतीक पर सभी साहित्य- प्रेमियों को गर्व है।

7.4.3 सुमित्रानन्दन पन्त

छायावाद के चार आधार स्तम्भों में सुमित्रानन्दन पन्त तीसरे प्रमुख स्तंभ हैं जिनका नाम सदैव अमर रहेगा। व्यक्तित्व के अनुरूप ही काव्य को कोमलता, सरसता और सुन्दरता प्रदान करने वाले इस प्रकृति-पुत्र का जन्म 20 मई, सन् 1900 ई. में ''कोसानी'' में हुआ

था। अनन्य प्रकृति प्रेमी तथा विदग्ध-विचारक कवि पन्त ने बाल्यावस्था से ही काव्य-सृजन प्रारम्भ कर दिया था। कवि रूप में स्थापित इस महान व्यक्तित्व ने काव्य से इतर नाटक, कहानी, उपन्यास, निबन्ध संस्मरण तथा समीक्षा के क्षेत्र में भी अपनी प्रतिभा का परिचय दिया, किन्तु मूलतः वे कवि ही थे और अपनी विशिष्ट पहचान भी इसी क्षेत्र में बना सके। समय-समय पर गांधी, मार्क्स तथा अरविन्द आदि से प्रभावित और प्रेरित होने वाले इस प्रकृति-प्रेमी कवि की आरम्भिक रचनाएँ ''वीणा'' में संकलित हैं। इसके अतिरिक्त अन्य काव्य कृतियों में ''ग्रन्थि'', ''पल्लव'', ''गुंजन'', ''युगान्त'', ''ज्योत्सना'', ''अंतिमा'', ''ग्राम्या'', ''युगवाणी'', ''युगान्तर'', ''स्वर्ण-किरण'', ''स्वर्ण-धूलि'', ''उत्तरा'', ''रजत-शिखर'', ''शिल्पी'', ''लोकायतन'', ''कला और बूढ़ा चाँद'', ''किरण'', ''पौ घटने से पहले'', ''गीतहंस'', ''समाधिता'', ''आस्था'' तथा ''सत्यकाम'' आदि चिरस्मरणीय हैं। प्रकृति चित्रण का हृदयग्राही चित्रण और उसमें भी कोमल पक्ष विशेष रूप से कवि की रूचि का वैशिष्ट्य है। परिमार्जित, सरस एवं मधुर भाषा से समृद्ध कविता-कामिनी का यह सृजक कवि 31 दिसम्बर, सन् 1977 ई. को दिवंगत हो गया, किन्तु उनका साहित्य सदैव ही अमर रहेगा।

7.4.4 महादेवी वर्मा

छायावादी काव्य को संवारने-निखारने वाली गीति-लेखिका महादेवी वर्मा का नाम छायावाद के कवियों में अत्यन्त आदर से लिया जाता है। रहस्य, वेदना और गीतात्मकता की अमर-सृजक महादेवी का जन्म सन् 1907 ई. में फरूखाबाद में हुआ था। विधिवत् शिक्षा प्राप्त कर आजीवन प्रयाग-महिला विद्यापीठ की सेवा करने वाली महादेवी हृदय की अनुभूतियों और सूक्ष्मतम भावनाओं को सफलतम अभिव्यक्ति देती हैं और यह उनके कृतित्य का बेजोड़ पक्ष है। काव्य ही नहीं, रेखाचित्र, संस्मरण, निबन्ध तथा पत्रकारिता के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण योगदान देने वाले महादेवी वर्मा के बहुमुखी प्रतिभा-सम्पन्न व्यक्तित्व ने ''वेदना'' के मर्म से जो तादाकार किया और कराया है वह निश्चित ही उनका अपना वैशिष्ट्य है। सन् 1930 ई. में उन्होंने ''नीहार'' नामक काव्य संकलन प्रदान किया और उनकी प्रतिभा की धूम पूरे भारत में मच गई। इसके बाद लगातार सन् 1934 ई. में ''नीरजा, सन् 1936 में ''सांध्यगीत'' तथा सन् 1940 ई. में ''दीपशिखा'' जैसी कृतियों में गीतों के माध्यम से आध्यात्मिक-वेदना और रहस्या-चेतना को मुखर बना दिया। दुखानुभूति को लेकर अज्ञात सत्ता की ओर उन्मुख होने वाली वेदना की महागायिका महादेवी वर्मा ने 11 सिंतबर, सन् 1987 को निर्वाण प्राप्त किया। भाव और कला की यह सबल और समृद्ध ''प्रतिभा'' भारतीय साहित्य-जगत के लिए चिरस्मरणीय है।

7.5 छायावाद की अन्तर्वस्तु

'छायावाद' एक युग प्रवृत्ति है, इसलिए उसका अपना एक विशिष्ट युग बोध भी है। छायावादी काव्य की जिस अन्तर्वस्तु की चर्चा अब हम करने जा रहे हैं वह जितनी समसामयिक परिस्थितियों से प्रभावित है उतनी ही इस युग के कवियों की अंतदृष्टि से भी प्रेरित है। ''प्रथम वसंत के अग्रदूत'' के रूप में स्वाधीनता की भावना को निमंत्रित करने वाले ये कवि नवजागरण के दूत बनकर हमारे सामने आते हैं। इसी कारण छायावादी काव्य को ''शक्ति-काव्य'' भी कहा जाता है। हिंदी साहित्य में आधुनिक कविता का इतिहास देखें तो स्पष्ट हो जाता है कि पहली बार छायावाद को ही विराट-मानवीय-वेदना की भाव-भूमि पर प्रतिष्ठित होने का श्रेय प्राप्त होता है। यद्यपि इस काव्य को उद्दाम-वैयक्तिकता का विस्फोट माना गया है, फिर भी विश्व दृष्टि को आत्मसात करने में छायावाद ने जो पहल की है, वह किसी अन्य काव्यान्दोलन ने नहीं की। वैज्ञानिक-युग की अतिबौद्धिकता और उससे पैदा होने वाली जीवन की विभीषिकाएँ जब मनुष्य समाज को घेरने लगीं तो जनजीवन को मंगलमय- भविष्य और कल्याणकारी कल के सुनहरे स्वप्न दिखाकर कुंठित-मानसिकता के चुंगुल में जाने से बचाने का महत्वपूर्ण कार्य किया

छायावाद ने। इस निबन्ध, उन्मुक्त तथा स्वच्छन्द जीवन की आंकाक्षाओं पर लगाए गए सभी बंधनों को काट-फेंकने का जीवन-कार्य इस काव्य ने किया। इन सभी दिशाओं की वैचारिक प्रकृति और अनुभवी मानसिकता को हम एक-एक करके यहाँ देखेंगे।

7.5.1 व्यक्ति-स्वातंत्र्य का स्वर

छायावाद बूंद और समुद्र, व्यष्टि और समष्टि या मानव और समाज-दोनों का अपूर्व समन्वय अपने भीतर करता चलता है। खूबी यह है कि व्यक्ति स्वातंत्र्य को प्रेरित करते हुए विश्व बोध में उसका विलयन कर देना छायावाद की सफलतम उपलब्धि है। प्रत्येक देशवासी में स्वतंत्रता की भावना, आत्माभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और व्यक्तिगत स्वाधीनता की प्रतिष्ठा- यही सब छायावाद के साहित्यिक, आन्दोलन को जीवन्त बनाते हैं। निराला जब यह कहते हैं- **''मैंने मैं शैली अपनाई''-** तो यहाँ ''मैं'' कहकर समूचे युग की पीड़ा को वे अपनी निधि मान कर चलते हैं। प्रसाद जी भी ''आँसू'' में इसी प्रकार वैयक्तिक विरह को ''विश्व-वेदना'' में परिणत करके यही कामना करते हैं- **''चुन-चुन ले रे कनकन से जगती की सजग व्यथाएँ''** इसी प्रकार पन्त, निराला और महादेवी के काव्य में आत्माभिव्यक्ति का यह स्वर कई स्थानों पर देखने को मिलता है। निराला की इन अभिव्यक्तियों को देखिए:

i) मैं अकेला! देखता हूँ आ रही, मेरे दिवस की सान्ध्य बेला।''

ii) ''ज्योति निर्झर बह गया है, रेत ज्यों तन रह गया है।''

iii) ''अभी न होगा मेरा अन्त।''

iv) '' मैं ही बसंत का अग्रदूत।''

छायावादी कविता पुरातन-सामाजिक रूढ़ियों और झूठी नैतिकताओं के बंधनों को काट फेंकने का जागृति-गान लेकर आती है। निराला सामंती-समाज द्वारा गुलामी के जाल में जकड़ने की प्रक्रिया को निरंतर देखते रहे, और उसे ललकारने तथा उससे जूझने के जीवन-मूल्यों को भी स्थापित करते रहे। ''अबे सुन बे गुलाब'' कहकर वे उस सामंती-समाज को फटकारते ही नहीं, उसे समझाते भी हैं-

मानव मानव से नहीं भिन्न,
निश्चय ही श्वेत, कृष्ण अथवा,
वही नहीं क्लिन्न;
भेद कर पंक;
निकलता कमल जो मानव का
वह निष्कलंक
हो कोई सर।

पन्त भी जहाँ स्व को सम्बोधित करते हैं, वहीं उनका ''आत्म'' मुखर हो जाता है। पहले वे प्रकृति-चित्रण करते हैं और बाद में उसी में आत्म-दर्शन करने लगते हैं। ''एकतारा'' में वे एकाकी नक्षत्र का रूपांकन करते-करते आत्माभिव्यक्ति करने लगते हैं तो ''नौका-विहार'' कविता के अंत में भी- **''इस धारा सा हो जग का क्रम''** कहकर अपनी अनुभूति को मुखर कर देते हैं। **''मैं प्रेम उच्चादर्शों का, संस्कृति के स्वर्गिक स्पर्शों का''-** कहने वाले पन्त मूलतः जगजीवन के उल्लास कवि बन कर सामने आते हैं।

i) ''जगजीवन में उल्लास मुझे,
नव आशा नव विश्वास मुझे

x x x

ii) 'जीवन की लहर-लहर से, हँस खेल खेल रे नाविक
जीवन के अंतस्तल में नित बूड़-बूड़ से भाविक

इसी स्वातंत्र्य-भाव की आत्माभिव्यक्ति महादेवी में भी सहज ही मिल जाती है। ''रहने दो हे देव! अरे ये मेरे मिटने का अधिकार '' कहने वाली महादेवी का पथ ही निर्वाण बन जाता है। कभी वे ''मैं'' का विस्तार कर देती हैं तो कभी उसे क्षणभंगुर घोषित कर उमड़ कर मिट जाने वाली बदली बना देती हैं-

मैं नीर भरी दुख की बदली
विस्तृत नभ का कोई कोना
मेरा न कभी अपना होना
परिचय इतना इतिहास यही
उमड़ी कल थी मिट आज चली।

इसी प्रकार इन कवियों ने रोमांटिक स्वाधीनता के पथ का भी वरण किया। इनकी ''प्रणय के प्रलय में सीमा सब खो गई'' जैसी स्वच्छन्द-भावना भी बन्धन-मुक्ति की ही परिचायक है। अतः सामाजिक विधि-निषेध के विरूद्ध प्रेम का यह उद्दाभ रूप इन कवियों के सृजन में यत्र-तत्र देखा जा सकता है।

7.5.2 रूढ़ियों से मुक्ति का प्रयास

छायावादी काव्य विनत विद्रोह का काव्य है। उसने प्रथम बार पौराणिकता का निषेध किया और यूरोपीय विद्वानों द्वारा थोपे गए इतिहास को नकारकर नया राष्ट्रीय इतिहास निर्मित किया। ये कवि किसी राजनीतिक विचारधारा के अनुगत नहीं रहे, न मार्क्स के, न गांधी के। उनका अपना चिन्तन रहा है और अपनी प्रणाली भी। छायावादी कवि निराला ने हर प्रकार की रूढ़ि पर प्रहार किया और नये विषय, नयी भाषा के साथ नये छंद (मुक्त छंद) का प्रवर्तन भी किया। कवि पन्त ने ठीक ही कहा था- ''कट गए छंद के बंध, प्रास के रजत पाश''। निराला जी का जय घोंष था- ''तोड़ो, तोड़ो, तोड़ो कारा! पत्थर की, निकले फिर गंगा जल धारा।'' प्रसाद जी के शब्दों में ''पुरातनता का निर्मोक'' प्रकृति को एक पल के लिए भी सह्य नहीं है। इसी ध्येय से पन्त जी ने यह कामना की- ''द्रुत झरो, जगत के जीर्ण पत्र''!

निराला जी के काव्य में नवता के प्रति बड़ा आग्रह है। वे निरन्तर 'नवगति, नवलय, ताल छंद नव, नवल कंठ नवजलद मंद्ररव' के अभिलाषी रहे हैं। उनके गद्य में भी रूढ़ियों से मुक्ति पाने की छटपटाहट सर्वत्र दिखाई देती है। छायावाद के इस विद्रोही-स्वरूप के प्रति पुरातनपंथी आलोचकों की प्रतिक्रिया अनुकूल नहीं रही और उन्होंने अंध-प्रथाओं के समर्थन में इस काव्यान्दोलन का विरोध किया, किन्तु नयी युगधारा को कौन रोक सकता है? छायावाद में मानवीय प्रेम सौन्दर्य के जो रंग-बिरंगे भाव उभरे, वे द्विवेदीयुगीन कोरी नैतिकता की दृष्टि से आपत्तिजनक थे। ''प्रसाद के आंसू में कवि ने अपने संयोग-वियोग के मुक्त उद्गार व्यक्त किए। इसी प्रकार पन्त की कविता ''भावी पत्नी के प्रति'' या ''ग्रन्थि'' में चित्रित दृश्यों से, निराला के श्रृंगारिक गीतों से और महादेवी की रहस्यानुभूति द्वारा सड़ी-गली रूढ़ियों को गहरा आघात लगा। स्पष्ट है कि छायावाद काव्य की विद्रोही भूमिका ऐतिहासिक विकासक्रम में महत्वपूर्ण रही।

7.5.3 प्राकृतिक स्पंदन

छायावादी कविता का प्रकृति से बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। प्रकृति इन कवियों के देश-प्रेम और व्यक्ति-स्वातंत्र्य की आकांक्षा की पूरक रही है। छायावादी कवियों ने प्रकृति को ''सर्व सुन्दरी'' कहा है। पन्त जी के कथनानुसार उन्हें कविता करने की प्रेरणा प्रकृति से मिली है। वास्तव में, ये चारों कवि'' निसर्ग'' कवि रहे हैं। प्रसाद जी ने अपने एक निबंध ''प्रकृति सौन्दर्य'' में प्रकृति को विलक्षण ईश्वरीय देन कहा है और विश्वात्मा की छाया भी

माना जाता है। उनके अनुसार, ''यह प्रकृति जो मनुष्य को आत्म चैतन्य की ओर बार-बार उसका मानवीकरण (नारीकरण) किया है। ''तुलसीदास'' नामक काव्य में उन्होंने प्रकृति के माध्यम से चित्त का उदात्तीकरण कराया है। तात्पर्य यह कि प्रकृति छायावादी कविता की सहचरी रही है।

बाह्य-प्रकृति के अनेक रूप छायावाद में चित्रित हुए हैं, किन्तु पर्वतीय पर्यावरण तथा सागर, सरिता और निर्झर के दृश्य अपेक्षाकृत अधिक हैं। प्रसाद जी ने हिमालयी शिखरों को शोभानतन कहा है और उसके विभिन्न संदर्भों में अंकित किया है। पन्त स्वयंमेव ''पर्वत पुत्र'' हैं। उन्होंने ''हिमाद्री'', ''अल्मोड़े का पावस'', ''गिरि प्रान्तर'', ''पूर्वांचल के प्रति'' आदि कविताओं में पर्वतीय प्रकृति की बार-बार परिक्रमा की है। उनका जैसा सूक्ष्म और विशद प्रकृति-चित्रण समूची हिंदी कविता में अन्यत्र कहीं प्राप्त नहीं होता है। सागर, सरिता, निर्झर तथा जल-प्रवाह की ध्वन्यात्मक व्यंजना निराला जी की कविताओं में बहुत है। ''बादलराग'', 'अलि घिर आये घर पावस के', ''प्रभात के प्रति'', ''धारा'' आदि कविताएँ इस दृष्टि से महत्वपूर्ण हैं। ऋतु-सौंदर्य का प्रकृति चित्रण में विशेष महत्व है। इन कवियों ने पावस, शरद् और बसंत ऋतु के मनोमुग्धकारी चित्र प्रस्तुत किए हैं। कोमल कुसुमों की मधुर रात, चांदनी, वसंतरजनी आदि कविताएँ छायावाद की गौरव-प्रतीक हैं। प्रकृति के विभिन्न काल खंड, जैसे उषाकाल (सूर्योदय), सन्ध्या, चन्द्र ज्योत्स्नाशाली अर्द्ध-रात्रि आदि के प्रति इन कवियों ने गहरी आसक्ति प्रदर्शित की है। प्रसाद का गीत- ''बीती विभावरी, जागरी'' निराला की कविता- ''संध्या सुन्दरी'', पन्त की कविताएँ -''सन्ध्या के बाद'', ''एक तारा'' आदि चिर स्मरणीय रहेंगी। इन कवियों ने प्रकृति के छोटे से छोटे तत्वों पर दृष्टि डाली है, जैसे ओस-बिन्दु, विभिन्न पशु-पक्षी एवं वनस्पतियाँ। तात्पर्य यह है कि छायावादी कवियों ने प्रकृति को उसकी परिपूर्णता में ग्रहण किया है। उन्होंने सौन्दर्योपासक कलाकार रूप में प्रकृति की वन्दना की है। इन्हें यों तो प्रकृति के सभी रूप प्रिय हैं, किन्तु करूणा-कोमल अपेक्षाकृत अधिक रूचिकर लगे हैं। इन्होंने प्रकृति से समात्मभाव स्थापित किया है। इनके विषय-चयन का अपना मनोवैज्ञानिक आधार रहा है। प्रकृति को इन्होंने प्रेम, सौन्दर्य, रहस्य, आनंद, अध्यात्म एकान्तप्रियता और स्वच्छन्दता का हेतु माना है। पन्त जी ने तो इसे ''देवि, माँ, सहचरिप्राण'' अर्थात् अपना जीवन-सर्वस्व स्वीकार किया है। निष्कर्ष यह है कि यह 'प्रकृति' ही छायावादी काव्य-सौन्दर्य का मूलाधार है।

7.5.4 गीतात्मक मधुर वेदना

छायावादी कविता सही अर्थों में ''आन्तरिक स्पर्श से पुलकित भावों'' की कविता है। सृष्टि का चक्र जन्म-मरण, सुख-दुख, मिलन-विरह तथा अश्रु-हास की सीमाओं के बीच अपनी यात्रा तय करता है। कवि की पहचान उसका ''वियोगी होना'' और '' आह के गीत सृजन करना'' ही माना गया है। जीवन के इस पारस-सत्य को छूकर ही इन छायावादी कवियों की काव्य-साधना भी हृदय के अध्यात्म की गंभीर अनुभूति को प्रस्तुत करती रही। हृदय की अमर-अभिव्यक्ति करने वाले इन चारों महाकवियों में महादेवी वेदना के मधुर गीत गाने में सर्वाधिक सफल हुई और परिणामतः उन्हें ''आधुनिक युग की मीरा'' भी कहा गया। साधना का दिव्य-दीपक प्रज्ज्वलित करके सदैव-यात्रा में रहने वाली महादेवी- ''अचल-पथिक'' बन जाती हैं। सत्य के सहज ज्योतिर्मय स्वरूप का अस्तित्व वे सामंजस्य में देखती हैं तो कहती हैं- **''सेतु शूलों का बना बांधा विरह-वारीश का जल''** और ''विरह की घड़ियाँ'' भी जिस कवयित्री को **''मधुर मधु की यामिनी-सी''** प्रतीत होती हैं, सुख-दुःख का यह मेघ-द्युति खेल भी समझ जाती हैं। द्वैत, अद्वैत हो जाता है और वे जीवन के गहनतम प्रकाश को सृष्टि-समष्टि रूप में देखने लगती हैं-

> दमकी दिगंत के अधरों पर स्मित की रेखा-सी क्षितिज कोर
> आ गए एक क्षण में समीप आलोक तिमिर के दूर कोर,
> घुल गया अश्रु में अरुण हास हो गई हार में जय विलीन!

यही नहीं, **''आज वर दो मुक्ति आवे बंधनों की कामना ले''** कहने वाली महादेवी अडिग-योद्धा की तरह जीवन-संघर्ष करती रहना चाहती हैं। जीवन की इस अनोखी-कारा के कोहरे - भरे वातावरण में ही तो परमसत्य की चिदानन्द-ज्योति के दर्शन होते हैं और एक समय ऐसा भी आता है जब वे सभी विषमताओं से ऊपर उठकर उस परम-सत्य के दिव्य संदेश को जन-जन तक पहुँचा देती हैं-

विरह का युग आज दीखा, मिलनी के लघु पल-सरीखा,
दुःख-सुख में कौन तीखा, मैं न जानी औ' न सीखा।
मधुर मुझको हो गये सब मधुर प्रिय की भावना लें।

पन्त और प्रसाद के अंतर्लोक से भी अश्रु-तरल-वेदना का जो आर्द्रगान निःसृत होता है वह करुणा की साकार मूर्ति बनकर भावों को अभिव्यक्त कर देता है। ''प्रिय'' से उपेक्षित प्रसाद, प्रेम के अपेक्षित दान का अभाव महसूस करते हैं तो उनका कवि चातक ''धीरे से वह उठता पुकार, मुझको न मिला है कभी प्यार!'' का रुदन-गीत गाता है। आकाश का सूनापन उनके जीवन में उतर आता है तो कवि का गान फूट पड़ता है-

कब तक और अकेले? कह दो हे मेरे जीवन बोलो?
किसे सुनाऊँ कथा? कहो मत अपनी निधि न व्यर्थ खोलो

कवि-प्रसाद अपने अतीत के उन अश्रु-भरे दिनों का स्मरण कर गा उठते हैं-

वे कुछ दिन कितने सुन्दर थे!
जब सावन-घन सघन बरसते, इन आँखों की छाया भर थे।
वे कुछ दिन कितने सुन्दर थे!

सौन्दर्य-प्रेमी कवि पन्त सौन्दर्य की क्षण भंगुरता देखकर आकुल हो उठते हैं। भावों की अभिव्यक्ति की अपूर्णता, अभिलाषाओं की विफलता, सौन्दर्य की नश्वरता या प्रेयसी की निष्ठुरता आदि अनेक कारणों से वे वेदना और करूणा की राह से गुजरते हैं। विरह तुषार बनकर हृदय पर प्रहार करता है-

मेरा पावस ऋतु सा जीवन
मानस सा उमड़ा अपार मन;
गहरे, धुंधले धुले; सांवले
मेघों से मेरे भरे नयन!

जीवन के विषम ज्वालामय अभाव कवि को विवश और निराश भी करते हैं। उनका कवि दार्शनिक बनने लगता है और वे घावों को अनुभव के मधुर लेप से भरने का प्रयास करते हैं -

i) बिना दुख के सब सुख निस्सार
बिना आँसू के जीवन भार!

X X X

ii) आज का दुख, कल का आह्लाद
और कल का सुख आज विषाद!

''निराला'' तो नूतन गेय छन्दों के भी उद्‌भावक बन कर सामने आते हैं। संगीत का मार्दव उनके स्वर-सामंजस्य के साथ मिल-जुलकर कलात्मक-रूप ले लेता है-

i) प्रिय यामिनी जागी,
अलस पंकज-दृग अरुण मुख
तरुण अनुरागी!

ii) मेरे प्राणों में आओ!
शत-शत शिथिल भावनाओं के
डर के तार सजा जाओ!

अतः स्पष्ट है कि विरह की कसक और मिलन का संदेश लेकर जिन गीतों का जन्म हुआ है, वह अत्यंत ही मनोरम हैं। निश्चित ही छायावादी-कवि, गीतों के सृजन से आधुनिक साहित्य में भावानुभूति की गहराई और जीवन-दर्शन की ऊँचाई की अद्‌भुत मिसाल बन गए हैं।

7.5.5 नारी विषयक नव्य धारणा

छायावादी काव्य नारी के प्रति नवीन दृष्टि रखता है। नारी के प्रति इन कवियों में न भक्तिकालीन कवियों का तिरस्कार भाव है, और न रीतिकाव्य जैसा कामिक कौतुकी-कदाचार है। इन्होंने द्विवेदी-युगीन परहेजी संस्कार तथा प्रगतिवाद, प्रयोगवाद के यौनाकुल आवेशज्वार से ऊपर उठकर नारी को मानवीय सौन्दर्य की अधिष्ठात्री, मानवीय करुणा की विधात्री अर्थात् जीवन के समस्त शुभ संकेतों की निर्मात्री घोषित किया है। ''प्रसाद'' के मतानुसार तो नारी श्रद्धा का प्रतिरूप ही है-

नारी तुम केवल श्रद्धा हो, विश्वास रजत नग पग तल में।
पीयूष श्रोत सी बहा करो, जीवन के सुन्दर समतल में।

कवि ने नारी को दया, माया, ममता, मधुरिमा, अगाध विश्वास आदि शुभ एवं श्रेयस्कर भावों का प्रतीक घोषित किया है। छायावादी कवियों की दृष्टि में नारी विलास की सहचरी न होकर उच्चतम भूमियों तक ले चलने वाली शक्ति है। पुरुष क्रूरता को मनुष्यता के रूप में परिणतः करने का कार्य नारी शक्ति का ही है। वे कहते हैं

''शासन करोगी तुम मेरी क्रूरताओं पर, मानस की माधुरी से''।

निराला जी ने भी नारी के प्रति सदाशयता प्रदर्शित की है। वे महाशक्ति के उपासक रहे हैं उनके मतानुसार जैसे तुलसीदास को रत्नावली से प्रेरणा प्राप्त हुई, उसी प्रकार स्वयं उन्हें मनोहरा देवी से प्राप्त हुई। उन्होंने नारी को पारंपरिक तथा आधुनिक, इन दोनों रूपों में अंकित किया है। पन्त की नारी तो स्वप्नलोक की मानसी प्रतिमा है। वे उसके सौन्दर्य चितेरे हैं और आदर्श नारीत्व के पूजक भी। महादेवी जी स्वयं नारी जीवन की विरह वेदना, अर्थात् भारतीय नारी की समस्त मनोभूमि की चित्रकर्त्री रही हैं। उनके गद्य में तो नारी जीवन की कुछ प्रतिक्रियाएँ यत्र-तत्र प्रकट हो गयी हैं, किन्तु उनकी कविता में किसी प्रकार का मतवाद अर्थात् ''नारीवादी'' नहीं उभरा है। हाँ, कवयित्री की संवेदनाएँ अवश्य मुखर हुई हैं। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि हिंदी कविता की सुदीर्घ परम्परा में छायावादी काव्य ने प्रथम बार नारी के प्रति एक स्वस्थ एवं संयत दृष्टिकोण प्रकट किया है।

7.5.6 युगीन सत्य और यथार्थ-अभिव्यक्ति

छायावादी काव्य ने यथार्थ का वह अर्थ नहीं लिया, जिससे लघुत्वकामी दृष्टि अथवा ''अधः प्रेक्षण'' का मन्तव्य निकलता है। उनकी दृष्टि में यथार्थ एक व्यापक सत्य-तथ्य है। इन कवियों ने अपनी समकालीन सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक व्यवस्था को खुली दृष्टि से देखा था और भरसक समस्याओं का समाधान भी खोजा था। प्रसाद जी ने ''कामायनी'' में विगत तथा वर्तमान के साथ-साथ भावी युग जीवन को भी रूपायित करने की चेष्टा की है। निराला की कई कविताएँ, जैसे ''वह तोड़ती पत्थर'', ''भिक्षुक'', ''विधवा, छोड़ दो जीवन यों न मलो, दान'' आदि युगीन यथार्थ की उपज हैं। पन्त जी ने ''युगान्त'', ''युगवाणी'' और ''ग्राम्या'' में इस युग-यथार्थ को अभिव्यक्ति दी है। जब वे कहते हैं- ''यह तो मानव लोक नहीं रे, यह है नरक अपरिचित'' तो वहाँ युग का कटु यथार्थ बोल

उठता है। इन कवियों का यथार्थ किसी राजनीतिक मतवाद से ग्रस्त नहीं है। वह उनकी व्यापक लोक संवेदना से उत्पन्न है और इनके काव्य के जनाधार का प्रमाण है।

7.5.7 राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक चेतना

छायावाद राष्ट्रीयता का पोषक रहा है। नवजागरण की उस बेला में अपनी स्वाधीनता के लिए विदेशी शासकों के विरुद्ध सत्याग्रह-पूर्ण संघर्ष करती हुई भारतीय जनता को राष्ट्र के अतीत गौरव, अर्थात् उसकी सांस्कृतिक चेतना से अवगत कराना बहुत आवश्यक था। इसीलिए, प्रसाद जी ने अपने नाटकों में राष्ट्र का क्रमबद्ध इतिहास प्रस्तुत किया। उनकी काव्य कृतियों में बौद्ध करुणा से शैवागम तक की अनेक दार्शनिक विचारधाराओं का संदेश है। इसी प्रकार निराला जी में वेदान्त, योग, शाक्तमत, पन्त जी में मार्क्सवाद, अरविन्द दर्शन और गांधीवाद, महादेवी जी में बौद्ध करुणा तथा अद्वैत दर्शन की पर्याप्त अनुगूंज है। भारतीय अध्यात्म के अतिरिक्त इन कवियों ने सामाजिक संचेतना के श्रेष्ठ पक्षों की ओर संकेत किया है और इन सबसे राष्ट्रीय एकता को प्रश्रय दिया है। प्रसाद जी ने तो अपने एक गीत- ''हिमालय के आंगन में जिसे प्रथम किरणों का दे उपहार'' में ''भारत जय विजय करे'' और पन्त जी का प्रसिद्ध गीत- ''भारतमाता ग्रामवासिनी'' इन कवियों की राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना की दृष्टि से उल्लेखनीय है। प्रसाद जी ने तो विदेशी यात्री और शत्रु कन्या कार्नेलिया से भारत की वन्दना करायी है। उनका यह गीत राष्ट्रीय चेतना का अनन्य प्रमाण है- '' अरुण यह मधुमय देश हमारा''। इसी प्रकार इस प्रयाण गीत में भी राष्ट्रीयता का ओजस्वी-तेजस्वी स्वर मुखरित हुआ है-

''हिमाद्रि तुंग श्रृंग से, प्रबुद्ध शुद्ध भारती,
स्वयं प्रभा समुज्ज्वला, स्वतंत्रता पुकारती।
अमर्त्य वीर पुत्र हो, दृढ़ प्रतिज्ञ सोच लो,
प्रशस्त पुण्य पंथ है, बढ़े चलो, बढ़े चलो।''

तात्पर्य यह है कि राष्ट्रीय चेतना की दृष्टि से छायावाद सर्वाधिक सम्पन्न काव्य है।

बोध प्रश्न 2

टिप्पणी: i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।
ii) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:

i) जयशंकर प्रसाद को काव्य-साधना के उच्चतम शिखर पर ले जाने वाली कृति का नाम ..... है।

ii) छायावादी कवियों में जीवन की विषम-परिस्थितियों से सर्वाधिक संघर्ष करने वाले महाकवि काम नाम ..... है।

iii) गांधी, मार्क्स और अरविन्द से सर्वाधिक प्रभावित होने वाले प्रकृति-प्रेमी कवि . ..... हैं।

iv) महाकवि प्रसाद का जन्म सन् ..... में और निधन सन् ..... में हुआ था।

v) निराला की पाँच प्रसिद्ध काव्य कृतियाँ .... तथा ..... हैं।

2. लगभग पाँच-छह पंक्तियों में उत्तर दीजिए।

i) छायावादी काव्य में व्यक्ति-स्वातंत्र्य का क्या स्वरूप था?

.....

.....

.....

.....

ii) छायावादी कविता ने किन रूढ़ियों के बंधन काटकर मुक्ति की राह अपनाई?

.....

.....

.....

.....

iii) छायावादी कवियों की नारी-विषयक नव्य-धारणा क्या थी?

.....

.....

.....

.....

iv) छायावादी काव्य में राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक चेतना की अभिव्यक्ति का स्वरूप क्या है?

.....

.....

.....

.....

7.6 छायावाद का रचना-विधान

छायावाद ने शिल्प विधि में अपनी पृथक पहचान बनाई है। इन कवियों के काव्य सौष्ठव को समझने के लिए इनके बिम्ब-विधान अथवा कल्पना विधान को भली-भांति समझना होगा और उसी के साथ-साथ इनकी काव्य-भाषा तथा काव्य शिल्प को भी।

7.6.1 स्वच्छंद कल्पना का नवोन्मेष

छायावादी कविता का सर्वाधिक महत्वपूर्ण पक्ष है- अनुभूति और कल्पना का नवोन्मेष। प्रसाद जी का कल्पना-विधान तो बहुत ही विलक्षण है। कामायनी में श्रद्धा की मुख-छवि कवि को घटाटोप के बीच में खिले गुलाबी रंग के बिजली के फूल जैसी प्रतीत होती है। उस मुख पर थिरकती हुई स्मिति को कवि ने अनेक उत्प्रेक्षाओं द्वारा स्थापित किया है। प्रसाद जी की कल्पनाएँ बहुत सुदूरगामी हैं। प्रकृति के परिप्रेक्ष्य में उन्होंने बड़े विराट एवं सूक्ष्म बिम्ब प्रस्तुत किए हैं। कवि ने पृथ्वी को सिन्धु की सेज पर संकुचित बैठी हुई नवोढ़ा

वधू के रूप में जिस प्रकार चित्रित किया है, वह एक विदग्ध कल्पना है **''सिन्धु सेज पर धारा वधू अब, तनिक संकुचित बैठी सी''**। इसी प्रकार हिमालयी प्रकृति को श्वेत कमल कहना और उस पर प्रतिबिम्बित अरूणिमा को ''मधुमय पिंग पराग'' कहना विलक्षण उक्ति है। कल्पना और अनुभूति का ऐसा मणिकांचन संयोग दुष्कर है।

प्रसाद की काव्य कला बिंबविधायिनी कल्पना और रूपक रचना के सहारे बहुशः व्यक्त हुई है। ''बीती विभावरी जागरी'' शीर्षक गीत इसका विरल उदाहरण है। इन कल्पना चित्रों में बड़ी गूढ़ार्थ व्यंजना है। कवि ने अप्रस्तुतों का प्रयोग करके यत्र-तत्र बिंबमाला-सी उपस्थित कर दी है। बिंबधर्मिता उनकी काव्य कुशलता की सर्वोपरि सिद्धि है।

निराला जी की बिंबविधायिनी क्षमता उनकी कई कविताओं, जैसे- ''राम की शक्ति पूजा'', ''सरोज स्मृति'' और खंडकाव्य ''तुलसीदास'' में विशेषतः उद्‌भासित हुई है। उन्होंने दृश्य और ध्वनि बिंबों में विशेष प्रयोग किया है, जैसे-

> ''नत नयनों का आलोक उतर, कांपा अधरों पर थर थर थर!
> ज्यों मालकोश नव वीणा पर।''

निराला जी के बिंबों में व्यंजनातिशयता बहुत है। जनक-वाटिका में राम और सीता के मिलन पूर्व राम का यह चित्रण यहाँ रूपकातिशयोक्तिपूर्वक कितनी वचन-विदग्धता के साथ प्रस्तुत किया गया है-

> ''नयनों का नयनों से गोपन, प्रिय सम्भाषण!
> पलकों का नव पलकों पर प्रथमोत्थान पतन
> कांपते हुए किसलय, झरते पराग समुदय,
> गाते खग नव जीवन परिचय तरु मलय वलय।''

पन्त जी तो ''कोमल कल्पनाओं के राजकुमार'' कहे जाते रहे हैं। सुकुमार सौन्दर्य के सम्मूर्तन में उन्होंने अद्‌भुत क्षमता प्रदर्शित की है। गंगा की रूपहली रेतों और उस पर फैली चांदनी को देखकर कवि की कल्पना जागती है-

> ''सिकता की सस्मित सीपी पर, मोती सी ज्योत्सना रही विचर।''

वस्तुतः पन्त जी कल्पनाओं के बहुत धनी हैं।

काव्य बिंबों की सृष्टि में महादेवी जी भी बहुत प्रवीण हैं। एक उदाहरण दृष्टव्य है-

> ''अवनि अंबर की रूपहली सीप में, तरल मोती सा जलधि जब कांपता।''

इन कवियों के अधिकतर काव्यांश बिंब, कल्पना, गूढ़ार्थ व्यंजना, रूपक-रचना आदि गुणों से ओतप्रोत हैं। वस्तुतः काव्य कल्पना के नव-नवोन्मेष की दृष्टि से छायावादी काव्य अतुलनीय है।

7.6.2 काव्य-भाषा

छायावादी कवियों ने काव्य शिल्प को सर्वाधिक प्राथमिकता दी है। प्रसाद जी के अनुसार काव्य के सौन्दर्यबोध का मुख्य आधार है- शब्द विन्यास-कौशल। निराला ने भी काव्य के भावात्मक शब्दों को ध्वनि और शब्द व्यापार कहा है और पन्त ने शब्द चित्र, चित्रभाषा तथा भावावेश मयी भाषा पर बल दिया है। वस्तुतः इन कवियों को शब्द प्रिय रहे हैं। निराला जी तो घोषणा करते हैं कि ''एक-एक शब्द बंधा ध्वनिमय साकार''। महादेवी जी भी टकसाली और स्वच्छ भाषा के प्रयोग में बहुत सचेत रही हैं। तात्पर्य यह है कि छायावादी काव्य भाषा ललित-लवंगी कोमल-कांत-पदावली की भाषा है। उसमें असाधारण लक्ष्यार्थ, व्यंग्यार्थ, प्रतीकार्थ, अमूर्तन व्यापार और संप्रेक्षण की संवेदना है।

छायावादी काव्य भाषा प्रचलित अर्थों में बहुत भिन्न भी है। उसमें अर्थ की छायाएँ हैं, जिन्हें गद्यात्मकता के अभ्यस्त व्यक्ति कठिनाई से समझ पाते हैं। इन कवियों ने विशेषण-विपर्यय के सहारे ''मधुमय अभिशाप'', ''सुन्दर पाप'', ''घायल आँसू'', नीरव भाषा, मधु-व्यथा, निद्रित-स्वप्न आदि प्रयोग किए हैं। तात्पर्य यह है कि छायावादी भाषा अर्द्ध सचेत है और दूरगामी भी इनकी शब्दावली संस्कृत, बंगला और अंग्रेज़ी से काफी रूपांतरित है। नए शब्द इन कवियों ने गढ़े भी हैं जैसे-स्वप्नोत्पल, पांसुल, शब्दोच्छल, फेनिल, टलमल, बातुल आदि। पन्त जी ने तो स्वेच्छापूर्वक पवन, वायु, भोर आदि को स्त्रीलिंग रूप में प्रयुक्त किया है। इन कवियों के कुछ प्रयोग बड़े वैचित्र्यपूर्ण हैं, जैसे तरुवासिनी (कोयल), शैवालिनी (सरिता), धरारमण (बसंत), कुंज -बिहारी (भ्रमर), शशि हासिनी (चांदनी), जलवाह (बादल) गंधबह (वायु), मलयबालिका (वायु) आदि। कोमलता के उद्दश्य से इन्होंने देशज और तद्भव शब्दों के अनेक प्रयोग किए हैं, जैसे परस (स्पर्श), नखत (नक्षत्र), दिग (निकट), पांति (पंक्ति) आदि। निराला जी ने तो आंलचिक शब्दों के प्रयोग की अति कर दी है, जैसे नाधो, बद्धी, कौड़े, लेबारी, हरहा, लवनी, निवारी आदि। इन कवियों ने घरेलू बोलचाल की भाषा और मुहावरेदानी का परहेज किया है। फिर भी इनमें वैविध्य अपेक्षाकृत अधिक है। वाक्य रचना में इन्होंने संबोधनों और विस्मयादि बोधक शब्दों का अधिक प्रयोग किया है। इन्होंने मधु, लघु, स्वर्ण, सित, नील आदि शब्दों को तकियाकलाम की तरह प्रयुक्त किया है। तात्पर्य यह है कि छायावादी शब्द-जगत अतिशय व्यापक एवं विशद् है।

7.6.3 काव्य-शिल्प

छायावादी कवियों ने प्रायः पाँच प्रकार के काव्य रूपों का प्रयोग किया हैः (1) मुक्तक काव्य; (2) गीति काव्य; (3) प्रबन्ध काव्य; (4) लम्बी कविताएँ तथा (5) नाट्य काव्य। इनमें मुक्तक काव्य सर्वाधिक लोकप्रिय रहा है। छायावादी काव्य तो सहज भावोच्छवास है। गीति काव्य इसी का अनिवार्य अंग है। प्रबन्ध काव्यों के अंतर्गत केवल 'कामायनी', 'प्रेम पथिक''(प्रसाद), 'ग्रन्थि' 'लोकायतन', 'सत्यकाम' (पन्त) और 'तुलसीदास' (निराला) का नामोल्लेख किया जा सकता है। 'कामायनी' और 'तुलसीदास' उच्चस्तरीय महाकाव्य एवं खंडकाव्य हैं, भले ही प्रबन्ध पद्धति की शास्त्रीयता का पूर्ण निर्वाह इनमें न मिलता हो। इन काव्यों में ''यूटोपिया'' और ''फेन्टसी'' का मुक्त प्रयोग किया गया है। लम्बी कविताओं में ''प्रलय की छाया'', ''शेरसिंह का शस्त्र समर्पण'' ''सरोज स्मृति'', ''राम की शक्तिपूजा'', ''परिवर्तन'' आदि और गीतिकाव्य या काव्य-रूपकों में ''करुणालय'', ''पंचवटी प्रसंग'', शिल्पी'', ''सौवर्ण रजत शिखर'' (पन्त) आदि चिरस्मरणीय हैं। प्रसाद जी की कृति ''आंसू'' एक प्रकार का एकार्थक मुक्तक है और छायावाद के विशिष्ट प्रबन्ध विधान का प्रतीक काव्य है।

छायावादी काव्य की छन्द योजना वैविध्यमयी है। निराला जी ने प्रथम बार मुक्त छन्द का आविष्कार करके कविता को तुकबंदी से मुक्त किया था। इन कवियों ने प्रायः सभी प्रकार के प्रयोग किए हैं, जिसमें अंग्रेज़ी के सानेट, फारसी के बहर, गज़ल, संस्कृत के वार्णिक और मात्रिक छंद उल्लेखनीय हैं। इन्होंने लोकधुनों को अपने छंदों में बांधा है और अपने कुछ नये छंद निर्मित किए हैं। इनके छंदों में ध्वन्यात्मकता का निर्वाह हुआ है और ओज, प्रसाद, माधुर्य तथा प्रायः समस्त कृतियों अथवा शैलियों का प्रयोग भी।

तात्पर्य यह है कि इन कवियों का काव्य-शिल्प भावानुरूप कोमल, करुण और महाप्राणत्व से ओतप्रोत है। वस्तुतः छायावादी काव्य शिल्प-संरचना की दृष्टि से अत्यन्त पुष्ट एवं प्रौढ़ है।

बोध प्रश्न-3

1. निम्नलिखित प्रश्नों के सामने कुछ विकल्प दिए गए हैं, सही विकल्प पर सही (✓)का निशान लगाइए।

   i) छायावाद का प्रवर्त्तक कवि कौन है? (सुमित्रानन्दन पन्त, मुकुटधर पाण्डेय, जयशंकर प्रसाद)

   ii) ''तुलसीदास'' खंडकाव्य किसने लिखा है? (महादेवी वर्मा, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, जयशंकर प्रसाद)

   iii) छायावाद की सर्वश्रेष्ठ कृति कौन-सी है? (कामायनी, तुलसीदास, दीप शिखा)

   iv) छायावाद के चार प्रमुख कवियों में गीतों की मधुर वेदना का सर्वाधिक मर्मस्पर्शी वर्णन किस काव्य में है (प्रसाद, पन्त, महादेवी वर्मा, निराला)

   v) ''कोमल कल्पनाओं का राजकुमार'' छायावाद के किस कवि को कहा जाता है? (पन्त, प्रसाद, महादेवी, निराला)

2. नीचे कुछ प्रश्न दिए जा रहे हैं, इनमें कुछ सही (✓) हैं तथा कुछ गलत (×) आपको इन्हें उपयुक्त चिन्ह से चिन्हित करना है

   i) 'राम की शक्ति पूजा'' और ''सरोज-स्मृति'' महादेवी वर्मा की अन्यतम कृतियाँ हैं। ( )

   ii) ''प्रेम-पथिक'' और ''आंसू'' के रचनाकार प्रकृति- प्रेमी पन्त हैं ( )

   iii) सन् 1920 में ''शारदा'' नामक पत्रिका में ''हिंदी कविता में छायावाद'' नामक लेखमाला माखनलाल चतुर्वेदी ने प्रारम्भ की थी। ( )

   iv) प्रसाद का जन्म वाराणसी के प्रतिष्ठित परिवार में सन् 1889 ई. में हुआ था ( )

   v) विद्रोही कवि निराला का स्वर्गवास अक्तूबर, 1961 में हुआ था। ( )

3. छायावादी काव्य की भाषा एवं शिल्प पर आठ-दस पंक्तियाँ लिखिए।

   .....

   .....

   .....

   .....

7.7 छायावाद का महत्वः शक्ति और सीमाएँ

छायावाद का महत्व दो दृष्टियों से स्वीकार्य है। एक तो काव्योत्कर्ष या काव्य के विधायक उपादानों के कारण और दूसरे स्वतंत्र जीवन दर्शन के कारण। जो विद्वान छायावादी कवियों के विचार दर्शन से सहमत नहीं है, वे भी इन कवियों के कवित्व से अभिभूत रहे हैं। प्रसाद तो आधुनिक कविता के सुमेरू माने ही गये हैं, निराला को काव्य की प्राणवत्ता और पन्त को काव्य भाषा की स्निगधता के कारण बराबर याद किया जायेगा। एक प्रसंग में अज्ञेय जी ने बड़ी सटीक बात कही है- ''प्रसाद पढ़ाये जाने योग्य हैं, निराला पढ़े जाने योग्य हैं और पन्त जी से काव्य भाषा सीखने योग्य हैं। ''महादेवी को भी विशिष्ट काव्य संवेदना, बिंब विधायनी क्षमता और एक टकसाली भाषा- अभिव्यंजना के कारण व्यापक

समर्थन मिला है। तात्पर्य यह है कि इनके कवित्व पक्ष की सर्वत्र सराहना होती रही है और होती रहेगी। इनके विचार दर्शन के प्रति अवश्य अलग-अलग युगों में असहमति व्यक्त होती रही है। प्रगतिवादी आंदोलन में छायावादी कवियों की ''यूटोपिया'' को ''पलायनवाद'' का नाम दिया गया। सपाट बयानी के उस युग में इनकी छायांकन शैली को ''धूमायित'' कहकर अस्वीकारा गया; किन्तु एक स्तर पर पहुँचकर चाहे-अनचाहे उसको समर्थन भी देना पड़ा। ''दिनकर'' ने चक्रवात की भूमिका में छायावादी शिल्प-संरचना पर बड़े तीखे प्रहार किये थे। पर उर्वशी तक आते-आते वे स्वयं छायावादी रुचि से प्रेरित और प्रभावित हो गये। उनकी ''उर्वशी'' छायावृत्ति की पुष्टि करती हुई कहती है-

''स्पष्ट शब्द मत चुनो,
चुनो उनको जो धुधियाले हैं।
ये धुंधले ही शब्द
ऋचाओं में प्रवेश पाने पर
एक साथ जोड़ते
अनिश्चय को निश्चय आशय से।
संध्या कुंज गोधूलि चाँदनी
यदि ये नहीं रहे तो
दिन की खुली धूप में कब तक
जीवन चल सकता है?

नई कविता में अज्ञेय, गिरिजाकुमार माथुर और शमशेर तक इस ''एब्सट्रेक्ट'' बिंब-विधान से अरसे तक प्रभावित रहे हैं। अंतर केवल इतना है कि उसे शमशेर छायावाद न कहकर व्यर्थताबोध मानते हैं, अज्ञेय अस्तित्ववाद कहते हैं और गिरिजाकुमार माथुर के लिए रूमानियत का प्रयोग किया जाता है। यह उल्लेखनीय है कि रूमानियत अर्थात् स्वच्छंदतावाद अस्तित्वाद और ''एब्सट्रैक्ट' अर्थात् भावात्मक बिंबवाद छायावाद के ही घटक हैं। इसलिए प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नई कविता और ''अकविता'' तक के आंदोलन में छायावादी भावभूमि प्रत्यक्ष परोक्ष रूप से सक्रिय दिखाई देती है। यही इसके महत्व का प्रमाण है।

7.7.1 ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य

छायावाद का ऐतिहासिक महत्व अपनी समकालीन पृष्ठभूमि के परिप्रेक्ष्य में स्थापित किया जा सकता है। ज्ञातव्य है कि यह ब्रिटिश पराधीनता के युग का काव्य था जिसमें एक ओर अंग्रेज़ों का दमनचक्र था और दूसरी ओर आधुनिकताबोध। इसने औद्योगीकरण से प्रेरित जन-जागरण का पक्ष लिया और सत्ता का पूर्ण निषेध किया। संपूर्ण आधुनिक युग में हुकूमत को बर्खास्त करने वाला एकमात्र काव्य है- ''छायावाद''। इसमें किसी भी सत्ताधारी के पक्ष में कहीं एक पंक्ति तक नहीं मिलेगी। इन कवियों ने उनका नाम तक नहीं लिया। विरोध करते हुए भी नहीं लिया है; क्योंकि विरोध करते हुए भी व्यक्ति को महत्व मिलता है। इन्होंने अंग्रेज़ों द्वारा आनीत भौतिक व्यवस्था अर्थात् यांत्रिक आविष्कारों और वैज्ञानिक उपकरणों तक को अस्वीकार कर दिया। उनकी प्रतिस्पर्धा में इन्होंने अपना अलग मनोराज्य स्थापित किया है। यथार्थ से उठकर प्रत्येक युग द्रष्टा साहित्यकार किसी न किसी कल्पना लोक की सृष्टि करता है। तुलसी ने रामराज्य की कल्पना की थी। प्रेमचन्द ने मरते हुए होरी को एक सपना दिखाया था। प्रसाद ने कैलाशधाम या आनन्द लोक बनाया। निराला ने जगह-जगह फैंटसी का प्रयोग किया। पन्त ने लोकायतन् बनाया। इनमें प्रसाद का मनोलोक सर्वाधिक सुविचारित है। उनका यूटोपिया ''चित्राधार'' में संकलित ''प्रेमराज्य'' से आरंभ होता है। फिर वे ''प्रेम पथिक'' में एक ''आनन्द नगर'' की कल्पना करते हैं। ''कामना'' में वे विवेक राज्य स्थापित करते हैं और ''कामायनी'' में उसे ''आनन्द लोक'' का नाम देते हैं। प्रेम, विवेक और आनंद का यह त्रिकोण श्रद्धा, इड़ा और मनु का कथालोक है। इसे पलायन मात्र मान लेना हमारी जल्दबाजी होगी। छायावादी

कवियों ने पहली बार मानवीय जागरण का मधुर स्वप्न देखा था। रूमानियत के सहारे जीवन की त्रासदी को झेल लेने का संदेश दिया था। इन्होंने पूंजीवादी व्यवस्था द्वारा विकसित भौतिक सभ्यता का निषेध करते हुए प्रान्तीय जीवन अर्थात् नैसर्गिक आश्रम व्यवस्था की कामना की थी। बुद्धि के अतिरेक से बचते हुए मानवीय संवेदन को सुरक्षित रखने और समाज को अति-यांत्रिकता प्रेरित विमानवीकरण से बचाए रखने की साहित्यिक चेष्टा आधुनिक युग में पहली और अंतिम बार छायावाद में दिखाई देती है। हिंदी के साहित्यिक भूगोल में मात्र छायावादी कविता सर्ववाद या विश्व-बोध की ओर उन्मुख होती दिखी है। व्यक्तिवादी होकर भी इन कवियों ने समष्टि चेतना को वरण किया है। उन्होंने देश काल का अतिक्रमण करके विश्व मानव के विश्व बंधुत्व को स्वर दिया है। यह सार्वभौम भाव वैभव छायावाद के विराट फलक का प्रमाण है। इतना बड़ा रचना-संसार और किसी के आगे नहीं रहा। प्रगतिवाद के समक्ष केवल सर्वहारा वर्ग का संसार था। प्रयोगवाद अधिकांशतः यूरोपीय, अमेरिकी चमत्कार से कायल रहा। फिर नई कविता का विश्व दर्शन अब अवश्य ही सबसे अधिक विस्तृत है। किन्तु इस अंतर्राष्ट्रीय दिशा बोध का प्रथम श्रेय छायावाद को ही देना होगा। अस्तु, छायावाद का ऐतिहासिक महत्व स्वयं में निर्विवाद ही है।

7.7.2 प्रासंगिकता

छायावाद के संपूर्ण प्रदेश को यद्यपि प्रासंगिकता के ही निष्कर्ष पर नहीं परखा जा सकता। इसलिए, कि जो काव्य सर्वकालिक-चेतना को वाणी देता है, वह युग-युगीन सत्य को वहन करता है, न केवल वह संदर्भ सापेक्ष ही होता है। इसलिए छायावाद के विचार क्रम में प्रासंगिक शब्द छोटा पड़ जाता है। प्रासंगिकता की अवधि प्रायः दस-बीस वर्षों की होती है, जबकि शाश्वत तत्व चिरस्थाई होता है। छायावादी-कवियों ने मनुष्य की जिस रागभावना को या जिस सौन्दर्य-संचेतना को प्रश्रय दिया है, वह प्रासंगिक न होकर स्थायी मान मूल्य है। उन्होंने मनुष्य को अपना प्रतिपाद्य बनाया है। पौराणिकता का निषेध करते हुए मानवीय शक्ति की यह सही पहचान है जिसमें न पाश्विक वृत्तियों की पुष्टि है और न अतिमानवता की कल्पना। वह छायावाद का वर्ण्य विषय है। परवर्ती काव्यांदोलनों में मनुष्य निरन्तर अपनी ही नजरों में गिरता गया है- सर्वहारा होकर अथवा मात्र शिश्नोदर स्वार्थों से घिरकर। यथार्थ के नाम पर एक अतिरंजित नरक, जो परवर्ती काव्य में चित्रित किया गया है, वह समकालीन आदर्शों से कहीं ज्यादा घातक है। छायावादी कविता ने जीवन के उदात्तीकरण का संदेश दिया है। श्रद्धा से कहा था-

''पशु से यदि हम कुछ ऊंचे हैं
तो भव जल निधि के बनें सेतु।''

प्रसाद ने उज्ज्वल नव मानवता का सपना देखा था। काड़बेल के अनुसार यथार्थ की अपेक्षा संभावनामूलक संभ्रम अधिक उपयोगी होता है। वस्तुतः भावी मानवता का उपचार इस छायावादी दर्शन में सन्निहित है। कामायनी ने प्रथम बार विचार किया कि जीवन का लक्ष्य क्या है? दुःख का हेतु क्या है? और यह भी कि भौतिक बुद्धि द्वारा क्या मानव कल्याण में सक्षम है? अथवा वही वर्तमान विश्व विभीषिका का प्रस्थान बिन्दु है। इनका निर्णय एक-आध शताब्दी में नहीं, काल के युग युगीन प्रवाह में होगा। इसलिए यह मात्र प्रासंगिकता का प्रश्न नहीं है। यह मानव अस्तित्व के गत- आगत और अनागत का प्रश्न है। यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि छायावादी कवि अपने-अपने क्षेत्र में विदग्ध विचारक रहे हैं। वेदांत, शैवागम, बौद्धमत, मार्क्स, गांधी और अरविन्द तक को आत्मसात करके समकालीन दर्शन के सहारे उन्होंने एक जीवन दर्शन को रेखांकित किया था, जो इस भौतिकवादी युग में अभी अव्यावहारिक लगता है, लेकिन अतिभौतिकता से त्रस्त मानव मन की मुक्ति का द्वार अंततः वही सिद्ध होगा। यही छायावाद की युग-युगीन उपादेयता है।

7.8 सारांश

इस पूरे विवेचन के बाद यह तो स्पष्ट हो जाता है कि छायावादी काव्यान्दोलन हिंदी की एक विशिष्ट देन है। अन्य भारतीय भाषाओं के तत्कालीन साहित्य में भी इसी प्रकार की अन्तर्वस्तु एवं शिल्प से मिलते-जुलते कई प्रयोग देखे जा सकते हैं किन्तु केवल हिंदी में ही इनका विकास पूरे स्वतंत्र रूप से हो सका है। आधुनिक हिंदी साहित्य के इतिहास में तो एकमात्र यही काव्यांदोलन ऐसा है जिसे कविता का मौलिक आंदोलन भी कहा जा सकता है। भारतेन्दु युगीन और द्विवेदी युगीन नवजागरण ही नहीं, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद और नयी कविता से मिलते-जुलते प्रयोग भी देश-विदेश की कई भाषाओं में भिन्न-भिन्न नामों से चलते रहे हैं, जिनमें प्रचलन का श्रेय भी बाह्य तत्वों को ही अधिक है। केवल छायावाद ही एक ऐसा विशिष्ट तथा मौलिक अभियान है जो भारतीय संस्कृति के औपनिष्दक तत्वों को नव्यतम आधुनिक धरातल पर जागृत करने का सफल प्रयास करता है।

नामकरण, प्रवर्त्तन तथा युग-विभाजन जैसे विवादास्पद प्रश्नों को लेकर भी यह निर्विवादतः सिद्ध है कि सन् 1915 ई. में सन् 1940 तक पूरी तरह व्याप्त रहने वाले इस काव्यान्दोलन तथा प्रवृत्ति के प्रसाद, निराला, पन्त और महादेवी जैसे प्रतिनिधि कवि अपनी विशिष्ट पहचान रखते हैं। इन कवियों के अतिरिक्त कुछ गौण या उत्तर छायावादी कवियों की भूमिका भी इसके उत्कर्ष में महत्वपूर्ण रही है। स्वच्छंदतावाद, वेदनावाद, नियतिवाद, प्रगतिवाद तथा कहीं-कहीं पलायनवाद जैसी प्रवृत्तियों का अंतर्भाव भी इसमें है किन्तु ये छायावाद से पूर्णतः पृथक हैं, उसकी पर्याय नहीं। यह काव्य ध्वनि तथा वक्रोक्ति वाद से प्रभावित भारतीय सौन्दर्य बोध की छायांकन-कला है जो मूलतः एक रूपवादी अवधारणा रहीं है और धीरे-धीरे यहीं एक विचारधारा के रूप में स्थापित हो गई है। इसे ही छायावादी कवियों ने कायावृत्ति अर्थात् मनोवृत्ति विशेष के रूप में व्याख्यायित किया है।

वस्तु वैविध्य से समृद्ध इस छायावादी काव्य में प्रकृति-प्रेम, राष्ट्रीय-सांस्कृतिक चेतना, नारी के प्रति नव्यतम दृष्टिकोण, रूढ़ियों के प्रति मुक्ति का प्रयास, युगीन-सत्य और यथार्थ की सार्थक अभिव्यक्ति, व्यक्तिगत स्वातंत्र्य का स्वर तथा गीतात्मक मधुर वेदना- विशेषतः परिलक्षित होते हैं। काव्य भाषा के नये संविधान और कल्पना के नवोन्मेष के उपकरणों से समृद्ध अन्यतम रचना-विधान वाले इस प्रासंगिक काव्यान्दोलन का ऐतिहासिक महत्व सदैव स्मरणीय रहेगा।

7.9 शब्दावली

रचनाधर्मिता का वैशिष्ट्य : कृति-सृजन का विशिष्ट धर्म।

इतिवृत्तात्मकता : वर्णन और विवरण प्रधान

पलायनोन्मुखी : जीवन से भागने या जीवन-संघर्ष से मुँह चुराने की ओर।

अतिबौद्धिकता : बुद्धि का आधिक्य जहाँ कमी बनने लगे।

विभीषिकाएँ : भयावह या डरावने संदर्भ।

सौन्दर्योपासक : सौन्दर्य की उपासना करने वाले।

क्षणभंगुरता : क्षण भर में नष्ट होने या मिट जाने वाला।

प्रगतिवाद तथा प्रयोगवाद : आधुनिक कविता के वे आन्दोलन जो छायावाद के बाद क्रमशः जाने जाते हैं।

बिंबविधायनी कल्पना: ऐसी कल्पना जिसमें बिम्बों को उकेरा गया हो या जिसमें बिम्बों के माध्यम से मंतव्य को रूपायित किया गया हो।

कोमलकांत पदावली: भाषिक योजना जिसमें मधुर, सरस तथा कोमलतम भाव देने वाले शब्दों का प्रयोग किया गया हो, यथा- मृदु, मंद-मंद, मंथर-मंथर, लघु- लोल लहर आदि।

वाच्यार्थ: जहाँ वाचन से सीधा-सीधा अर्थ ग्रहण किया जाता हो।

लक्षक या अन्योक्ति परक: जो अर्थ वाच्यार्थ से अलग लक्षणा शब्द शक्ति द्वारा लक्षित हो या अन्य उक्ति से स्पष्ट हो।

7.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

हिंदी साहित्य : बीसवीं शताब्दी : आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी

छायावाद युग : शंभुनाथ सिंह; सरस्वती मंदिर; वाराणसी; 1962 ई.

छायावाद के गौरव चिह्न : प्रो. क्षेम

छायावाद : डॉ. नामवर सिंह; राजकमल प्रकाशन; दिल्ली

छायावाद के आधार स्तम्भ : गंगाप्रसाद पाण्डेय

छायावादी कवियों का सौन्दर्य विधान : डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित

छायावाद : राजेश्वरदयाल सक्सेना

छायावादी काव्य : डॉ. कृष्ण चन्द्र वर्मा; मध्यप्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, म.प्र.

नवजागरण और छायावाद : महेन्द्र नाथ राम; राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली

7.11 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1. i) अनुपम भाव-भंगिमा तथा विषय एवं शिल्प का पूर्ववर्ती काव्य से पार्थक्य ही छायावादी काव्य की अलग पहचान बनाता है।

   ii) चिरन्तन मानवीय मूल्य, भाषागत बारीक- व्यंजनाएँ तथा तराशे गए शब्दों में अर्थ की नई संभावनाएँ पैदा करने का उद्देश्य छायावाद ने चुना था।

   iii) क्योंकि छायावादी कविता में अधिकाशंतः बाह्य अर्थ से भिन्न एक भीतरी सूक्ष्म, अर्थ-छवि की छाया प्रतीत हो रही थी और इसी के आधार पर इसे ''छायावाद'' कहा गया।

   iv) छायावाद के लिए ''मिस्टिसिज़्म'' या रहस्यवाद, फैंसटमैटा तथा रामैण्टिसिज्म या स्वच्छन्दतावाद जैसे शब्द भी प्रयुक्त किए गए।

   v) छायावादी ''बृहच्चतुष्ट्य'' के चार प्रमुख कवि थे जयशंकर प्रसाद, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, सुमित्रानन्दन पन्त तथा महादेवी वर्मा।

2. i) ✓

   ii) ✓

   iv) x

   iv) ✓

   v) ✓

3. i) सन् 1857 की क्रान्ति का स्वर आधुनिक युग के प्रथम चरण में मुखर हुआ। भारतीय संस्कृति की खतरे में पड़ी अस्मिता की रक्षा के लिए राष्ट्रीय नेता, लेखक, कवि और जन-जन में जागृति की लहर दौड़ने लगी। अंग्रेज़ों के दमनचक्र और शोषण ने भारतीयों की क्रांति में घी डालने का काम किया। युवा-पीढ़ी ने राष्ट्रीय सांस्कृतिक जागरण का बीड़ा उठाया और स्वर्णिम अतीत के प्रति आस्था जगाने का कार्य किया छायावादी काव्य ने। आतंक और गुलामी से मुक्त करने की स्वतंत्र-भावना और स्वर्णिम भविष्य की मंगलाशा जगाने के प्रयास उस युग में सक्रियता से चल रहे थे। वही कार्य छायावादी काव्य ने भी किया।

   ii) छायावादी काव्य अपने आप में अत्यंत विस्तृत प्रसार तथा गहन अर्थ छायाएँ लिए हैं इसमें प्रेम, सौन्दर्य, वेदना, प्रकृति- चित्रण, अवसाद तथा भावोद्रेक भी है तो दर्शन, रहस्य, करुणा और शिल्प का नव्यतम रूप भी। प्रसाद, निराला, पन्त और महादेवी जैसे महाकवि यहाँ हैं तो जनार्दन झा ''द्विज'', मुकुटधर पाण्डेय, हरिकृष्ण प्रेमी, दिनकर, इलाचन्द जोशी, जानकीवल्लभ शास्त्री जैसे कई गौण कवि भी। आलोचकों ने इसे ''छायावाद'' के अतिरिक्त भी कई नामों और वादों से जोड़ा। अन्योक्तिपरक अर्थ को प्रश्रय देने वाले इस काव्य को व्यक्ति-स्वातंत्र्य का काव्य भी कहा गया तो सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक चेतना का नवोन्मेष भी कहा गया।

4. i) सन् 1915 में

   ii) सन् 1920, श्री मुकुटधर पाण्डेय, शारदा

   iii) जयशंकर प्रसाद, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, सुमित्रानन्दन पन्त और महादेवी वर्मा

   iv) मोहनलाल महतो, जनार्दन झा ''द्विज'', आरसी प्रसाद सिंह, मुकुटधर पाण्डेय, हरिकृष्ण प्रेमी, माखनलाल चतुर्वेदी, रामधारी सिंह दिनकर तथा हरिवंशराय बच्चन आदि।

बोध प्रश्न 2

1. i) कामायनी

   ii) सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला

   iii) सुमित्रानन्दन पन्त

   iv) सन् 1889 तथा सन् 1937 में

   v) परिमल, गीतिका, तुलसीदास, कुकुरमुत्ता तथा बेला आदि।

2. i) छायावादी काव्य की मूल-चेतना व्यक्ति-स्वातंत्र्य की ही है। प्रत्येक देशव्यापी की स्वतंत्रता, उसे आत्माभिव्यक्ति की आज़ादी तथा व्यक्तिगत स्वाधीनता की प्रतिष्ठा के अवसर उपलब्ध कराने का कार्य ही छायावाद ने किया। ''मैं शैली'' अपनाकर वे स्वयं को विश्व बोध में विलय कर देते हैं और ''अभी न होगा मेरा अन्त'' कहकर गुलामी के बंधन काटने तथा पूंजीवादी व्यवस्था को फटकारने तक का कार्य करते हैं। इनका ''आत्म'' मुखर हो जाता है और नव आशा तथा नव विश्वास के स्वप्न तैयार होने लगते हैं। इस प्रकार प्रसाद, निराला, पन्त तथा महादेवी चारों में ही बन्धन-मुक्ति का यह स्वरूप देखने को मिलता है।

ii) छायावादी कविता पुरातन-सामाजिक, रूढ़ियों और झूठी-नैतिक मान्यताओं के बंधनों को काट फेंकने का साहसपूर्ण कार्य करती है। विद्रोह की यह कविता नया राष्ट्रीय इतिहास लिखती है। अपना चिन्तन, अपनी प्रणाली लेकर नये-विषय, नयी भाषा तथा नये छंदों (मुक्त छंद) का प्रवर्तन करती छायावादी कविता ''तोड़ो-तोड़ो-तोड़ो कारा।'' का यह उद्घोष करती हुई जगत के जीर्ण पत्तों को झर जाने का निमंत्रण देती है। नवगति, नवताल तथा छंद नव के अभिलाषी ये कवि अंध प्रथाओं के, कौरी नैतिकता तथा सड़ी-गली रूढ़ियों के प्रति विद्रोह करते हैं। यह विद्रोह इसकी ऐतिहासिक पहचान बनता है।

iii) छायावादी कवियों की नारी विषयक धारणा भक्तिकालीन-तिरस्कार और रीतिकालीन भोग से पूर्णतः भिन्न तथा उदात्त थी। नारी को मानवीय सौन्दर्य की अधिष्ठात्री, मानवीय करूणा की देवी तथा जीवन के समस्त संकल्पों की निर्मात्री घोषित करने वाले छायावादी कवि नारी को केवल ''श्रद्धा'' मानते हैं। दया, ममता, मधुरिमा तथा अगाध विश्वास एवं शुभ-श्रेयस्कर भावों की प्रतीक है नारी! विलास और भोग से परे उच्चतम भूमि (आनन्द -शिखर) पर ले जाने वाली सहचरी है नारी। छायावादी काव्य में नारी के प्रति पूर्णतः स्वस्थ एवं संयत दृष्टिकोण प्रकट किया गया।

iv) छायावादी काव्य में राष्ट्रीय-जागृति का मुखर गान प्रस्तुत करते हुए अतीत के गौरव और संस्कृति के महत्व को स्थापित करने का सफल प्रयास हुआ है। ''हिमाद्री तुंग श्रृंग से प्रबुद्ध शुद्ध भारती'' जैसे गान नवजागरण पैदा करते हैं तो दार्शनिक विचारधाराओं का संगम, बौद्ध करूणा और अद्वैत दर्शन राष्ट्र की अमूल्य धरोहर से अवगत कराता है। ''भारत जय विजय करे'' तथा ''भारतमाता ग्रामवासिनी'' और ''अरूण यह मधुमय दश हमारा'' जैसे गीत राष्ट्रीय जागृति के मंत्र को जन-जन में फूंकने का कार्य करते हैं। संस्कृति के प्रति श्रद्धा-समर्पण और उसकी रक्षा के लिए उत्साह का संचार-इस कविता की प्रमुख पहचान है।

बोध प्रश्न 3

1. i) जयशंकर प्रसाद

ii) सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला

iii) कामायनी

iv) महादेवी वर्मा

v) सुमित्रानन्दन पन्त

2. i) x

ii) x

iii) x

iv) ✓

v) ✓

3. छायावादी कवियों ने भाषा में शब्द-विन्यास-कौशल को सौन्दर्यबोध का मुख्य आधार मानते हुए चित्रभाषा या भावावेशमायी भाषा पर विशेष बल दिया। ललित तथा कोमल कांत पदावली की भाषा, जिसमें असाधारण लक्ष्यार्थ, व्यंग्यार्थ, प्रतीकार्थ और अमूर्तन व्यापार पर बल हो, इनकी प्रिय भाषा रही। विभिन्न अर्थछायाओं से सम्पन्न भाषा में ''घायल आँसू'' ''मधुर-व्यथा'' तथा ''मधुमय- अभिशाप'' जैसे प्रयोग इसके प्रमाण हैं। बंगला, संस्कृत, अंग्रेज़ी तथा अन्य देशी शब्द इसमें हैं तो फेनिल, टलमल, स्वप्नोत्पल जैसे नए गढ़े गए शब्द भी। देशज तथा तद्भव शब्द भी इसमें हैं तो आंचलिक और बोलचाल की भाषा के शब्द भी। शिल्प की दृष्टि से ये मुक्तक काव्य, गीति काव्य, प्रबन्ध काव्य, लम्बी कविताएँ तथा नाट्य-काव्य आदि के सफलतम प्रयोग करते रहे। 'कामायनी' जैसा महाकाव्य इसी युग की देन है। ''तुलसीदास'' तथा महादेवी की गीति-योजना इसी युग की उच्चस्तरीय कृतियाँ हैं। इस युग में खंड काव्य, फैन्टेसी, गीति काव्य तथा रूपक आदि सभी कुछ एक साथ मिलता है। मुक्त छंद की खोज छायावाद की अन्यतम देन है। लोक धुनें भी इनके गीतों में आई तो गज़ल के स्वर भी समाहित हुए। ओज, प्रसार और माधुर्य युक्त शैलियों की विविधता भी इसमें है। अतः भाषा एवं शिल्प की दृष्टि से छायावादी-काव्य अत्यन्त प्रौढ़ एवं समृद्ध है।

इकाई 8 जयशंकर प्रसाद और उनकी कविता

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 जयशंकर प्रसादः जीवन और व्यक्तित्व

8.3 युग परिवेश

8.4 रचनाएँ और रचना संसार

8.5 प्रसाद काव्यः प्रमुख स्वर

8.5.1 इतिहास एवं संस्कृति

8.5.2 राष्ट्रीय चेतना और मानवीयता

8.5.3 प्रेम-व्यंजना

8.5.4 सौन्दर्य चेतना

- प्रकृति सौंदर्य
- नारी भावना का सौंदर्य
- गीति सौंदर्य

8.5.5 रहस्य एवं दर्शन

8.6 प्रसाद काव्यः शिल्प-विधान

8.6.1 भाषा-सौंदर्य

8.6.2 शैलीगत नवीनता

8.6.3 प्रतीक विधान

8.6.4 बिम्ब विधान

8.6.5 अलंकार तथा छंद

8.7 मूल्यांकन (प्रसाद का प्रदेय)

8.8 सारांश

8.9 शब्दावली

8.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

8.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

8.0 उद्देश्य

आधुनिक काल के हिंदी साहित्य को अपनी अनुपम, अलौकिक एवं जन्मजात प्रतिभा से सम्पन्न, समृद्ध तथा जीवंत बनाने वाले छायावाद के प्रवर्तक एवं सर्वोपरि स्थान के अधिकारी जयशंकर प्रसाद पर लिखी गई इस इकाई के अध्ययन से आपः

- प्रसाद जी के जीवन, व्यक्तित्व एवं उसके निर्माण में सक्रिय भूमिका निभाने वाले युग-परिवेश को समझ सकेंगे;

- महाकवि प्रसाद के काव्य-संसार से अलग उपन्यास, कहानी, नाटक, निबंध एवं समालोचना आदि साहित्य-क्षेत्रों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे;
- प्रसाद के काव्य में मिलने वाले ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, राष्ट्रीय-चेतना तथा मानवतावादी दृष्टिकोण को स्पष्ट करने वाली अलौकिक प्रतिभा से परिचित हो सकेंगे;
- कवि की प्रेम-व्यंजना तथा प्रकृति, नारी एवं गीति-सौन्दर्य का आस्वाद ग्रहण कर सकेंगे;
- भारतीय दर्शन, रहस्यवाद तथा मनोविज्ञान के समन्वय का निरूपण करने वाली कवि-मनीषा को जान सकेंगे;
- प्रसाद जी के शिल्प विधान की जानकारी प्राप्त करते हुए भाषा-सौन्दर्य, शैलीगत, अपूर्वता, सटीक प्रतीक-विधान तथा अलंकार एवं छंद आदि विधानों की महत्वपूर्ण भूमिका का अनुभव कर सकेंगे।

8.1 प्रस्तावना

हिंदी साहित्य में एक विद्रोह के रूप में उभर कर सम्मुख आने वाले युग को ''छायावाद'' की संज्ञा दी गई और छायावाद की इस अनुपम, अपूर्व एवं अद्‌भुत साहित्य धारा के प्रवर्तन का श्रेय मिला सरस्वती के विशिष्ट पुत्र महाकवि जयशंकर प्रसाद को। अतीत के झरोखों से वर्तमान की स्थितियों एवं समस्याओं को सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक डोर में पिरोकर स्वच्छ रूप से प्रतिष्ठित करने वाले प्रसाद निश्चित ही अलौकिक प्रतिभा के धनी व्यक्ति एवं साहित्यकार थे। काव्य, नाटक, उपन्यास, कहानी एवं निबन्ध आदि में एक साथ छायावाद की समस्त विभूति को स्वर देकर इस महाकवि ने साहित्याकाश में एक अन्यतम-ध्वज फहराया और इसी से कवि प्रसाद की साहित्य विद्या के हर क्षेत्र में एक विशिष्ट पहचान भी बनी। भारतीय परम्परा एवं संस्कृति-प्रेमी इस साहित्य सृष्टा ने परंपरा का अनुसरण न करते हुए भी उसमें अमूल्य योगदान दिया। उपनिषद्-दर्शन ने उन्हें प्रभावित किया तो भारत की प्रगतिशील सामाजिक परिस्थितियों ने भी उन्हें झकझोरा। राष्ट्रीय चेतना एवं मानवतावादी दृष्टि को प्रचार-प्रसार का दायित्व उन्होंने संभाला तो नारी के प्रति पूर्णतः नवीन एवं श्रद्धा-युक्त दृष्टि को भी जन्म दिया। सार्वभौमिक दृष्टिकोण के समर्थक इस प्रकृति-प्रेमी गीतकार के काव्य का भाव पक्ष जितना प्रबल है उतना ही शक्तिशाली उनका शिल्पविधान भी। प्राणवान-भाषा, शैली की नवीनता तथा प्रतीक, अलंकार एवं छंद आदि अन्य उपादानों के प्रयोग में दिखाई देने वाली कवि की कलात्मक-प्रतिभा इसी तथ्य का प्रमाण बनती है कि उनकी-सी क्षमता और शक्ति का कोई दूसरा कलाकार हिंदी-साहित्य के इस पूरे युग में नही दिखाई पड़ता। युग-कवि 'प्रसाद' छायावाद को नेतृत्व देकर सफलता के चरम-शिखर तक ले जाने वाले वे महान कलाकार हैं, जो साहित्य-आकाश में सदैव ध्रुव की तरह प्रकाशित होकर आलोक फैलाते रहेंगे। भारतेन्दु युग में जन्मी नवजागरण एवं राष्ट्रीय चेतना की जो लहर द्विवेदी युग तक आते-आते जोर पकड़ने लगी थी, प्रसाद-युग या छायावाद तक आकर वही पूर्णतः पल्लवित और पोषित हो चुकी थी। भारतीय जीवन की ऐसी ही अनेक दीर्घ परंपराओं का सफल निरूपण बहुमुखी प्रतिभा के इस धनी साहित्यकार प्रसाद के पद्य एवं गद्य साहित्य में सहज ही देखने को मिलता है। साहित्य के क्षेत्र में एक क्रांति की लहर और परिवर्तन की चेतना फैलाने वाले इस प्रवर्तक कलाकार के काव्य का विस्तृत अध्ययन हम इस इकाई में करने जा रहे हैं। इस इकाई के बाद हम छायावाद के अन्य तीनों कवियों निराला, पन्त एवं महादेवी के काव्य पर लिखी गई इकाइयों का अध्ययन करेंगे।

8.2 जयशंकर प्रसादः जीवन और व्यक्तित्व

महाकवि जयशंकर प्रसाद का जन्म काशी में माघ-शुक्ल दशमी, संवत 1846 अर्थात सन् 1889 ई. को हुआ था। इनके पूर्वज ''सुंघनी साहू'' के नाम से विख्यात शिव के अनन्य भक्त थे। शिवरत्न साहु उनके पितामह थे और वे अत्यंत दयालु तथा दानी व्यक्ति थे। तम्बाकू और सुरती के इस प्रख्यात व्यापारी-परिवार में अत्यंत व्यवहार कुशल तथा उदार हृदय व्यक्ति थे श्री देवी प्रसाद, ये ही प्रसाद जी के पिता थे। उनके घर में कवियों, गवैयों, पंडितों, वैद्यों, यांत्रिकों, भाट तथा बाजीगरों एवं ज्योतिषी तथा विद्वानों का आना-जाना लगा रहता था। इनकी माता का नाम श्रीमती मुन्नी देवी था और अपने भाई-बहनों में सबसे छोटे होने के कारण माता का इनके प्रति विशेष प्रेम था। प्रसाद जी के ज्येष्ठ भाई का नाम शुम्भुरत्न था। कट्टर शैवमतावलम्बी इस परिवार में प्रसाद जी से पहले उनके कई भाई-बहनों की मृत्यु हो चुकी थी। इसीलिए प्रसाद जी की दीर्घायु के लिए गोकर्णनाथ महादेव की मनौती मानी गई थी। यही कारण है कि इनका नाम भी भगवान शंकर के प्रसाद स्वरूप ''जय शंकर प्रसाद'' रखा गया।

प्रसाद जी की आरम्भिक शिक्षा घर पर ही शुरू हुई। इसके बाद वे स्थानीय क्वीन्स-कॉलेज में सातवें दर्जे तक पढ़े। कश्मीरी प्रत्यभिज्ञा-दर्शन की विचारधारा से समृद्ध इस परिवार के धार्मिक एवं दार्शनिक वातावरण का प्रभाव तो प्रसाद जी के चिन्तन पर पड़ा ही साथ ही सहृदयता, उदारता, धर्मनिष्ठता एवं साहित्य-सृजन-क्षमता के गुण भी उन्हें उत्तराधिकार में प्राप्त हुए। इसी परिवेश में विभिन्न प्रकार के व्यक्तियों से परिचय होने के फलस्वरूप ही उनके काव्य एवं अन्य साहित्य में विभिन्न मानव-स्वभावों का सफल एवं पूर्ण चित्रण भी मिलता है। सातवीं कक्षा में पढ़ते समय ही उनके पिता का स्वर्गवास हो गया। परिणामतः बारह वर्ष की अवस्था में ही स्कूल की शिक्षा से वंचित होना पड़ा। परिवार का सार भार अग्रज श्री शम्भुरत्न जी ने संभाला। प्रसाद जी की शिक्षा का प्रबन्ध घर पर ही किया गया और उन्होंने हिंदी, उर्दू, फारसी तथा संस्कृत का गहन अध्ययन किया। वेद और उपनिषद्‌ों का उन्हें विशिष्ट ज्ञान था। पन्द्रह वर्ष की अवस्था हुई तो माता का देहान्त हो गया। दुर्भाग्य ने यहीं साथ न छोड़ा। दो वर्ष बाद अग्रज भाई शम्भुरत्न जी का भी स्वर्गवास हो गया और घर का पूरा दारोमदार प्रसाद जी पर आन पड़ा। छिपकर तुकबन्दियाँ लिखने वाले प्रसाद का अल्हड़-कवि पन्द्रह वर्ष की अवस्था से ही दुकान पर बैठकर बही-खातों के रद्‌दी कागजों पर कविता की अराधना किया करता था। सन् 1908 तक प्रसाद के द्वारा ब्रजभाषा में रचित कविताएँ तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में छपने लगी।

प्रसाद जी ने 11 वर्ष की बाल्यावस्था में अपनी माता के साथ पुष्कर जी, ओंकारेश्वर, जयपुर, उज्जैन, ब्रज मण्डल तथा अयोध्या आदि स्थानों की यात्रा की थी। भारत के प्राकृतिक सौन्दर्य एवं सम्पदा के अद्‌भुत दृश्यों का आस्वाद भी उन्होंने लिया था। पर्वतों, झरनों, लहरों और कानन-कुसुमों की चाँदनी रातों में विहार भी किया था। जगन्नाथपुरी की यात्रा में सागर की विशालता गंभीरता तथा उत्ताल तरंगों की गर्जना सुनी थी तो माँ पृथ्वी के अंचल में विराजमान हिमगिरी के उत्तुंग शिखर का आनन्द भी लिया था। इन्हीं सब अद्‌भुत प्रकृति-शक्तियों ने कवि-हृदय को प्रेरणा प्रदान की।

पारिवारिक बाधाओं और विपदाओं से विचलित न होकर अडिग रहने वाले प्रसाद ने अपनी महाजीवट-शक्ति से जीवन की सभी विषम परिस्थितियों का सामना किया और सदैव आनन्द को जीवन का लक्ष्य माना। उन्होंने इसी दृष्टिकोण को स्वर देते हुए विश्व के महान महाकाव्य ''कामायनी'' में लिखा भी है-

जिसे तुम समझे हो अभिशाप, जगत की ज्वालाओं का मूल,
ईश का वह रहस्य वरदान, कभी मत इसको जाओ भूल।

संस्कृत और अंग्रेजी के नियमित अध्ययन से उन्हें वेद-उपनिषदों के साथ-साथ पुराण, महाभारत तथा अन्य ऐतिहासिक- सांस्कृतिक महाकाव्यों एवं ग्रन्थों के अध्ययन की प्रेरणा मिली। भारतीय संस्कृति के प्रति यहीं से श्रद्धा उत्पन्न हुई तो अतीत के प्रति रुचि भी जागृत हुई।

प्रसाद जी कसरत और व्यायाम में भी नियम से लीन रहते थे। कुश्ती और दंगल तथा गरिष्ठ खुराक उनके शौक थे। माता-पिता तथा ज्येष्ठ भाई के स्वर्ग-प्रस्थान के बाद भी इस संघर्षरत कवि को दुर्भाग्य से जूझते रहना पड़ा। विवाह स्वयं किया तो कुछ ही वर्ष बाद पत्नी चल बसीं। दूसरा विवाह सम्पन्न हुआ तो पुत्र-जन्म पर पत्नी और पुत्र दोनों परलोक सिधार गए। अब कवि-हृदय पूर्णतः टूट गया। गहरी चोट उनके हृदय पर लगी और वे पारिवारिक जीवन के प्रति निराश से हो गए। दर्शन का गाम्भीर्य उन्हें घेरता गया। किन्तु नियति का खेल निराला है भाभी और मित्रों के आग्रह पर तीसरा विवाह किया। इसी पत्नी से उन्हें ''रत्नशंकर'' नाम एकमात्र पुत्र की प्राप्ति हुई।

व्यक्ति की दृष्टि से उच्चकोटि के महापुरुषों में गिने जाने वाले महाकवि प्रसाद ने परिवार और व्यापार के कठिन उत्तरदायित्वों को संभालते हुए भी गहन अध्ययन एवं मनन के दृढ़ सम्बल तथा नैसर्गिक प्रतिभा के वरदान से जो कुछ भी भारतीय साहित्य को दिया, उस पर हम सभी को गर्व है। हमारा दुर्भाग्य ही है कि ''छोटे से जीवन की कैसे, बड़ी कथाएँ आज कहूँ'' कहने वाला बहुमुखी प्रतिभा से सम्पन्न वह महान कलाकार-व्यक्तित्व, अधिक दिनों तक हमारा मार्गदर्शन न कर सका। जनवरी सन् 1937 में प्रसाद जी बीमार पड़ गए और चिकित्सकों ने घोषित कर दिया कि उन्हें राज्यक्षमा हो गया। दिन-प्रतिदिन उनका स्वास्थ्य गिरता गया। डॉक्टरों ने उन्हें काशी छोड़कर पहाड़ों पर जाने की सलाह दी। किन्तु प्रसाद जी काशी नहीं छोड़ना चाहते थे। परिणामतः सन् 1937 में 48 वर्ष की अल्पायु में ही उन्होंने यह शरीर छोड़ दिया। ऐतिहासिक घटनाओं के भीतर प्रविष्ट होकर तत्व-चिन्तन से उनके मर्म का उद्घाटन करने वाली ज्ञान की असाधारण-प्रतिभा से संपूर्ण-भारतीय-साहित्य वंचित हो गया। अत्यंत सौम्य, शांत और गम्भीर व्यक्तित्व का सांसारिक संघर्ष समाप्त हो गया। विश्व साहित्य में अपनी विशिष्ट पहचान बनाने वाला वह आकर्षक, तथा प्रभावशील व्यक्तित्व जिसने ''कामायनी'' जैसा उत्कृष्ट महाकाव्य देकर सभी को हतप्रभ कर दिया, दुर्भाग्य से असामयिक-मृत्यु का शिकार हो गया। इस युगान्तकारी भव्य-व्यक्ति के व्यक्तित्व तथा उद्देश्य को समझने के लिए उन्हीं की ये पंक्तियाँ कितनी सटीक जान पड़ती हैं-

इस पथ का उद्देश्य नहीं है,
शान्त भवन में टिक रहना।
किन्तु पहुँचना उस सीमा तक
जिसके आगे राह नहीं

8.3 युग परिवेश

कवि अपने युग-परिवेश से प्रभावित ही नहीं होता, बल्कि अपनी युगांतकारी दृष्टि तथा कृतियों से उसे प्रभावित भी करता है। कभी वह अतीत की प्रेरणा से नवनिर्माण का संकल्प दोहराता है तो कभी नवनिर्माण से भविष्य के लिए एक अजर-अमर अतीत का सृजन करता है। समाज और राष्ट्र की स्थिति ही नहीं, साहित्य की परंपरा भी कवि और काव्य का निर्माण करती है। जयशंकर प्रसाद भी अगर अपने पूर्ववर्ती एवं युगीन परिवेश से प्रभावित होते हैं तो परवर्ती वातावरण को दिशा एवं दृष्टि देकर एक प्रबल वर्तमान का निर्माण भी करते हैं। प्रसाद, हिंदी सहित्य के काव्य इतिहास में जब प्रवेश करते हैं उस युग को द्विवेदी-युग के नाम से जाना जाता है। उस युग में सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से क्रांतिकारी परिवर्तन हो ही रहे थे, साहित्यिक दृष्टि

से भी एक बदलाव आ रहा था। गांधी, तिलक, राजा राम मोहन राय, सुभाष चन्द्र बोस एवं पटेल आदि अनेकों क्रांतिकारी नेता स्वतंत्रता के विद्रोही स्वर को बुलन्द कर रहे थे तो साहित्यिक दृष्टि से भी एक बदलाव आ रहा था। गांधी, तिलक, राजा राम मोहन राय, सुभाष चन्द्र बोस, एवं पटेल आदि अनेकों क्रांतिकारी नेता स्वतंत्रता के विद्रोही स्वर को बुलन्द कर रहे थे तो साहित्य के क्षेत्र में भी विषय एवं भाषा का विद्रोह मुखर हो रहा था। प्रसाद के सामने एक तरफ तो सामाजिक-अभाव, सांस्कृतिक-विघटन, नैतिक-मूल्यों का ह्रास तथा आर्थिक एवं राजनैतिक बदलाव चुनौती बना था तो दूसरी तरफ स्वर्णिम अतीत के प्रति हो रहा अन्याय, भारतीय काव्य एवं साहित्य परंपरा के बिखरते-छूटते मूल्यों की पीड़ा और सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय चेतना के दूर होते जाने का दर्द भी प्रश्न बना हुआ था। प्रसाद ने इन सभी समस्याओं से जूझने के लिए सृजनात्मक-स्वीकृति और कलात्मक-विद्रोह को चुना। पूर्व प्रचलित दीर्घ भारतीय काव्य परंपरा के मूल्यों को चिन्तनशील-अतीतपरक-दृष्टि से संजोया और युगीन विघटन एवं पतनकारी प्रवृत्तियों का स्वच्छन्दतावादी दृष्टि से विद्रोह किया। काव्य और दर्शन का अद्‌भुत समन्वय कर उन्होंने युग और देश की चेतना को काव्य के माध्यम से मुखर स्वर दिया।

प्रसाद का युग वास्तव में बीसवीं-शताब्दी-पूर्वार्द्ध का युग है। 18वीं शताब्दी का विद्रोह तो यहाँ आकर शांत हो चुका था। भारतीयों को समानता और धार्मिक स्वतंत्रता का आश्वासन भी मिलने लगा था। किन्तु पश्चिम की धारणाएँ एवं विचारधाराएँ धीरे-धीरे देश में प्रवेश पाने लगी थीं, रूसों और वॉल्टेयर के राजनीतिक विचार फैलने लगे थे। अंग्रेजी भाषा के माध्यम से अनेक विचारधाराएँ भारत में प्रविष्ट होने लगी थीं।

ऐसे में देश ब्रहम-समाज और आर्य-समाज जैसी कई समाज सुधारक संस्थाओं के नेतृत्व में सांस्कृतिक चेतना की नई दिशा खोजने लगा था। दक्षिण भारत में थियोसाफी का आविर्भाव, बनारस में एनीबैसेन्ट की कोशिश, बंगाल में स्वामी रामकृष्ण परमहंस के लोक-संग्रह एवं समाज-सुधार जैसे कई प्रयास नई जागृति एवं चेतना को प्रसारित कर रहे थे। इन सभी आंदोलनों के मूल में देश-प्रेम एवं देश-सेवा की भावना कार्यरत थी। तिलक अपने क्रांतिकारी पत्र ''केसरी'' से कर्म और स्वराज्य की प्रेरणा दे रहे थे। राष्ट्रीयता की इस प्रबल भावना ने सभी देशवासियों को अतीत से प्रेरित होकर एकजुट होने की चेतना प्रदान की।

साहित्य में भी इसी आन्दोलित एवं क्रांतिकारी परिवर्तन ने प्रवेश किया। परिणामतः भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के नेतृत्व में नवजागरण की नवीन परंपरा का आविर्भाव हुआ। समाज सुधार, रूढ़ियों से मुक्ति, कुरीतियों का विरोध तथा साहित्य की नई दिशा जैसे कार्यभार का दायित्व संभालते हुए भारतेन्दु युग में राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक चेतना, देश-प्रेम, समाज-सुधार तथा प्राचीन एवं नवीन का मिश्रण जैसे कई पक्ष उभरकर सामने आये। काव्य के भाव, भाषा, शैली एवं विचार सभी में क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ। नाटक, उपन्यास, कहानी, निबन्ध, कविता, पत्र-पत्रिकाएँ सभी कुछ इन मिशन में कार्यरत हुए। पुनीत भावों को नेतृत्व देने का कार्य भारतेन्दु करते रहे। प्रतापनारायण मिश्र, बद्रीनारायण 'प्रेमघन' तथा जगमोहन सिंह आदि कई लेखक इस दिशा में भारतेन्दु को सक्रिय योगदान देते रहे। परिणामतः काव्य रीतिकालीन घोर शृंगारिकता के चुंगल से निकल कर जन-जन के जीवन से जुड़ता चला गया। इस युग के साहित्य एवं साहित्यकारों ने प्रसाद जी को भी एक पृष्ठभूमि प्रदान की। भारतेन्दु के बहुमुखी व्यक्तित्व से तो प्रसाद जी अत्यंत प्रभावित हुए भी।

20 वीं शताब्दी के आरम्भ में गांधी तथा मालवीय जी जैसे युग-पुरुषों ने सत्य-अहिंसा का जो मार्ग दिखाया वह भी अपने आप में एक दृष्टांत बना। अंग्रेजों द्वारा हिन्दू-मुस्लिमों में वैमनस्य पैदा करने के प्रयासों को भारतीय मार्ग-दर्शकों द्वारा प्रचार की जा रही शिक्षा एवं नीति ने काफी हद तक रोका। भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति की महान विभूति बने रवीन्द्रनाथ टैगोर का आगमन हुआ। हिंदी एवं हिन्दुस्तान के प्रति पत्र-पत्रिकाओं ने सोचना-लिखना प्रारंभ किया। द्विवेदी युग की सर्वप्रथम पत्रिका ''सरस्वती'' ने इस दिशा

में अहम भूमिका निभाई। विभिन्न प्रयोगशील एवं सृजनशील विचारधाराओं को पत्रिकाओं एवं साहित्य के माध्यम से स्वर मिलने लगा। द्विवेदी युग की विशेषता यह रही कि प्रत्येक मोर्चे पर जातीय भावनप्त का स्थान राष्ट्रीयता लेने लगी। अतीत का गौरवगान और पुराने आदर्शों की संकल्पना पुनः जागृत हुई। देवता, मनुष्य बनकर साहित्य में उतरे किन्तु अपने आदर्श एवं दृष्टांत रूप में ही। मानवता-भाव को आदर्श बनाकर इस युग के साहित्य में स्थान दिया जाने लगा। पौराणिक एवं ऐतिहासिक मूल्यों को अनुवाद और सृजन के माध्यम से उजागर किया जाता रहा। काव्य भाषा खड़ी बोली का परिमार्जन होने लगा। नये छन्द और नई शैली में काव्य ढलने लगे। यहीं पर स्वच्छन्दता का कुछ-कुछ आभास भी मिलने लगा था।

श्रीधर पाठक, अयोध्याप्रसाद उपाध्याय, महावीर प्रसाद द्विवेदी तथा मैथिलीशरण गुप्त आदि कई कवि एवं साहित्यकार पत्र-पत्रिकाओं तथा काव्य वृत्तियों के माध्यम से हिंदी-विकास एवं परिष्कार में योगदान दे रहे थे। भारतेन्दु युग एवं द्विवेदी युग की इन सभी काव्य प्रवृत्तियों का विस्तृत अध्ययन आप पिछले खंडों में कर चुके हैं। यहाँ केवल इतना स्पष्ट करना आवश्यक है कि राष्ट्रीयता को प्रतिनिधित्व देने वाले इस काव्य-युग में ही प्रसाद का साहित्य-क्षेत्र में आगमन हुआ। गुप्त जी के ''साकेत'', ''यशोधरा'', ''जयद्रथ वध'' तथा ''भारत-भारती'' जैसे कई ग्रन्थ, हरिऔध का ''प्रिय प्रवास'', रामनरेश त्रिपाठी के ''मिलन'',''पथिक'' और ''स्वप्न'', सियारामशरण गुप्त का ''उन्मुक्त'' तथा रायदेवी प्रसाद पूर्ण के ''वसंत-वियोग'' आदि कई ग्रन्थ जिस युग में मानव-प्रेम, लोक-सेवा, बौद्धिक उन्नयन, लोक-रक्षा, त्याग, कर्तव्य तथा देवत्व की पृष्ठभूमि बना रहे थे, उसी युग में महाकवि जयशंकर प्रसाद आगे की बागडोर संभालने को अवतरित हो रहे थे।

दूसरी तरफ अंग्रेजी-साहित्य में जिस स्वच्छंदतावादी काव्यांदोलन तथा गीतिकाव्य का प्रचार हुआ, था उसमें भी अनुभूति की तीव्रता एवं सत्यता को प्रमुख स्वर मिला था। कीट्स, शैली और बायरन आदि कई स्वच्छंदतावादी कवियों की वाणी में यौवन-आवेग के साथ-साथ विद्रोह भाव की भी अभिव्यक्ति हुई थी। प्राचीन और नवीन का मिलन, रूढ़ियों के प्रति विद्रोह तथा रहस्य भावना की प्रधानता आदि कई दृष्टियाँ साहित्य में समन्वित हुई थीं। शांति और आनंद जैसे उदात्त तत्व में काव्य और साहित्य का लक्ष्य तथा आदर्श बनें। मानवीयता का दर्शन आनन्द शिखर की खोज में निकल पड़ा। सन् 1915 के आसपास क्रांति का स्वर, क्रांतिकारियों के कर्म से ही नहीं साहित्यकारों के क्रांति गीतों से भी प्रस्फुटित होने लगा था। राष्ट्रीय आन्दोलन कई रूपों में उठ खड़े हुए थे। बंकिम चन्द्र के गीत जागृति की लहरियाँ फैलाने लगे थे। स्वच्छन्दतावादी- गीतात्मकता और मानवीय तथा भारतीय दर्शन एक प्रेरणा बन रहे थे। मार्क्स की समाजवादी- प्रवृत्तियाँ भी सक्रिय हो रही थीं। नारी के प्रति दृष्टिकोण बदलने लगा था। रवीन्द्र की गीताजंलि एकजुट होने का मूलमंत्र दे रही थी। ऐसे चुनौती भरे समाज और परिस्थितियों में प्रसाद जैसी महाशक्ति प्रवेश पा रही थी। कविता, नाटक, उपन्यास, कहानी तथा निबन्ध आदि क्षेत्रों में अपनी सर्वतोन्मुखी प्रतिभा एवं सांस्कृतिक तथा राष्ट्रीय चेतना परक दृष्टि लेकर नेतृत्व प्रदान करने का दायित्व संभाला जयशंकर प्रसाद ने। उनके समग्र साहित्य में इस पृष्ठभूमि को तथा इनकी निर्मात्री परिस्थितियों को देखा जा सकता है। राष्ट्र-प्रेम, अतीत के प्रति अनुराग एवं श्रद्धा, सांस्कृतिक मोह तथा मानवीय मूल्यों की पुर्नस्थापना ही प्रसाद की पहचान बनते हैं। ''कामायनी'' जैसे महाकाव्यात्मक- महाग्रंथ के इस प्रणेता ने समग्र भारतीय दर्शन का अद्‌भुत समन्वय प्रस्तुत कर इच्छा, ज्ञान एवं कर्म की जो आनन्दप्रद राह दिखाई है, वह अनन्य है, अन्यतम है, श्रद्धेय है। प्रसाद के समग्र साहित्य एवं काव्य-विशेष के संदर्भ में चर्चा हम आगे करेंगे। किन्तु, यहाँ यह स्पष्ट होना चाहिए कि समय, स्थिति परिवेश एवं घटनाओं के इस चक्र ने जिस वैविध्यमयी पृष्ठभूमि का निर्माण प्रसाद के लिए किया, प्रसाद ने उसी के परिप्रेक्ष्य में अपने साहित्य का सृजन कर एक सार्वभौमिक दृष्टिकोण को स्थापित करने का सफल कार्य किया। अतः इस अपार क्षमता और अनन्त

शक्ति के प्रतिभा सम्पन्न कलाकार के श्रेष्ठतम रचना-संसार का अध्ययन ही अब हमारा लक्ष्य होगा।

8.4 रचनाएँ और रचना संसार

भावनाओं के मधुर गायक तथा काव्य की विशिष्ट-सृष्टि के निर्माता जयशंकर प्रसाद जितने महान हैं उनका रचना संसार भी उससे कम विशाल या विराट नहीं। इस महान् कृतिकार ने कविकर्मी जीवन-साधना में संसार के अनुभवों की मार्मिक प्रतिक्रिया को भाषा के माध्यम से अभिव्यक्ति देकर साहित्य को प्रेरणा प्रदान की तथा समूचे विश्व को एक नव्य-बोध भेंट किया। सांस्कृतिक चेतना से ओत-प्रोत साहित्य भंडार देने वाले बहुमुखी-प्रतिभा के इस धनी व्यक्तित्व ने काव्य, नाटक, उपन्यास, कहानी तथा निबंध जैसी कई विधाओं में एक साथ मानव, समाज, देश तथा युग की अनेकों समस्याओं को ही उजागर नहीं किया उनके समाधान की राह भी प्रशस्त की। पद्य और गद्य में बराबर अधिकार रखते हुए इतिहास और संस्कृति के समर्थ आख्याता बने महाकवि प्रसाद पूरे हिंदी साहित्य में सबसे अलग दिखाई पड़ते हैं। अपने व्यक्तिवादी रूप में वेदना, करूणा तथा प्रेम दर्शन की अभिव्यक्ति करते हुए प्रसाद एक उच्चतम भावभूमि पर पहुँचते हैं और यहीं समग्र विश्व का आत्मवाद, आनन्दवाद तथा आध्यात्मिकता की भावना से परिचय भी कराते हैं।

इस इकाई में हमारा उद्देश्य महाकवि प्रसाद के काव्य संसार की मूल चेतना तथा उनकी काव्य कृतियों के भाव-जगत को अनुभूत करना है। अतः काव्य-इतर अन्य विधाओं में सृजित उनकी काव्य-कृतियों का परिचय पाते हुए हम मूलतः उनके काव्य-लोक पर ही केन्द्रित रहेंगे। आइये सर्वप्रथम उनके रचना-संसार पर दृष्टि डालें-

काव्य रचनाएँ: चित्राधार, प्रेम-पथिक, करूणालय, महाराणा का महत्व, कानन-कुसुम, झरना, आँसू, लहर तथा कामायनी।

नाटक: सज्जन, कल्याणी-परिणय, प्रायश्चित, राज्यश्री, विशाख, अज्ञातशत्रु, जनमेजय का नागयज्ञ,कामना, स्कन्दगुप्त, एक घूँट, चन्द्रगुप्त तथा ध्रुवस्वामिनी।

उपन्यास: कंकाल, तितली और इरावती (अपूर्ण)

कहानी-संग्रह: छाया, प्रतिध्वनि, आकाशदीप, आंधी और इन्द्रजाल।

निबंध: काव्य और कला तथा अन्य निबंध।

इस प्रकार आनन्दवाद को जीवन की साध्य तथा समरसता को साधन मानने वाले इस विश्व-कल्याण के प्रतिनिधि कवि ने अपने साहित्य-सागर की अपार जलराशि के भीतर अमृत का एक ऐसा कलश रख दिया है जो युगों-युगों तक इस सागर की शरण में आने वालों के विष को प्रभावहीन बनाकर उन्हें अम्बर-आनन्द की कल्याणकारी एवं समरस भूमा तक ले जाता रहेगा। इच्छा, ज्ञान और कर्म की गीतात्मक राह को पुनः प्रशस्त करने वाले इस अन्वेषी ने समरसता में लय होने का संगीत दिया।

प्रसाद जी ने अपनी काव्य-यात्रा आठ-नौ वर्ष की अवस्था में प्रारंभ कर दी थी। नौ वर्ष की अवस्था में प्रसाद को संस्कार सम्पन्न कराने के लिए जौनपुर और विन्ध्याचल ले जाया गया तो पर्वतीय सुषमा और भूमा के अंक में कलकल नाद करते झरनों के प्राकृतिक सौन्दर्य ने कवि के बाल-हृदय को मुग्ध कर लिया। इसी प्राकृति वैभव पर रीझकर उन्होंने ''कलाधर'' उपनाम से कविता का सृजन किया था। 1906 में यह कविता ''भारतेन्दु'' में प्रकाशित भी हुई थी-

हारे सुरेश रमेश धनेश, गनेशहु, सेस न पावत पारे।
पारे हैं कोटिक पातकी पुंज, कलाधार ताहि दिनोबिच तारे।

तारेन की गिनती सम नाहिं, सुवेते तरे प्रभु पापी बिचारे।
चारे चले न विरंचहि के, जो दयालु है संकर नेक निहारे।

''ब्रजभाषा'' में कविता लेखन प्रारंभ करने वाले इस कवि ने ''इन्दु'' पत्रिका के दूसरे अंक में ''प्रेम-पथिक'' प्रकाशित कराया। मूलतः ब्रजभाषा में लिखी गई इस रचना को बाद में कवि ने खड़ी बोली में रूपान्तरित भी किया। ''झरना'' के पूर्व की सभी कृतियाँ प्रसाद जी ने द्विवेदी-युग में तैयार कीं तथा शेष छायावाद में। अधिक दिनों तक ब्रजभाषा में कविता न करने वाले प्रसाद ने अपने भावों को युग और परिवेश की अपेक्षा के अनुसार ही खड़ी बोली में ढालना प्रारंभ किया और धीरे-धीरे वे खड़ी बोली के शीर्षस्थ कवि-पद पर आ विराजे। भाषा, छन्द, भाव तथा विचार की दृष्टि से अनेक रूपता में भी समरसता पैदा करने वाला यह गंभीर-चिंतक आरंभ में अयोध्यासिंह उपाध्याय की तरह संस्कृत गर्भित शैली को अपनाकर भी उसमें आश्चर्यजनक परिवर्तन करता है और अन्तर्मुखी कल्पना से सूक्ष्म भावनाओं को व्यक्त करने का सफल प्रयास करता है।

''चित्राधार'' कवि की सबसे पहली काव्य-कृति है। सन् 1909 से 1912 तक की पाँच रचनाएँ उसमें समाहित हैं। ''अयोध्या का उद्धार'', ''वन-मिलन'', ''प्रेम राज्य'' (पूर्वाद्ध तथा उत्तरार्द्ध), ''पराग'' और ''मकरन्द बिन्दु'' नामक इन रचनाओं में ''पराग'' ऐसा काव्य-संगह है जिसमें 24 स्फुट कविताएँ संकलित हैं। इसके बाद ''प्रेम-पथिक'', ''करूणालय'', तथा ''कानन कुसुम'' सन् 1913 में प्रकाशित हुई। ''कानन-कुसुम'' में सन् 1909 से सन् 1917 तक की 49 स्फुट कविताएँ एकत्र की गई हैं। सन् 1914 में ''महाराजा का महत्व'' प्रकाशित हुई। फिर सन् 1918 में 55 स्फुट कविताओं का संग्रह ''झरना'' प्रकाश में आया। इसी प्रकार सन् 1925 में ''आँसू'' सन् 1933 में 33 स्फुट कविताओं का अद्वितीय काव्य संग्रह ''लहर'' और सन् 1935 में विश्व का अन्यतम तथा अनुपम महाकाव्य ''कामायनी'' प्रकाशित हुआ।

ब्रजभाषा में लिखित प्रारंभिक कविताओं में प्रसाद प्रकृति को उद्दीपन के रूप में नहीं, आलम्बन के रूप में ग्रहण करने का प्रयत्न करते हैं। इसके बाद की कविताओं में प्रसाद ने संस्कृत साहित्य के भीतर से एक सुसंस्कृत प्रेरणा प्राप्त कर कविता में अपनी नूतन भावाभिव्यक्ति के द्वारा हिंदी काव्य-संसार में ही नहीं समूचे विश्व-काव्याकाश में भी अपना वैशिष्ट्य और नेतृत्व सिद्ध कर दिया। प्रसाद का अध्ययन गहन और व्यापक था। वेद, उपनिषद्, इतिहास और संस्कृति काव्य का मनन पूर्ण अध्ययन ही उनके कविता के उद्देश्य को निर्धारित करता है। ''आंसू'' के अन्त में कवि कहता है-

सबका निचोड़ लेकर तुम
सुख से सूखे जीवन में,
बरसों प्रभात हिमकन-सा
आंसू इस विश्व-सदन में।

मनुष्य, समाज, राष्ट्र और विश्व- सभी के कल्याण का लक्ष्य लेकर चलने वाला कवि स्वयं अपनी कविता के उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए ''कवि और कविता'' शीर्षक लेख में कहता है- ''श्रृंगार रस की मधुरता पान करते-करते आपकी मनोवृत्तियाँ शिथिल तथा अकुला गयी हैं। इस कारण अब आपको भावमयी उत्तेजनामयी, अपने को भुला देने वाली कविताओं की आवश्यकता है। अस्तु धीरे-धीरे जातीय, संगीतमयी, वृत्ति स्फुरणकारिणी, आलस्य को भंग करने वाली, आनन्द बरसाने वाली, धीर, गंभीर पद-विक्षेपकारिणी शांतिमयी कविता की ओर हम लोगों को अग्रसर होना चाहिए। अब देर नहीं है, सरस्वती अपनी मलिनता को त्याग रही है, और नवल रूप धारण करके प्रभातिक उषा को लजावेगी। एक बार वीणाधारिणी अपनी वीणा को पंचम स्वर में फिर ललकारेंगी। भारत की भारती फिर भी भारत की ही होगी।''

प्रसाद जी ने अपनी सभी काव्य कृतियों में ऐतिहासक सांस्कृतिक मूल्यों को धरोहर रूप में संजोया, संवारा और निखारा है। ''प्रेम पथिक'' में प्रकृति का वैभव, प्रेम की अपारता तथा प्रेम का उदात्त, निर्मल एवं अलौकिक महत्व एक पथिक की यात्रा के द्वारा स्पष्ट किया गया है। ''अयोध्या का उद्धार'' में अयोध्यानरेश महाराजा राम के ज्येष्ठ पुत्र कुश द्वारा अयोध्या के पुनरूत्थान का वर्णन किया गया है। यह कालिदास कृत ''रघुवंश'' के सोलहवें सर्ग पर आधारित है। इसमें प्राकृतिक सुषमा के सुंदर वर्णन के साथ-साथ राजा के कर्त्तव्य कर्म की भी सराहनीय व्याख्या की गई है।

''वन मिलन'' ''इन्दु'' में ''वानवासिनी बाला'' नाम से प्रकाशित हो चुका है। कालिदास कृत ''शाकुंतलम्'' से प्रेरणा पाकर कवि ने इस कृति में प्रकृति की अनुपम छटा के साथ-साथ शकुन्तला के विरह, सखियों की आर्द्रता तथा दुष्यंत के शापमुक्त होकर शकुन्तला से मिलन आदि को अत्यंत मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किया है। 'रोला' छंद और ब्रजभाषा में रचित इस कृति में प्रसाद की मौलिक एवं स्वच्छन्द कल्पना भी यत्र-तत्र दिखाई देती है। ''प्रेम राज्य'' ब्रजभाषा में लिखित तथा रोला और छप्पय छंदों से सुसज्जित कृति है। इसमें विजयजनगर के राजा सूर्यकेतु की सेनापति के विश्वासघात से हत्या और फिर सेनापति की पत्नी के प्रायश्चित और दृढ़ संकल्प द्वारा विश्वासघाती पति के त्याग को दर्शाया गया है। स्वदेश प्रेम और राष्ट्र सेवा इसका प्रमुख स्वर हैं। इनके अतिरिक्त चित्राधार की मुक्त कविताओं में ''पराग'' और ''मकरंद-बिन्दु'' शीर्षक संग्रह है। उनमें शरद, रजनी, चन्द्र, वर्षा, नारी, उद्यान, प्रभात तथा कुसुम आदि प्रकृति तत्वों से सम्बद्ध कविताओं को तथा प्रेम और विरह संबंधी कविताओं को रखा गया है। इस कविता संग्रह में प्रसाद बंगला के ''प्यार'' और ''त्रिपदी'' तथा संस्कृति के मालिनी, सुंदरी और प्रियम्बदा आदि छंदों का प्रयोग करते हैं। मकरंद-बिन्दु की भक्ति परक रचनाओं में संवैयों का भी सुंदर प्रयोग किया गया है।

''कानन-कुसुम'' के अंतर्गत आख्यानक, प्रकृति-विषयक, भक्ति-विषयक और प्रेम-विषयक कविताएँ संकलित की गई हैं। महापुरुषों के प्रशस्तिगान तथा कतिपय सामयिक समस्याओं को भी इन कविताओं में उजागर किया गया है। पौराणिक एवं ऐतिहासिक आधार पर लिखित चित्रकूट, भरत, श्रीकृष्ण जयंती, कुरूक्षेत्र तथा वीर बालक आदि कुछ कविताएँ इनमें प्रमुख हैं। प्रभो, नमस्कार, वंदना तथा विनय आदि कुछ कविताएँ भक्ति विषयक कविताएँ हैं। खड़ी बोली में रची गई इन कृति में ही इन्द्रधनुष, चन्द्रोदय तथा प्रभातिक-कुसुम जैसी छायावादी काव्य रचनाएँ पहली बार प्रकाश में आई।

''करूणालय'' गीति नाट्य के ढंग पर लिखी गई महत्वपूर्ण कृति है। इसमें पाँच दृश्य हैं। इसमें राजा हरिश्चन्द्र द्वारा शुनः शेष के नरमेध यज्ञ में बलि दिये जाने की कथा का सुंदर वर्णन किया गया है। नरमेध-यज्ञ को सामयिक समस्या के परिप्रेक्ष्य में देखने का सफलतम प्रयास प्रसाद ने किया है। भाषा खड़ी बोली ही है। ''महाराणा का महत्व'' शीर्षक काव्य कृति के अंतर्गत रहीम खान-खाना की बेगम को राजपूतों द्वारा बंदी बनाये जाने और महाराजा प्रताप द्वारा उन्हें मुक्त कराके उनके पति के पास ससम्मान पहुँचा देने की ऐतिहासिक घटना का मार्मिक वर्णन है। कवि प्रसाद की अनुपम कल्पना और इतिहास की वीरता भरी गाथा का बिम्बात्मक वर्णन सराहनीय बन पड़ा है। ओज भरी भाषा कविता की शक्ति बनी है।

''झरना'' के अंतर्गत वैयक्तिक प्रेम और विरह की एक अविरल धारा प्रवाहित होती है और यह ''आँसू'' में ढलकर ''लहर'' में समाहित हो जाता है। मांसल अनुभूति धीरे-धीरे सूक्ष्म और छायात्मक बनती जाती है। व्यक्तिगत व्यथा धीरे-धीरे प्रकृति के कण-कण में परिवर्तित होने लगती है। युवा-मिलन की प्रेम-पगी आशा-निराशा, हर्ष-विषाद तथा विरह-मिलन की हृदयस्पर्शी अभिव्यक्ति इसमें हुई है। यहीं रहस्यवादी विरह की व्यंजना भी पहली बार देखने को मिलती है। इस कृति में प्रसाद की भाषा और शैली निरंतर मंझ कर निखार पाती रही है।

आँसू में शुद्ध रहस्यात्मक अनुभूति तथा लौकिक विरह भावना का अद्‌भुत मिश्रण है। रहस्यवादी-भाव धारा वाली यह कृति छायावाद की अन्यतम कृति है। व्यापक प्रेम के इस अमर प्रेमी कवि ने इस कृति में सुख-दुख में एक स्वस्थ सामंजस्य स्थापित करना चाहा है। प्रतीक-विधान तथा 28 मात्राओं वाला ''आँसू'' छन्द इस कृति की विशिष्ट पहचान बनाते हैं। अनुपम तथा अनूठी कल्पना और विरह की मार्मिक अभिव्यक्ति को प्राणदा-शक्ति देते, प्रबल-शब्द छायावाद की अमूल्य निधि बन जाते हैं।

''लहर'' तक आकर भावना की अश्रुधाराएँ धीरे-धीरे बौद्ध-दर्शन की वैचारिक लहरों में समाने लगती हैं। लोक-मंगल की भावना का संकल्प यहाँ आकार रूपायित होने लगता है। बौद्ध दर्शन की करूणा कवि को एक नई दृष्टि देती है। यहीं आकर कवि ''आनन्दवाद'' की कल्पना करता है।

आनन्दवाद की यह कल्पना ''कामायनी'' तक आते-आते साकार होती है। पन्द्रह सर्गों के इस अन्यतम महाकाव्य में प्रसाद की काव्य प्रतिभा अपने चरम शिखर पर पहुँचकर संपूर्ण-विश्व को प्रदीप्त करने लगती है। पौराणिक जल-प्लावन की घटना को आधार बनाकर कवि प्रसाद ने इस अन्योक्ति परक महाकृति में प्रकृति, प्रेम, कर्म, रहस्य, दर्शन, इच्छा, ज्ञान, वासना तथा आनंद आदि का मर्मस्पर्शी ही नहीं स्तब्ध कर देने वाला अद्‌भुत वर्णन प्रस्तुत किया है। प्रतीकों के माध्यम से अन्य अर्थों को सफलतापूर्वक वहन करती यह कर्मकथा भावों के अमूल्य-रत्नों की धरोहर है। आनन्द और आस्था के मार्गदर्शक प्रसाद ने कामायनी में बुद्धिवाद का विरोध और हृदय-तत्व की प्रतिष्ठा करते हुए शैव दर्शन के आनन्दवाद को ही जीवन के पूर्ण उत्कर्ष का साधन घोषित किया है।

इस प्रकार कह सकते हैं कि प्रसाद के समग्र काव्य-संसार में एक अलौकिक तथा विलक्षण शक्ति विद्यमान है और उनके प्रगीतों में यह शक्ति अपनी चरम-सीमा पर पहुँची हुई है। जीवन और दर्शन में परस्पर निर्भरता सिद्ध करते हुए इस महाकवि ने पौराणिकता एवं ऐतिहासिकता के परिप्रेक्ष्य में भारतीयता, मानवीयता, संस्कृति तथा दर्शन आदि को युगीन समस्याओं से जोड़ा ही नहीं, उनका समाधान भी खोजा और प्रस्तुत किया। इसीलिए वे समूचे संसार को उद्‌बोधित करते हुए कहते भी हैं-

भुनती वसुधा तपते नग
दुखिया है सारा अग जग
बह जा बन करूणा की तरंग,
जलता है यह जीवन पतंग।

बोध प्रश्न1

1. नीचे कुछ कथन दिए जा रहे हैं। सही या गलत के चिह्न से चिह्नित कीजिए-

i) ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय चेतना तथा मानवतावादी दृष्टि के प्रचार-प्रसार का दायित्व निभाने वाले प्रसाद जैसे अन्य कई साहित्यकार हिंदी-साहित्य में उपलब्ध है। ( )

ii) प्रसाद की अलौकिक-प्रतिभा ने गद्य और पद्य दोनों में अपनी वैविध्यमयी तथा कल्याणकारी दृष्टि की छाप छोड़ी है। ( )

iii) प्रसाद को परिवार,समाज एवं राष्ट्र के स्तर पर सदैव अनुकूल तथा सम स्थितियाँ ही मिलती रहीं। ( )

iv) प्रसाद जी के घर पर कवियों, गवैयों, पंडितों, वैद्यों, यांत्रिकों भाट-बाजीगरों तथा ज्योतिषी आदि विद्वानों का आना-जाना लगा रहता था। ( )

v) प्रसाद जी को हिंदी, उर्दू, फारसी, संस्कृत तथा अंग्रेजी का गहन ज्ञान था और उन्होंने वेद, पुराण, इतिहास तथा उपनिषदों का भी खूब अध्ययन किया था। ( )

2. नीचे दिए रिक्त स्थानों के लिए उपयुक्त विकल्प को चिन्हित कीजिएः

i) महाकवि प्रसाद का जन्म सन् .....में हुआ था। (सन् 1902,1880,1889)

ii) प्रसाद जी के ज्येष्ठ भाई का नाम ..... था। (श्री देवी प्रसाद, श्री रत्नाशंकर, श्री शंभुरत्न)

iii) प्रसाद जी को स्कूल की शिक्षा से ..... वर्ष की अवस्था में वंचित होना पड़ा था। (12 वर्ष, 18 वर्ष, 14 वर्ष)

iv) प्रसाद की ब्रजभाषा में रचित कविताएँ सन् ..... में पत्र-पत्रिकाओं में छपने लगी थीं (1908,1911,1914)

3. एक-दो पंक्तियों में उत्तर लिखिएः

i) प्रसाद की पाँच काव्य कृतियों के नाम लिखिए।

.....

.....

.....

.....

ii) प्रसाद जी की मृत्यु कब और कैसे हुई?

.....

.....

.....

.....

iii) प्रसाद जी के पाँच प्रमुख नाटकों के नाम लिखिए।

.....

.....

.....

.....

iv) प्रसाद जी के निबंध संग्रह का क्या नाम है?

.....

.....

.....

.....

v) प्रसाद के दो प्रमुख उपन्यासों और दो कहानी संग्रहों के नाम लिखिए।

.....

.....

.....

.....

नोटः इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

8.5 प्रसाद काव्यः प्रमुख स्वर

प्रसाद का काव्य, जैसा कि अभी हमने देखा भी, सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय चेतना से अनुप्राणित एक ऐसी काव्य-सृष्टि है जिसमें कई भाव, कई विचार कई दृष्टियाँ, कई समस्याएँ तथा कई चुनौतियाँ एक साथ उभर कर आती हैं और प्रसाद आस्था, निष्ठा, कर्म तथा दायित्व के माध्यम से उनका निर्विवाद समाधान भी खोज निकालते हैं। राष्ट्र की खोयी हुई चेतना को अतीत के गह्वरों से खोज कर सांस्कृतिक-पुनरुत्थान का सफल प्रयत्न करने वाला यह कवि वेदना, करुणा, प्रेम प्रकृति तथा मानवता की मर्मस्पर्शी अभिव्यक्ति का प्रतिनिधि बन कर उभरता है। राष्ट्रीय उत्थान के लिए इतिहास का पुनर्जागरण उसे सक्रिय करता है तो देश की परंपरा और सभ्यता की स्मृतियाँ उसे नवजीवन प्रदान करती हैं। आध्यात्मिक चेतना उसके विचारों को दिशा एवं दृष्टि देती हैं और वही दृष्टि समग्र संसार को आनन्द-शिखर तक पहुँचाने का मार्ग प्रशस्त करती है। अतः देश की विविध विषम परिस्थितियों में हिंदी कविता के प्रांगण में उतरने वाले इस महाकवि ने सूक्ष्म पर्यवेक्षण से हिंदी कविता को नए विषय, नई चेतना, नई पृष्ठभूमि और नई दृष्टि प्रदान की। प्रसाद के इस नए नव-आंदोलन वाले काव्य-संसार में कई प्रवृत्तियाँ उभरीं, जिन्होंने नवजागरण का संदेश दिया यहाँ हम प्रसाद काव्य की उन्हीं प्रमुख प्रवृत्तियों अथवा विशेषताओं पर दृष्टि डालेंगे।

8.5.1 इतिहास एवं संस्कृति

प्रसाद का आविर्भाव हिंदी साहित्य के ऐसे युग में हुआ जब स्वतंत्रता संग्राम का जोश और ऐतिहासिक तथा सांस्कृतिक गरिमा को सुरक्षित रखने की छटपटाहट विदेशी सत्ता के उन्मूलन की राह खोजने को बाधित कर रहे थे। वैमनस्य एवं भेदभाव इस सम्मिलित क्रांति-यज्ञ की आहूति बन चुके थे। प्रसाद जी ने राजनीति, संस्कृति, धर्म व्यापार मूल्य तथा विचारों भावों के ऐसे उथल पुथल मचा देने वाले युग में इतिहास एवं संस्कृति के प्रति अगाध श्रद्धा भाव पैदा किया। काव्य, नाटक तथा निबन्ध आदि के माध्यम से कवि गरिमामंडित भारतीय इतिहास तथा पुनीत भारतीय संस्कृति की झांकी बार-बार प्रस्तुत करता है। प्राचीन एवं ऐतिहासिक घटनाओं का सहारा लेकर इस अन्वेषी कवि ने भारतीय संस्कृति के बिखरे अवयवों को एकत्रित कर जन-जन में इसके प्रति श्रद्धा उत्पन्न की तथा भारतीय और विदेश संस्कृति के संगम में आधुनिक मानवता को विकास देने वाली संस्कृति को भी तैयार किया। प्रसाद ने रामायण, महाभारत, पुराण, उपनिषद तथा अन्य ऐतिहासिक एवं संस्कृत ग्रंथों का अनुशीलन करते हुए अपने समग्र साहित्य को शक्ति प्रदान की। 'चित्रकूट', 'अयोध्या का उद्धार', 'महाराजा का महत्व', 'शेरसिंह का शस्त्र समर्पण', 'पेशाला की प्रतिध्वनी' तथा 'कामायनी' जैसी काव्य कृतियाँ इसके प्रमाण हैं तो 'स्कन्दगुप्त', 'चन्द्रगुप्त', 'ध्रुवस्वामिनी','विशाख','जन्मेजय का नागयज्ञ' जैसे नाटक भी इसी का उदाहरण हैं। इसी प्रकार की कहानियों में भी प्रसाद की इसी दिव्यदृष्टि को देखा जा सकता है। प्रसाद के पात्र भी इतिहास एवं संस्कृति के विशिष्ट पात्र हैं। 'भरत' और 'वन-मिलन' कविता में वे कालिदास को आधार बनाते हैं तो 'कामायनी' और 'करुणालय' में पुराण

कथाओं को। 'अजातशत्रु' नाटक में बौद्ध कालीन आधार को अपनाते हैं तो 'चंद्रगुप्त' में मौर्यकालीन आधार को बनाया गया है। 'स्कन्दगुप्त' और 'ध्रुवस्वामिनी' में गुप्तकालीन इतिहास को उजागर करने का सफलतम प्रयास है तो 'राज्यश्री' और 'प्रायश्चित' में मध्यकालीन इतिहास आधार बना है। इसी प्रकार नूरी, दासी, चित्तौड़, गुलाम, ममता, जहांनारा, तानसेन, उद्धार तथा स्वर्ग के खंडहर जैसी कई कहानियाँ भी ऐतिहासिक आधार रखती हैं। अतः यह तो स्पष्ट ही है कि प्रसाद ने भारतीय संस्कृति के उज्ज्वलतम रूप को प्रस्तुत करने के लिए ही इतिहास का सहारा लिया और उसे साहित्यिक स्पर्श देने के लिए कहीं-कहीं मर्मस्पर्शी कल्पना का अदभुत मिश्रण भी कर दिया। कवि इतिहास और कल्पना के बहुरंगी चित्रों से अपने साहित्य को सुसज्जित ही नहीं करता, प्राचीन भारत की स्वर्णिम झांकी प्रस्तुत कर भारतीय संस्कृति के निखरे हुए स्वरूप को भी दर्शाता है। अतः इतिहास के अंधकार युग से लेकर अंग्रेजी युग तक की सामाजिक सांस्कृतिक और ऐतिहासिक घटनाओं की आधार भित्ति पर कवि अपना ''साहित्य-प्रसाद'' निर्मित करता है। यही कारण है कि उनके काव्य, नाटक एवं कहानियों आदि में इतिहास के माध्यम से वर्तमान की समस्याओं की आत्मा झलकती जान पड़ती है। 'प्रलय की छाया' जैसी ऐतिहासिक गीति रचना में गुर्जर प्रदेश की अनिंद्य सुन्दरी कमला का सुल्तान अलाउद्दीन द्वारा बंदी बनाया जाना सांस्कृतिक-इतिहास पर कलंक माना जाता रहा किन्तु महाकवि प्रसाद ने चित्तौड़ की रानी पद्मिनी से रूप स्पर्धा करती कमला की विवशता पर नया प्रकाश डाला-

मैं भी थी कमला
रूप रानी गुजरात की।
सोचती थी
पद्मिनी जली थी स्वयं किन्तु मैं जलाऊँगी
वह दावानल ज्वाला
जिसमें सुल्तान जले।
देखें तो प्रचण्ड रूप ज्वाला सी धधकती
मुझको सजीव वह अपने विरूद्ध

कवि ने कमला के चरित्र में आदर्श प्रतिष्ठित करने के लिए ऐतिहासिक तिथियों और कतिपय तथ्यों में व्यतिक्रम भी किया हो, किंतु प्रसाद का लक्ष्य एक साहित्यकार का लक्ष्य रहा। तथ्य मात्र प्रस्तुत करना उनका ध्येय न था।

इसी तरह 'शेरसिंह का शस्त्र समर्पण' में सिख इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना को उजागर किया गया है। प्रसाद ने महाराजा रणजीत सिंह के बाद के पंजाब और रानी जिन्दन की विवशता का अत्यंत सजीव वर्णन किया है। अंग्रेजों और सिक्खों के मध्य पहला बड़ा युद्ध चिलयान वाला में हुआ और अन्तिम गुजरात (पंजाब) में। प्रसाद ने गुजरात के इस युद्ध में सिक्खों की इस वीरता का बखान किया है।-

सिक्ख थे सजीव
स्वत्व रक्षा में प्रबुद्ध थे।
जीना जानते थे
मरने की जानते थे सिक्ख

स्पष्ट है कि प्रसाद इतिहास का आश्रय संस्कृति के उज्ज्वल पक्ष एवं स्वरूप को हमारे सम्मुख बार-बार उजागर करने के लिए ही लेते हैं। दर्शन और आध्यात्म कभी उन्हें हिमगिरी के उत्तुंग शिखर पर जाने की प्रेरणा देते हैं तो कर्त्तव्य और धर्म उन्हें इतिहास के गहल्रों में उतरने की शक्ति देते हैं। प्रसाद साहित्य की मूल रचना को स्पष्ट करती ये पंक्तियाँ देखिएः

हिमालय के आँगन में उसे, प्रथम किरणों का दे उपहार
उषा ने हँस अभिनन्दन किया, और पहनाया हीरक द्वार।

- स्कन्दगुप्त

औरों को हंसते देखो, मनु
हँसों और सुख पाओ,
अपने सुख को विस्तुत कर लो
सबको सुखी बनाओ

- कामायनी

जननी जिसकी जन्मभूमि हो, वसुन्धरा ही काशी हो।
विश्व स्वदेश, भ्रात मानव हों पिता परम अविनाशी हो।

- कानन-कुसुम

इस प्रकार के गौरव गान तथा सांस्कृतिक श्रद्धा से युक्त गीत गाने वाला यह महाकवि 'मनु' जैसे आदि-पुरुष का निरूपण करके भी जीवन संघर्ष की राह दिखाता है। 'चन्द्रगुप्त' नाटक में कार्नेलिया विदेशी बालिका होकर भी 'अरुण यह मधुमय देश हमारा' गीत गाकर भारत भूमि के प्रति अपने प्यार को दर्शाती है। आदि पुरुष मनु हिमालय के उत्तुंग शिखर पर विराजते हैं। निश्चित ही प्रसाद भारतीय इतिहास, सभ्यता एवं संस्कृति के पोषक-प्रहरी थे। सांस्कृतिक पुनरूत्थान की ये रेखाएँ उनके इसी अनुराग की परिचायक हैं। बाबा रामनाथ, चाणक्य तथा दाण्डयायन जैसे सांस्कृतिक प्रतीक-पात्र, धर्म और दर्शन को अद्‌भुत समन्वय, भारतीय आत्मवाद और सार्वभौमिकता की स्थापना और मानव संस्कृति की विजय का उदधोष-सब के सब प्रसाद, जी की ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक श्रद्धा के गवाह हैं।

8.5.2 राष्ट्रीय चेतना और मानवीयता

हिंदी साहित्य के छायावादी युग में राष्ट्रीय एवं स्वातंत्र्य चेतना का मूल मंत्र पूरे देश में स्फूर्ति संचरित कर रहा था। मानवीय गुणों की स्थापना और इंसानी मूल्यों की प्रतिष्ठा प्रत्येक छायावादी कवि का लक्ष्य बन गया था। प्राचीन भारतीय गौरव और सांस्कृतिक-दार्शनिक मूल्यों की अभिव्यक्ति के प्रति कवि प्रसाद का अनुराग भी राष्ट्रीय भावना की प्रेरणा बन रहा था। अतीत की चेतना भावुक कवि को जागृति की गति प्रदान करती रही और युगीन परिवेश उसके इन गीतों में मूल्यों की शक्ति जुटाता रहा। त्याग, एकता और आत्म-बलिदान की भावनाएँ ही नहीं, शक्ति, संगठन और शौर्य का गान भी आह्वान देने लगा। चन्द्रगुप्त नाटक में ''अलका'' नागरिकों को युद्ध के लिए प्रोत्साहित करती हुई राष्ट्रीय चेतना का संचार करती है-

हिमाद्री तुंग श्रृंग से
प्रबुद्ध शुद्ध भारती-
स्वयं प्रभा समुज्जवला
स्वतंत्रता पुकारती-
अमर्त्य वीर पुत्र हो, दृढ़ प्रतिज्ञ सोच लो,
प्रशस्त पुण्य पंथ है- बढ़े चलो, बढ चलो।

प्रसाद के नाटकों में तो राष्ट्र चेतना कूट-कूट कर भरी ही है, काव्य भी इसी चेतना की जीवंत मिसाल है। कवि की राष्ट्रीयता, देश-भक्ति एवं देश प्रेम के प्रति यह दृढ़ भावना पौराणिक एवं ऐतिहासिक आख्यानों के माध्यम से अभिव्यक्त भी हुई है। विदेशियों की पराजय, देश के प्रति उल्लास, श्रद्धा, समर्पण एवं बलिदान की भावना आदि कई काव्य

प्रसंग इसी आस्था के प्रमाण हैं, निराशा में आशा और विजय का मार्ग प्रशस्त करते कवि के ये भाव द्रष्टव्य है जिसमें सभर-संगिनी और रस-रंगिनी तलवार को जीवन साथी बताया गया है-

अरी रस-रंगिनी
सिक्खों के शौर्य भरे जीवन की संगिनी।
कपिशा हुई भी लाल तेरा पानी पार कर।
दुर्भद दुरन्त धमद दस्युओं की त्रासिनी-
निकल, चली जा तू प्रतारणा के कर से।

-शेरसिंह का शस्त्र समर्पण

यह वह भारत है जहाँ के योद्धा-वीर लड़ना और मिटना जानते हैं। शस्त्र हो तो कोई बात ही नहीं और न हों तो भी निश्चिन्त। ये हाथ और वज्र शरीर ही शस्त्र बन जाते हैं। हथेली पर प्राण लिये घूमने वाले ये राष्ट्र-भक्त सदैव जय के उपासक रहे हैं-

अहा खेलता कौन यहाँ शिशु सिंह से
आर्यवृन्द के सुन्दर सुखमय भाग्य सा
कहता है उसको लेकर निज गोद में-
खोल, खोल मुख सिंह-बाल, मैं देखकर
गिन लूँगा तेरे दाँतों को हैं भले
देखूँ तो कैसे यह कुटिल कठोर हैं।

- कानन-कुसुम

प्रसाद ने भारतीय जनता के हृदय में राष्ट्रीयता की भावना को जागृत कर अत्याचारी अंग्रेज शासकों और देशद्रोहियों के प्रति खुल कर विद्रोह करने की सीख ही नहीं दी, मनुष्यता और मानवता का पाठ पढ़ा कर नैतिक एवं आदर्श मूल्यों की प्रतिष्ठा का मंत्र भी दिया। कवि की निजी दृष्टि का मानवीय बोध और इस बोध का आर्द्र स्वर जीवन के शाश्वत उपादानों के प्रति सजग करता है। मानव को सर्वोपरि मानने वाले इस महाकवि ने ''मनु'' को अपने इसी आदर्श मानस का प्रतीक बनाकर उसकी आन्तरिक भावनाओं में समाज की सीमाओं को रूपायित किया है। श्रद्धा ''मनु'' को ही जागृत सन्देश नहीं सुनाती, समस्त मानव जाति को अमन-मंत्र प्रदान करती है-

यह नीड़ मनोहर कृतियों का?
यह विश्व कर्म-रंगस्थल है।
है परम्परा लग रही यहाँ
ठहरा जिसमें जितना बल है।

मानवीय मूल्यों की दृढ़ स्थापना का यह संदेश संपूर्ण मानवता के लिए है। आधुनिक वैज्ञानिकता, भौतिकता और विषमताओं के विधि चित्रण प्रस्तुत करके भी प्रसाद स्वाभाविकता और प्रकृति के मर्म से कटने का दर्द ही व्यक्त करते हैं। दूसरों को हँसते देख सदैव प्रसन्न रहने की सीख देने वाली ''श्रद्धा'' समरसता का मार्ग प्रशस्त करती हुई मानव जाति की चतुर्दिक उन्नति की कामना करती है। हृदय की वृतियों का विस्तार कर जीवनी शक्ति का विकास करने की प्रेरणा देने वाला यह आशावादी आनन्द के चरम शिखर पर पहुँचना और पहुँचाना चाहता है-

विधाता की कल्याणी सृष्टि
सफल हो इस भूतल पर पूर्ण
पटें सागर, बिखरें ग्रह-पुंज
और ज्वालामुखियाँ हों चूर्ण,

शक्ति के विद्युत्कण जो व्यस्त
विकल बिखरे हैं, हो निरूपाय,
समन्वय उसका करें समस्त
विजयिनी मानवता हो जाए।

8.5.3 प्रेम-व्यंजना

प्रसाद को यौवन और प्रेम सौन्दर्य की लहरियों का अत्यंत संयमी कवि कहा जाता है। यों तो पूरे छायावाद में ही प्रणय भावना का प्राधान्य रहा है और उसमें कवि की निजी भावात्मक दृष्टि मुख्य रही है। छायावाद की विशेषता रही है कि संस्कारशीलता के कारण उनकी प्रणयाभिव्यक्ति एक झीने आवरण में लिपटी रही है और उसने लाक्षणिक भाषा शैली में अभिव्यक्त पायी। प्रेम के आलम्बन के प्रति व्यक्त इनकी अनुभूति अत्यंत आन्तरिक, हार्दिक, सूक्ष्म एवं उदात्त बन कर उभरती है। प्रसाद के साहित्य में भी आदि से अन्त तक इसी प्रेम का स्वर थिरकता है। प्रेम का स्वच्छन्द रूप उसे एक पृथक भाव भूमि देता है तो समाज को एक व्यापक दृष्टि भी प्रदान करता है-

इस पथ का उद्‌देश्य नहीं है श्रांत भवन में टिक रहना,
किन्तु चले जाना उस हद तक जिसके आगे राह नहीं।

हे जन्म-जन्म के जीवन साथी संसृति के दुख में
पावन प्रभात हो जावे जागो आलस के सुख में
जगती का कलुष आपावन तेरी विदग्धता पावे
फिर निखर उठे निर्मलता यह पाप-पुण्य हो जावे।

''कामायनी'' में प्रसाद प्रेम के तीनों रूपों राजस, तामस और सात्विक को अंकित करते हुए ''प्रेम'' और ''वासना'' की विस्तृत मीमांसा भी करते हैं। ''इड़ा'' वहाँ राजस प्रेम की प्रतीक है, ''मनु'' तामस प्रेम के और ''श्रद्धा'' सात्विक प्रेम की प्रतीक है।

वास्तव में कवि प्रसाद के लिए प्रेम जीवन का अत्यंत पावन, आलोकमय स्वस्थ और उदात्त उपकरण है। तभी तो वे इस उदात्त वृत्ति के संदर्भ में कहते हैं- ''जिसके प्रकाश में सकल कर्म बनते उज्जवल उदार।'' प्रेम में वह शक्ति है जिससे संसार का समस्त कलुष पुण्य में परिणत हो जाता है। ''प्रेम-पथिक'' इस मार्ग से आनन्द शिखर पर पहुँच जाता है। स्वार्थ से उठकर प्रेती आत्मोत्सर्ग की उच्च भूमि पर आसीन हो जाता है। सर्वोत्तम-समर्पण का यही दूसरा नाम है। ''पागल रे वह मिलता है कब, उसको तो देते ही हैं सब''- कहकर कवि आत्मदान के आदर्श की ओर संकेत करता है। ''प्रेम-पथिक'' ''लहर'' ''झरना'' और आँसू सभी में प्रसाद की उदात्त प्रेम दृष्टि के उज्ज्वल पक्ष के दर्शन होते हैं। वियोग प्रेम की कसौटी है। संयोग के मादक क्षणों की स्मृतियों का मधु प्रेमी पीता है।

खिंच जाये अधर पर वह रेखा,
जिसमें अंकित हो मधु-लेखा,
जिसको वह विश्व को देखा,
वह स्मिति का चित्र बना जा रे।
मेरी आँखों की पुतली में तू।
बन कर प्राण समा जा रे।

-लहर

प्रसाद के प्रेम वर्णन में शील, संयम और शिष्टाचार का बाँध कभी नहीं टूटता। उनका प्रेम दिव्य और उदात्त रूप में ढल कर आध्यात्मिकता की प्रतीति करता है। ''प्रेम-वेणु की लहरी में जीवन-गीत सुना जाओ'' की कामना करता हुआ कवि प्रेम को मानवीय रूप देकर भी स्वर्गिक बना देता है। लौकिक सौन्दर्य से अलौकिक लावण्य की ओर अग्रसर प्रसाद के

प्रेम में अनुभूति-प्रवणता है।'' वे कुछ दिन कितने सुन्दर थे, जब सावन धन सघन बरसते थे, इन आँखों की छाया भर थे'' कहकर अपने विगत का स्मरण करने वाला स्मृति-प्रेमी अतीत की गलियों में प्रेमी को खोजता-ढूढँत है। विरह भावना के वर्णन में प्रसाद पर सूफियों के प्रेम प्रभाव को भी देखा जा सकता है-

छिल छिल कर छाले फोड़े,
मल मल कर मृदुल चरण से,
धुल धुलकर वह रह जाते,
आँसू करुणा के कण से।

-आँसू

कामायनी में प्रसाद काम और रति जैसी प्रेम की मूल प्रवृत्तियों को अत्यंत व्यापक धरातल प्रदान कर प्रणय भावना संबंधी अपनी नवीन दृष्टि का परिचय भी देते हैं। वास्तव में छायावाद युग ही प्रणय भावना के अत्यंत प्रगाढ़ और आवेशमय रूप का युग था। स्त्री सामाजिक स्वतंत्रता हासिल कर रही थीं। स्वच्छन्द वातावरण और इस इन्द्रजालिक परिवेश में मनु और श्रद्धा का प्रथम मिलन हृदय को पटल पर खोलता चला जाता है-

मधु बरसती विधु किरन हैं काँपती सुकुमार।
पवन में है पुलक मंथर, चल रहा मधुमार।
तुम समीप, अधीर इतने आज क्यों हैं प्राण
छल रहा है किस सुरभि से तृप्त होकर प्राण।

-कामायनी

स्पष्ट है कि प्रसाद का यह प्रेम दो हृदयों के पावन मिलन का प्रतीक है, जिसमें एक दूसरे का व्यक्तित्व अपनी पृथक सत्ता खो देता है। चेतना के इस उज्ज्वल वरदान के सहारे प्रेमी प्रणयी जीवन की उच्चतम भूमि तक पहुँच जाते हैं। संपूर्ण मानवता इसमें समा जाती है-

किन्तु न परिमित करो प्रेम
सौहार्द विश्वव्यापी कर दो

-प्रेम पथिक

अतः प्रसाद का प्रेम वर्णन मनोविज्ञान और दर्शन के मिश्रित आदर्श की स्थापना करता हुआ नारी को श्रद्धा की साकार प्रतिमा बना देता है। वह शक्तिमयी छाया शीतल बनकर अपने दिव्य रूप में चित्रित होती है। नारी और पुरुष को परस्पर पूरक मानने और स्थापित करने वाले प्रसाद ने प्रेम को घनीभूत करने वाले दृष्टिगत, शीलगत एवं मानसिक, तीनों ही प्रकार के सौंदर्य का हृदयस्पर्शी वर्णन अपने काव्य में किया है। ''आलिंगन में आते-जाते, मुस्क्या कर जो भाग गया'', ''निधरक तूने ठुकराया जब, मेरी टूटी प्याली को'', ''अरे कहीं देखा है तुमने, मुझे प्यार करने वालों को'', ''धीरे से वह उठता पुकार, मुझको न मिला रे कभी प्यार'' - जैसी अनुभूतियाँ कवि को स्थूल से सूक्ष्म की ओर तथा सहज से उदात्त की ओर उन्मुख करती हैं। प्रसाद की ये प्रेम भावनाएँ ''मेरी आँखों की पुतली में, तू बन कर प्राण जगा जा रे'' कहती हुई मधुर प्रेम भावना का एक नवीन उत्कर्ष प्रस्तुत करती हैं।

8.5.4 सौंदर्य चेतना

छायावादी काव्य की एक अन्यतम विशेषता है रूप सौंदर्य के दायरे से निकलकर मानस सौंदर्य या आन्तर सौंदर्य पर दृष्टि को निबद्ध करना। यह सौन्दर्य प्रकृति, पुरुष, नारी, जगत तथा जीवन सभी का है। यों सौंदर्य मनुष्य मात्र के आकर्षण का केंद्र है। अतः कवि का उसके प्रति आकर्षित होना तो सहज स्वाभाविक ही है। छायावादी कवियों को तो कल्पना और सौन्दर्य लोक का ही कवि कहा जाता है। तभी तो प्रसाद सौंदर्य लोक की ओर उन्मुख होकर कहते हैं-

ले चल मुझे भुलावा लेकर मेरे नाविक धीरे-धीरे
जिस निर्जन में सागर-लहरी

अम्बर के कानों में गहरी
निश्चल प्रेम कथा कहती हो तो तज कोलाहल की अवनी रे,

वास्तव में प्राचीन कवियों की शक्ति अन्तर्जगत के सौन्दर्य को अनावृत करने में उस सीमा तक नियोजित न हो सकी जितनी स्थूल शारीरिक सौन्दर्य के चित्रण पर। जबकि छायावादी कविता मानस-जगत के सौंदर्य के चित्रण में विशेष रूप से प्रवृत्त हुई। छायावाद के ये सौन्दर्य चित्र अनुभूति और कल्पना से प्रेरित हैं तथा अपूर्व और अनिर्वच-सौन्दर्य के प्रति विशेष रूप से सचेष्ट थी। उसमें ससीम और असीम दोनों सौंदर्यों के प्रति जिज्ञासा भी है और कौतूहल भी। यहाँ हम सरस्वती पुत्र महाकवि प्रसाद की सौन्दर्य चेतना पर विचार करते हुए उनके प्रकृति सौन्दर्य, नारी भावना का सौन्दर्य और गीति-सौन्दर्य पर विशेष रूप से दृष्टिपात करेंगे। शिल्प एवं संरचना के सौन्दर्य पर आगे विचार किया जा सकेगा। तो सर्वप्रथम हम प्रसाद के प्रकृति सौंदर्य का विवेचन करते हैं-

प्रकृति सौंदर्य

छायावादी काव्य में प्रकृति का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रहा है। प्रकृति मानव की चिर सहचरी रही है। प्रकृति मनुष्य के जीवन की बाह्य आवश्यकताओं की निरन्तर पूर्ति के साथ-साथ मनुष्य की आन्तरिक अनुभूतियों को भी प्रभावित, संस्कारित और रूपायित करती रही है। यही कारण है कि मनुष्य का प्रकृति से अत्यंत जीवन्त, सम्वेदनशील तथा स्पन्दशील सम्बंध रहा है। वास्तव में छायावादी काव्य वह काव्य है जिसमें मानव और प्रकृति के मध्य साम्य का एक सूक्ष्म तन्तु कवि था। प्रकृति को जीवन्त तथा प्राणवान मानने वाला कवि जीवन के हर्ष विषाद को उसी में देखता और ढूंढता है। उसे अलौकिक गुण सम्पन्न अनन्त सौन्दर्यमयी नारी के रूप में देखता है। महाकवि प्रसाद ने भी प्रकृति के प्रति अपनी प्रगाढ़ अनुराग की व्यंजना करते हुए सूक्ष्म शब्दचित्र प्रस्तुत किए हैं। प्रसाद कभी मन की अमूर्त लहरों को ''उठ उठ री लघु-लघु लोल लहर'' कहकर मूर्तिमान करते हैं तो कभी लहर की उठती-गिरती तड़पन में अपने प्रेमी हृदय की व्यथा को रूपायित करते हैं-

तब लहरों सा उठकर अधीर
तू मधुर व्यथा सा शून्य चीर
सूखे किसलय का भरा पीर।
गिरजा पतझड़ का सा समीर।

यही नहीं, मानव की गहराई में मन की गम्भीरता का प्रतिरूप भी प्रसाद देखते हैं। मन की धीर-गम्भीर तहों में कवि मानसरोवर की तरह प्रतिबिम्ब देखता है। इस शान्तभाव के मन में आन्दोलित अनुभूतियाँ मुखरित हो उठती हैं-

ओ री मानस की गहराई
ओ पारदर्शिका चिर चंचल
यह विश्व बना है परछाई।

गगन की नीलिमा में व्यक्ति के जीवन पर आच्छादित विषाद की नीलिमा का रूप देखते हुए प्रसाद दुख के प्रगाढ़ विस्तार में सुख की कौंध को, बादलों में कौंधती विद्युत सी मानते हैं।

प्रियतम के आगमन से नवीन स्फूर्ति आँखों में एक मादकता भर देती है पुष्प भी पंखुरिया खोलकर मकरन्द बिखेरने लगते हैं और हृदय के भाव बेकाबू होने लगते हैं-

फूलों ने पंखुरियाँ खोलीं
आँखें करने लगीं ठिठोली
हृदयों ने संभाली झोली
लुटने लगे विकल पागल मन।

इसी प्रकार-''अब जागो जीवन के प्रभात'' ''बीती विभावरी जाग री'' ''भुनती वसुधा तपते नग'', ''करूण गाथा गाती है, यह वायु बही जाती है'' ''वह लाज भरी कलियाँ अनन्त, परिमल घूँघट ढक रहा दन्त'' जैसी अनेकों पंक्तियाँ देखी जा सकती हैं जहाँ प्रकृति सौंदर्य की अनुपम छटा बिखरी है।

प्रसाद प्रकृति चित्रण का वर्ण्य, अवर्ण्य, रहस्यात्मक, दार्शनिक, मानवीकरण तथा अलंकरण आदि कई रूपों में एक साथ वर्णित करते हैं। कभी प्रकृति आलंबन बन जाती है तो उषा, रात्रि, बसंत, सरिता, दीप, सागर और झरनों का रूप लेकर उभरती है। ''अब जागो जीवन के प्रभात'' में कवि अरुण वर्ण उषा को वसुधा पर ओस के क्षोभ भरे 'हिमकण-अश्रु' बटोरती नायिका बना देता है। कभी प्रसाद सरिता को अभिसारिका बना देते हैं तो कभी कोमल-कुसुमों की मधुर रात को अपलक जगती नायिका।

प्रसाद, प्रकृति को उद्दीपन रूप में भी चित्रित करते हैं। अपने भावानुसार कवि प्रकृति को हँसते रोते भी देखता है-

लहरों ने यह क्रीड़ा चंचल
सागर का उद्वेलित अंचल
है पोंछ रहा आँखें छल छल
किसने यह चोट लगाई है।

वास्तव में प्रसाद प्रकृति को रहस्यात्मक, उपमान, प्रतीक, मानवीकरण, दार्शनिक तथा मनोवैज्ञानिक कई रूपों में प्रस्तुत कर अपनी सूक्ष्म कलात्मकता का परिचय देते हैं। प्रसाद की ''कामायनी'' और ''लहर'' तो प्रकृति के मानवीकरण से समृद्ध कृतियाँ हैं ही। जल-प्लावन के कम होने पर धरती जब थोड़ी ऊपर आ जाती है तो प्रसाद मानवीकरण का रमणीय-उदाहरण बना देते हैं-

सिंधु सेज पर धरा बधू अब
तनिक संकुचित बैठी सी
प्रलयनिशा की हलचल स्मृति में,
मान किये सी ऐंठी सी।

उपमान रूप में प्रकृति का प्रयोग तो प्रसाद की विशेषता है ही। इसके लिए ''नील-नलिन से नेत्र चपल मद से भरे'', ''मकरंद मेघ माला सी वह स्मृति मदमाती आती'', ''ज्वालामुखी विस्फोट के भीषण'', ''प्रथम कंप सी मतवाली'', ''खिला हो ज्यों बिजली का फूल'' आदि कई उदाहरण देखे जा सकते हैं। अतः कह सकते हैं कि प्रसाद का काव्य प्रकृतिमय ही है। विभिन्न रूपों में प्रकृति इनके काव्य को अनुरंजित करती हैं। प्रसाद के काव्य की शोभा वृद्धि का मुख्य उपकरण प्रकृति ही बनती है।

नारी भावना का सौंदर्य

छायावाद की सबसे बड़ी विशेषता है नारी के बाह्य अथवा नख-शिखा वर्णन से हट कर उसकी अन्तरात्मा की शक्ति पर दृष्टि को केंद्रित करना। प्रसाद तो नव्यतम नारी भावना की उदात्त कल्पना का आदर्श रखने में सबसे आगे रहे हैं। प्रिया का स्पर्श भी उन्हें अलौकिक माधुर्य प्रदान

करता है। पंत की सौन्दर्यानुभूति को प्रिया के सम्मुख त्रिभुवन की श्री को भी फीका महसूस करती है-

मूंद पलकों में प्रिया के ध्यान को,
थाप ले अब हृदय इस आह्लाद को,
त्रिभुवन की भी तो श्री भर सकती नहीं,
प्रेमसी के शून्य-पावन स्थान को

प्रसाद जी इसी प्रकार नारी के आन्तरिक सौन्दर्य पर ध्यान देते हुए उसके हृदय की सुकुमारता, दयाशीलता, क्षमाशीलता तथा ममता आदि गुणों पर स्वयं को न्योछावर कर देते हैं। नारी का बाह्य सौन्दर्य उन्हें आकर्षिक करता है पर उसकी आन्तरिक दीप्ति का प्रभाव आकर्षक को अलौकिक बना देता है। नारी ने इस युग के कवि को अपनी बहुविध शक्तियों से इतना अभिभूत कर दिया कि वह उसमें दिव्य और अतीन्द्रिय सौन्दर्य देखने लगा। निराला के ''तुलसीदास'' में भी ऐसी ही नारी है जहाँ उसका तेजस्वी प्रोज्ज्वल रूप उभरता है। प्रसाद नारी के उर में उषा का आवास देखते हैं तो उसके स्वभाव में चाँदनी की शीतलता। प्रसाद की कामायनी नारी के इसी आंतरिक सौन्दर्य का उत्कृष्ट उदाहरण है-

मनु ने देखा कितना विचित्र। वह मातृ मूर्ति थी विश्वमित्र

x x x

तुम देवि आह कितनी उदार, यह मातृ मूर्ति है निर्विकार
हे सर्वमंगले। तुम महती सबका दुख अपने पर सहती,
कल्याणमयी वाणी कहती तुम क्षमा निलय में हो रहती।

यों प्रसाद ने नारी के बाह्य रूप के उदात्त-आकर्षक के अभिनव सौन्दर्य को भी चित्रित किया है। इस दिव्य और आह्लाद्कारी रूप पर कवि मुग्ध होकर कहता है-

लावण्य शैल राई-सा
जिस पर वारी बलिहारी
उस कमनीयता कला की
सुषमा थी प्यारी-प्यारी।

समस्त सौन्दर्य वर्णन में सौन्दर्य के सूक्ष्मातिसूक्ष्म पक्षों का आलेख नहीं छायावादी काव्य की विशिष्टता है। कभी कवि ''मुख-चन्द्र चाँदनी जल से, मैं उठता था मुँह धो के'' जैसी अनुभूतियों से गुजरता है तो कभी महसूस करता है-

घन में सुंदर बिजली-सी,
बिजली में चपल चमक सी
आँखों में काली पुतली,
पुतली में श्याम झलक सी,

इसी प्रकार कवि ''नील परिधान बीच सुकुमार'', ''खिल रहा मृदुल अधखुला अंग'' में नायिका के अंगों की कान्ति, कोमलता, सिहरन, कम्पन और पुलकन आदि के दर्शन भी करता है। वास्तव में प्रसाद की नारी भक्तिकाल के भक्त या सन्त कवियों की नारी से पूर्णतः भिन्न सौन्दर्य और प्रेम की प्रतिमा है। जिसकी काँत छाया में थके पथिक के हृदय से ग्लानि और अपराध-बोध घुल जाते हैं। वह कल्याणी, मंगलकारिणी, पथ-प्रदर्शिका नारी श्रद्धेय ही नहीं, साक्षात 'श्रद्धा' का अवतार है-

नारी तुम केवल श्रद्धा हो, विश्वास रजत नग पग तल में
पीयूष स्रोत सी बहा करो, जीवन के सुन्दर समतल में।

स्नेह, दया, करुणा, क्षमा, त्याग, समर्पण, ममता आदि गुणों की अजस्र धारा बनी नारी, जो सुख को विस्तृत कर किसी को भी दुखी नहीं देखना चाहती, जो प्रेयसी, पत्नी और माता के रूप में

पुरुष की शुष्कता को मिटा कर अपनी आर्द्र कृपा से सिंचित करती है, जो अपने वक्षस्थल पर संसृति के ज्ञान-विज्ञान को एकत्रित कर अपने हाथों में कर्म-कलश लेकर वसुधा को जीवन रस के सार से उपकृत करती है, वह नारी पूज्या है। उसके इस स्वरूप को विस्मृत करना अपराध ही नहीं, पाप भी है। इसी तथ्य को प्रसाद बार-बार उजागर कर समस्त संसार को जागृत भी करते हैं।

काम मंगल से मण्डित श्रेय,
सर्ग, इच्छा का है परिणाम।
तिरस्कृत कर उसको तुम भूल,
बनाते तो असफल भव धाम।

अतः स्पष्ट है कि प्रसाद ने नारी को पूर्णतः नवीन, पृथक एवं विशिष्ट भूमिका पर प्रतिष्ठित किया है। यह भूमिका दिव्य है, ज्योतिर्मय है, महान प्रेरणा का अजस्र स्रोत है, शक्ति पुंज और कल्याणकारी है।

गीति सौंदर्य

गीति काव्य गीत शैली का नव्यतम विकास है और आधुनिक हिंदी काव्य के स्वच्छन्दतावादी गीतों के लिए गढ़े गए पाश्चात्य शब्द ''लिरिक'' का पर्याय ही प्रगति है। गीति वस्तुतः अभिव्यक्ति की वह अवस्था है जब मन में स्थित भाव स्वयं में समा नहीं पाता और विश्व के सम्मुख प्रकट होने को आकुल- व्याकुल हो उठता है। हृदय का सहज उच्छलन अभिव्यक्ति पा जाता है, जिसमें लय, गति, ध्वनि और गुंजन समा जाते हैं। उसमें वैयक्तिकता और आवेशमयता से मुक्त आत्मोद्‌गार अभिव्यक्त होते हैं। भावों का सहज प्रवाह रूपायित होता चला जाता है। प्रसाद के काव्य में भी इस छायावादी विशेषता के पर्याप्त दर्शन होते हैं। प्रसाद के झरना, लहर और आँसू तो गीति काव्य के अन्यतम उदाहरण ही हैं। छोटे और लम्बे गीतों से सुसज्जित प्रसाद का गीतिकाव्य वास्तव में सच्ची भाव सृष्टि का ही परिणाम है, जिसमें शब्द-अर्थ तथा उपमान और प्रतीकों का मधुर लय से बराबर योग रहता है। इन गीतों में सौन्दर्यीकर्षण, प्रणय-निवेदन, अतृप्ति, वेदनानुभूति तथा जीवन की मार्मिक व्यंजना सहज ही मिलती है-

वे कुछ दिन कितने सुन्दर थे
जब सावनघन सघन बरसते
इन आँखों की छाया भर थे।
x x x
निज अलकों के अंधकार में
तुम कैसे छिप जाओगे
इतना सहज कुतूहल ठहरो
यह न कभी बन पाओगे।

प्रसाद जी के गीति-काव्य सृजन में भाव प्रधान, विचार-प्रधान, प्रकृति-प्रधान, रहस्य प्रधान तथा जीवन दर्शन प्रधान गीतों का अपार भंडार है जिसमें आत्मोद्‌गारों की सहज-अभिव्यक्ति हुई है। भारतीय इतिहास एवं राष्ट्रीय स्वर को मुखर करने वाले गीतों में तो प्रसाद निपुण हैं ही। जीवन की विशद्‌ता के इन उदात्त भावों के 'पेशोला की प्रतिध्वनि' तथा 'वरुणा का शांत कछार', में देखा जा सकता है।

''झरना'' का कवि यौवन के द्वार पर खड़ा जीवन के अनेक झंझावतों को देखता है। झरने की झर-झर बहती स्वच्छन्द गति उसे निर्झर गीतों में बहा ले जाती है। ''आँसू'' गीतिकाव्य

के वैभव से समृद्ध कृति है। कवि पूरी मार्मिकता से अपने अन्तरस की पीड़ा को गीतों के स्वर में पिरो देता है। कवि की व्यक्तिगत वेदना समस्त मानव जाति की वेदना बन जाती है-

इस व्यथित विश्व पतझड़ की
तुल जलती हो मृदु होली
हे अरुणे सदा सुहागिनि
मानवता सिर की रोला।

वास्तव में झरना के गीत जिस प्रणय भावना की ओर संकेत करते हैं, उसी का विकास आँसू है। लहर तक आते-आते प्रसाद के प्रगीतों की प्रौढ़ स्वरूप उभरता है। 'बीती विभावरी जाग री' में तो संगीत की लहरियाँ ही बिछती चलती हैं। इसी प्रकार ''मेरी आँखों की पुतली में, तू बन कर प्राण समा जा रे'', ''उस दिन जब जीवन के पथ में, छिन्न पात्र ले कम्पित कर में'', ''उठ-उठ री लघु-लघु लोल लहर'' तथा ''निधरक तूने ठुकराया तब, मेरी टूटी प्याली को'', जैसी कई कविताएँ इस संगीतमयी अनुभूति को अत्यंत प्रभावी ढंग से प्रकट करती हैं।

प्रसाद की गीत-सृष्टि की आरंभिक स्थिति किंचित शिथिल और मन्थर है। झरना के गीतों में अनुभूति की प्रवणता तो है किन्तु उसका प्रकाशन असाधारण नहीं बन पाता। जबकि 'लहर' और 'आँसू' में मनोरम कल्पना तथा प्रौढ़ अभिव्यक्ति देखने को मिलती है। काव्य और दर्शन का अद्‌भुत समन्वय लहर के गीतों की प्रमुख विशेषता है। आख्यानक गीतों में भी सौन्दर्य का मादक वातावरण जीवित रखने का प्रयास कवि ने किया है। झरना में कवि किरण को सम्बोधित करता है, तो भी प्रेम और सौन्दर्य की सरस भावना गीति में ढल जाती है-

धरा पर झुकी प्रार्थना सदृश, मधुर मुरली सी फिर भी मौन,
किसी अज्ञात विश्व की विकल, वेदना दूती सी तुम कौन।

प्रसाद के गीतों में प्रणय के विभिन्न व्यापार रूपायित होते हैं तो स्वस्थ जीवन दर्शन की नियोजना भी होती है। अपने गीतों में वे करुणा और मधु का जीवन घोल भर कर समस्त मानवता को प्रदान करते हैं। ''भुनती वसुधा'', ''तपते नग, दुखिया है सारा अग जग'' जैसी अनुभूतियाँ कवि को मधु-रस वितरित करने की प्रेरणा देती है। संगीत, आत्माभिव्यक्ति अन्विति, भावावेग, रसाभिव्यक्ति तथा गागर में सागर भरने का गुण सभी कुछ प्रसाद के गीतों में मिलता है। कभी मधुप गुनगुना कर अपनी गीतात्मक कहानी सुना जाता है तो कभी ''आलिंगन में आते-आते मुस्करा कर भाग जाने वाले सुख की वेदना'' मुखर हो उठती है। प्रसाद के गीति सौन्दर्य को उनके नाट्य गीतों में भी देखा जा सकता है। वहां भी नाटककार प्रसाद पर उनका गीतिकार रूप प्रबल हो उठता है और वे ''भरा नैनों में मन में रूप , किसी छलिया का अमल अनूप'', ''तुम कनक किरण के अन्तराल में लुक छिपकर चलते हो क्यों?'', ''हिमाद्रि तुंग श्रृंग से, प्रबुद्ध शुद्ध भारती'' तथा ''अरुण यह मधुमय देश हमारा'' जैसे कितने ही मर्मस्पर्शी गीतों का सृजन करते चलते हैं। अतः कह सकते हैं कि प्रसाद की संगीत चेतना का वैशिष्टय असाधारण गीतों की सृष्टि करवाता है और भावावेग का मिश्रण उन्हें उत्कृष्ट रूप प्रदान करता है।

8.5.5 रहस्य एवं दर्शन

अन्वेषण और प्रणय निवेदन ही रहस्यवाद है तथा जीवन संबंधी तत्व चिन्तन ही सामान्यतः दर्शन कहलाता है। प्रसाद की संपूर्ण साधना की सिद्धि ''भूमा का सुख'' है। 'मैं' और 'मेरा' के संकुचित स्वार्थ के दायरे से दूर आनन्दमयी स्थिति तक पहुँचने का प्रयास ही शिवोपासक प्रसाद का प्रेम रहा है। जीवन के कठिन से कठिन पथ में भी हंसकर संघर्ष करना, मलिनता पर विजय पाना और जीवन को सुन्दरतम बनाना ही इस महाकवि का

जीवन संदेश कहा जा सकता है। मूलतः प्रसाद तत्वदर्शी थे और इसीलिए शैव, बौद्ध, शाक्त, वैष्णव तथा गांधी दर्शन के तत्वों को वे अपने काव्य में उजागर करते हैं। वेद, उपनिषद और पुराणों की दार्शनिक प्रणालियों का अवगाहन वे करते हैं तो पाश्चात्य दार्शनिक अवधारणाओं से भी अनभिज्ञ नहीं रहते। कामायनी में प्रसाद वैदिक एकेश्वरवाद की परम-शक्ति का सन्धान करते हुए नत-शिर उसी रहस्यमयी सत्ता का आदेश मानते जान पड़ते हैं-

सिर नीचा कर किसकी सत्ता
सब करते स्वीकार यहाँ
सदा मौन हो प्रवचन करते
जिसका वह अस्तित्व कहाँ?

वेदों में प्राकृतिक प्रतीकों के माध्यम से ईश्वरीय सत्ता की प्रतीति करायी गयी है। इसी दिव्य अनुभूति की झलक प्रसाद काव्य में जगह-जगह मिलती है। ईश्वर की अवर्णनीय और रहस्यपूर्ण सत्ता समस्त भौतिक जगत में भी परिव्यप्त है, जिसका अनुभव तो होता है पर दर्शन नहीं-

''हे अनन्त रमणीय कौन तुम? यह मैं कैसे कह सकता।''

प्रसाद, छायावाद के ऐसे कवि हैं जिन पर शैव-दर्शन का अत्यंत गहरा और गम्भीर प्रभाव है। यों प्रसाद की ब्रहम, जीवन, आत्मा विषयक धारणाएं उपनिषदों के ब्रह्मवाद और अद्वैतवाद पर ही आधारित है पर उनकी इस अद्वैतवादी धारणा पर भी उनके सामरस्य सिद्धांत की अपेक्षा शैव दर्शन का प्रभाव अधिक है। इसमें भी काश्मीरी प्रत्यभिज्ञा दर्शन का प्रसाद जी पर विशेष प्रभाव है। इस दर्शन के अनुसार शिव (कल्याण) ही एक मात्र तत्व है और शेष सभी कुछ इसी से अभिव्यक्त है। यही शिव आत्म तत्व या चैतन्य स्वरूप है। यह शिव जड़-जगत सभी में विद्यमान है। परम शिव ही पूर्ण आनन्द स्वरूप है- ''लीला का स्पन्दित आह्लाद वह प्रभापुंज चिद्मय प्रसाद''। 'श्रद्धा' कामायनी में यही पराशक्ति बनकर उभरती है। मनु को शिवलोक ले जाने वाली शक्ति भी श्रद्धा ही है। कामायनी में समरसता सिद्धान्त का प्रतिपादन भी अद्वैत सिद्धान्त पर ही आधारित है। इच्छा, कर्म और ज्ञान का सामरस्य ही पूर्णता दिलवाता है-

ज्ञान दूर कुछ, क्रिया भिन्न है
इच्छा क्यों पूरी हो मन की
एक दूसरे से न मिल सकें
यह विडम्बना है जीवन की।

प्रसाद का आनन्दवाद भी शैवागम से ही लिया गया है। कामायनी का साध्य भी यही है। श्रद्धा और इड़ा का समन्वय अपरिहार्य है। प्रसाद ने प्रेम-पथिक में प्रेम का पवित्र और आध्यात्मिक स्वरूप उपस्थित करते हुए पाश्चात्य दर्शन की विचारधारा को भी स्वीकारा है- ''किंतु पहुँचना उस सीमा तक, जिसके आगे राह नहीं'' जैसी पंक्तियों में ऐसा देखा जा सकता है।

परम सत्ता में प्रसाद जी का पूरा विश्वास है। वह सर्वव्यापी है, नाना रूपों में विद्यमान है। अनन्त, सर्वशक्तिमान तथा असीम है। तभी वे कहते हैं- ''हे विराट। हे विश्वदेव! तुम, कुछ हो ऐसा होता भान''।

यही नहीं ''आँसू'', ''लहर'' और ''झरना'' आदि काव्य कृतियों में भी कवि की एक विशिष्ट विचार-दृष्टि का भान होता है। ''पागल रे वह मिलता है कब, उसको तो देते ही हैं सब'' कहकर ये व्यक्ति को देने की सीख देते हैं। आनन्द की स्थिति वही है जहाँ समस्त सुख-दुःख मिल कर जीवन को सौन्दर्य प्रदान करते हैं। इसी प्रकार ''अरी वरुणा की शांत

कछार, तपस्वी को विराग प्यार'' जैसी कविताओं में बौद्ध दर्शन प्रभावी हो जाता है। कभी वसुधा चरण चिह्नों सी बन कर यहीं पड़ी रह जावेगी जैसी तात्विक उक्तियों से से उपनिषदों के विचार प्रसार का दायित्व निभाते हैं।

यों प्रसाद के दर्शन और रहस्यवादी चेतना पर अत्यंत विस्तार से चर्चा की जा सकती है किन्तु यहाँ निष्कर्षतः इतना ही कहना पर्याप्त है कि कवि का ध्येय मन की स्वाभाविक वृत्तियों का चित्रण करते हुए उन्हें अन्तर्मुखी बनाना और जीवन की समस्त जड़ता का अंत कर उसे आनन्दित करना है-

एक तुम यह विस्तृत भूखंड
प्रकृति वैभव से भरा अमंद।
कर्म का भोग भोग कर्म
यही जड़ चेतन आनन्द।

जीवन का मूल ही ''श्रद्धा''है। श्रद्धा के अभाव में ही विषमता जन्म लेती है। श्रद्धा से ही प्रेम और प्रेम से ही आनन्द मिलता है। कर्म के अभाव में जड़ता और निराशा छाती है। विरोधी शक्तियों का सामरस्य कल्याणकारी सिद्ध होता है। इससे भी आनन्द मिलता है। अतः समस्त जगत को अपनाकर अपने सुख को विस्तृत करने का यह दर्शन निश्चित ही महान है-

औरों को हंसते देखो मनु हँसो और सुख पाओ
अपने सुख का विस्तृत कर लो, जग को सुखी बनाओ।

बोध प्रश्न 2

1. प्रसाद-साहित्य की मूल-चेतना को स्पष्ट करने वाली प्रमुख काव्य-पंक्तियाँ कौन सी हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

2. प्रसाद की राष्ट्रीय चेतना पर उदाहरण सहित आठ पंक्तियाँ लिखिए।

.....

.....

.....

.....

3. प्रसाद की प्रेम व्यंजना पर पाँच-छह पंक्तियाँ लिखिए।

.....

.....

.....

.....

4. प्रसाद प्रकृति का मानवीकरण करने वाले अन्यतम-प्रतिभा के कवि हैं। उदाहरण सहित आठ-दस पंक्तियाँ लिखिए।

.....

.....

.....

.....

5. प्रसाद की नारी भावना का सौंदर्य उनकी उदात्त दृष्टि का सूचक है। सोदाहरण आठ पंक्तियों में स्पष्ट करें।

.....

.....

.....

.....

.....

6. प्रसाद की गीति योजना का सौन्दर्य अनुपम, अद्‌भुत एवं अप्रतिम है। आठ पंक्तियों में स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

7. प्रसाद का दर्शन विषय को सम बनाकर कल्याण-पथ पर ले जाने वाला समरसता का दर्शन है। सोदाहरण आठ-दस पंक्तियों में स्पष्ट कीजिए।?

.....

.....

.....

.....

8. प्रसाद की ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक चेतना पर आठ पंक्तियाँ लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

8.6 प्रसाद काव्यः शिल्प-विधान

महान कवियों का कला और शिल्प पक्ष भी उतना ही प्रौढ़ तथा सुगठित होता है जितना उसका काव्य। वास्तव में भावों और विचारों का प्रतिपादन कौशल ही कवि की अभिव्यंजना शक्ति का परिचय बनता है। भावों को वहन करने वाली भाषा तथा शैली कवि के भावावेग के अनुरूप ही ढलते चले जाते हैं। महाकवि प्रसाद ने भी काव्य शिल्प अथवा अभिव्यंजना कौशल के भाषा, शैली, कल्पना, प्रतीक, बिम्ब, अलंकार तथा छंद आदि सभी विधाओं का अत्यंत कुशलता से निर्वाह किया है। यहाँ हम महाकवि प्रसाद के इसी कौशल का अध्ययन करते हुए अभिव्यंजना कौशल के उपकरणों पर अलग-अलग विचार करेंगे। सर्वप्रथम हम खड़ी बोली को उत्कर्ष शिखर पर पहुँचाने वाले इस महाकवि के भाषिक-कौशल पर दृष्टि डालते हैं। साहित्यिक एवं परिमार्जित भाषा तथा प्रस्तुति की कलात्मक दृष्टि ने जिस महाकवि की एक विशिष्ट पहचान बनाई और जिसके नाम पर युग का नाम रखा गया उसकी विषयानुकूल भाषा तथा भाषिक अंगों का सार्थक प्रयोग कैसे रमणीय एवं प्रभावोत्पादक बनता है, यही अब हम देखेंगे।

8.6.1 भाषा सौंदर्य

छायावाद के प्रवर्तक तथा हिंदी काव्य जगत के महाकवि जयशंकर प्रसाद की काव्य भाषा शुद्ध साहित्यिक खड़ी बोली है। आरंभ में यह सहज और सरल है लेकिन ज्यों-ज्यों प्रसाद का अध्ययन बढ़ता गया और भावों में परिपक्वता तथा प्रौढ़ता आती गई त्यों-त्यों उनकी भाषा गम्भीर और परिष्कृत भी होती गई। मनोभावों के द्वन्द्व चित्रित करने तथा गम्भीर विषयों का विवेचन करने के लिए कवि संस्कृत गर्भित भाषा का बखूबी प्रयोग करता है। संस्कृत तथा वैदिक- पौराणिक साहित्य का गहन अध्ययन कवि को तत्सम शब्दावली की ओर उन्मुख करता है। एक-एक शब्द नगीने की भाँति जुड़ा हुआ है और इसी से एक विशिष्ट तथा अद्वितीय भाषा का निर्माण किया गया है। भावों और विचारों का सहज-अनुगमन करने वाली यह भाषा गति और क्रम के अनुसार ही बदलती, बहती और ढलती है। सूत्र भरे वाक्यों और संगीतमय गीतों में एक अद्‌भुत उन्माद है और यही उसका व्यावहारिक पक्ष है।

प्रसाद ने अपने प्रारंभिक साहित्य सृजन में ब्रजभाषा का भी अत्यंत आधिकारिक प्रयोग किया किंतु बाद में समय की अपेक्षा को महसूस करते हुए प्रसाद ने संधि–समास युक्त खड़ी बोली को अपनाया। समूचे भारतीय समाज के स्वच्छन्दतावादी दौर से जुड़ी प्रसाद की इस भाषा पर रवीन्द्रनाथ टैगोर के पद-चयन की झलक भी है तो परोक्षतः गुजराती और मराठी के स्वच्छन्दतावादी कवियों के साथ साधर्म्य भी। प्रसाद की भाषा में 'बीती विभावरी जाग री', अरे कहीं देखा है तुमने, मुझे प्यार करने वालों को' तथा 'उज्वल गाथा कैसी गाऊँ मधुर चाँदनी रातों की' जैसी पंक्तियाँ ही 'माधुर्य गुण' का उदाहरण नहीं। 'आँसू' और 'कामायनी' के भी अनेकों उदाहरण देखे जा सकते है। चित्त को स्फूर्ति से उत्तेजित करने की विशेषता 'ओज गुण' की है। प्रसाद ने ओज गुण सम्पन्न भावों को भी कविता की डोर में कुशलता से पिरोया है।

ऊर्जस्वित रक्त और उमंग भरा मन था
जिन युवकों के मणिबन्धों में अबन्ध बल
इतना भरा था
जो उलटता शताध्वनियों को
गोले जिनके थे गेंद
अग्निमयी क्रीड़ा थी।

इसी प्रकार ''हिमाद्री तुंग श्रृंग से'' जैसी कविता भी देखी जा सकती है। ''मेरी आँखों की पुतली में तू बनकर प्राण समा जा रे।'' जैसी पंक्तियों में 'प्रसाद गुण' भी देखा जा सकता है।

वास्तव में प्रसाद की भाषा श्रम और साधना की भाषा है। ब्रजभाषा की ललित, मधुर और रस सिक्तता भरी प्रकृति की प्रतिस्पर्धा में प्रयुक्त इस भाषा को सुन्दर एवं स्वीकृत काव्य भाषा बनाने का श्रेय प्रसाद तथा अन्य छायावादी कवियों को ही जाता है। छायावाद से पूर्व खड़ी बोली अपना स्थान बनाने तो लगी थी किन्तु सौन्दर्य, सरसता, सुकुमारता, अर्थव्यंजकता तथा ध्वन्यात्मकता आदि गुणों से खड़ी बोली को समृद्ध करने का श्रेय छायावादी कवियों को, और विशेषतः प्रसाद को ही जाता है। आगे चलकर चारुता और कोमलता के गुणों से पंत जी ने इस भाषा को अपार समृद्धी दे कर सुसज्जित किया।

प्रसाद ने अपनी भाषा में तद्भव, देशज और ग्रामीण शब्दों का प्रयोग लगभग न के बराबर किया है। वे तो भाषा को कलात्मक और आभिजात्य आदि प्रवृत्तियों से समृद्ध करते रहे। प्रसाद ने काव्य-माधुर्य के लिए नए-नए शब्द भी गढ़े। उनमें चमक भी पैदा की। गढ़-घिस कर उन्हें भावों के अनूकुल ढाला। स्वप्निल, स्वर्णिम, निधरक, मुस्कया, तन्द्रिल, उर्मिल जैसे शब्द इसी का प्रमाण हैं। सन्धि-समास आदि नियमों की अवहेलना भी आवश्यकतानुसार की है। रोमाण्टिक कवियों के प्रभाव स्वरूप अंग्रेजी शब्दों के आधार पर नए हिंदी शब्द भी तैयार किए- भग्न-हृदय (ब्रोकन हार्ट), स्वर्गीय प्रकाश (हेविनली लाइट) तथा स्वर्णिम स्वप्न (गोल्डन ड्रीम) जैसे प्रयोग छायावाद में जगह-जगह देखे जा सकते हैं।

प्रसाद की भाषा में शब्द की तीनों शक्तियों का प्रयोग भी सराहनीय है। 'मधुर माधवी संध्या में जब रागारुण रवि होता अस्त' में अभिधा देखी जा सकती है। **''गोले जिसके थे गेंद, अग्निमयी क्रीड़ा थी'', ''अरी रण रंगिनी, सिक्खों के भौर्य भरे जीवन की संगिनी'', ''सो रहा पंचनद आज उसी शोक से'', ''नतमस्तक हुआ आज कलिंग'' तथा ''रानी तू वन्दिनी हो मेरी प्रार्थनाओं में''**- जैसे कई उदाहरण दिए जा सकते हैं जिनमें 'लक्षणा शक्ति' मुखरित होती है। मोटे अक्षरों में लिखित शब्द यहाँ मुख्यार्थ में बाधा डाल किसी अन्य अर्थ का संकेत कर रहे हैं। इसी तरह अभिधा और लक्षणा से भी आगे चलकर जो अभिप्राय स्पष्ट हो वहाँ 'व्यंजना शक्ति' होती है। **'और आकाश को पकड़ने की आशा में, हाथ ऊँचा किये सिर दे दिया अतल'** में जैसी पंक्तियों में इसे देखा जा सकता है।

प्रसाद के गीतों में वाक् वैदग्ध्यपूर्ण उक्तियों के माध्यम से वक्रता के भी सुंदर उदाहरण प्रस्तुत हुए हैं। सीधी सरल उक्तियों में वक्रोक्ति एक विशेष अर्थ भर देती है। प्रसाद इस कला में अत्यंत निपुण हैं- ''तपस्वी के विराग की प्यार'' तथा ''दूध भरी दूध सी दुलार भरी माँ की गोद'' आदि पंक्तियों में प्रसाद जी की यह कलात्मकता भी देखी जा सकती है।

प्रसाद काव्य की भाषा का एक अन्य वैशिष्ट्य है 'वर्ण-संगीत' का प्रभावी प्रयोग। वर्ण-संगीत प्रसाद जी के प्रगीतों का प्राण तत्व है। ''खग कुल कुल कुल सा बोल रहा'', ''उठ-उठ री लघु-लघु लोल लहर'' जैसे कई प्रयोग इसका प्रमाण हैं। प्रसाद जी ने अपने काव्य में मुहावरे लोकोक्तियों का प्रयोग बहुत कम किया है किन्तु फिर भी यह काव्य इनके सौन्दर्य से वंचित नहीं। ''कौड़ी के मोल बेचना'', आकाश का पकड़ना'', ''जीवन का दाँव हारना'', ''डोरी से ऐंठना'' आदि मुहावरों का प्रयोग दृष्टव्य है-

कौड़ी के मोल बेचा जीवन का मणि कोष
और आकाश को पकड़ने की आशा में
हार बैठे जीवन का दाँव, जीतते जिसको मर कर वीर।
और निरूपाय मैं तो ऐंठ उठी डोरी सी।

प्रसाद जी की भाषा में कुछ सृजनात्मक अशुद्धियाँ या दोष देखे जा सकते हैं किन्तु यह स्पष्ट होना चाहिए कि ये दोष अनायास अथवा अनजाने में नहीं आते। सृजन और भावों का आवेग भाषा के स्वरूप को इस कदर बदल देता है कि लय और गति तथा संगीत और माधुर्य भाषिक नियमों पर हावी हो जाते हैं। बहुत सी जगह भावान्विति के कारण प्रसाद के वाक्य अधूरे ही जान पड़ते हैं और लिंग संबंधी दोष तो कई दिखाई देते हैं। 'आँख बंद

कर लिया सोते', 'काली आँखों की तारा का' तथा 'शिशर कला की शीत स्रोत' आदि ऐसे ही उदाहरण हैं। परन्तु कई स्थानों पर यह दोष है नहीं, जान पड़ता है। जैसे, प्रेयसी को प्रसाद पुरुषवाचक सम्बोधन से संबोधित करते हैं- ''कौन हो तुम वसन्त के दूत'' या ''फिर कह दोगे पहचानों तो मैं हूँ कौन बताओ तो'' आदि प्रयोगों में ऐसा देखा जा सकता है। पर स्पष्ट हो कि ये प्रयोग दोष नहीं। ये प्रयोग तो स्व-पर की भावना से ऊपर उठकर प्रेयसी को एक प्राणी मात्र समझकर किये गए प्रयोग हैं। इन्हें दोष नहीं कहा जा सकता। कहीं-कहीं अस्पष्टता-दोष अवश्य ही देखा जाता है, किन्तु वे सब इस प्राणवान काव्य भंडार के समक्ष नगण्य ही कहे जा सकते हैं। कुल मिलाकर प्रसाद की काव्य भाषा हिंदी साहित्य की गरिमा मंडित भाषा है। शक्तिमयी तथा प्राणवान भाषा का ऐसा दूसरा उदाहरण छायावाद से बाहर भी कहीं नहीं है।

8.6.2 शैलीगत नवीनता

प्रसाद की शैली प्रसादत्व से मंडित एक चिन्तक कवि की अपूर्व-शैली है। अभिज़ात-गरिमा से समृद्ध कवि की शैली में संगीत और लय का सामंजस्य है। लालित्य और वर्णों की भास्वरता तथा पदों के अनुसरण में मिलने वाली हल्की मिठास काव्य में एक मंजुल गूँज पैदा करते हैं। उनकी शैली में निराला की शैली का सा वैविध्य तो नहीं, पर प्रसाद के गम्भीर व्यक्तित्व की छाप इस शैली को एक विशिष्ट पहचान देती है। शवत और चिरंतन भावों-विचारों को वहन करने वाली भाषा तथा नव्यतम-रूप में ढाल कर प्रस्तुत करने वाली यह सौंदर्यमयी शैली एक 'अमर-संदेश' बनती है। प्रगीत के भावात्मक आवेशों को संगीत की पृष्ठभूमि पर थिरकाना तथा प्रेम पूर्ण-श्रृंगार के गीतों में उपालम्भ-शैली को भी क्रमशः ''उठ-उठ री लघु-लघु लोल लहर'' और ''मेरी आँखों की पुतली में तू बन कर प्राण समा जा रे'' में देखा जा सकता है। ''अरी वरुणा की शान्त कछार'' जैसी पंक्तियों में वर्णनात्मक-शैली है तो ''शेरसिंह का शस्त्र-समर्पण'', ''पेशोला की प्रतिध्वनि'' और ''प्रलय की छाया'' आदि में आख्यानक शैली के उदाहरण भी मौजूद हैं। ''मधुप गुनगुना कर कह जाता, कौन कहानी यह अपनी'' कविता में आत्मकथात्मक-शैली के दर्शन भी किए जा सकते हैं।

प्रसाद ने छोटे और लम्बे-दोनों प्रकार के गीत लिखे हैं। ''टेक'' की पंक्ति अपेक्षानुसार छोटी-बड़ी होकर गीत के सौन्दर्य में वृद्धि करती है। प्रसाद जी की ''चतुर्दशपदी'' का सुंदर प्रयोग भी शैली में चार-चाँद लगाता है। ''निज अलकों के अन्धकार में तुम कैसे छिप पाओगे'' इसका सुंदर उदाहरण है। अतः कह सकते हैं कि पदों में गम्भीर भाव भरकर संगीत तथा लय का विधान करना प्रसाद जी की शैली की मुख्य विशेषता है। देश-प्रेम की भावना से प्रभावित होकर वे वीर-रस भरी ओजमयी शैली अपनाकर मनमोहक शब्दचित्र बना देते हैं। उनका काव्य मुक्तक काव्य, प्रबन्ध काव्य, गीति काव्य, चम्पू काव्य और खंड-काव्य आदि कई रूपों में मिलता है। ''लहर'' और ''झरना'' गीतिकाव्य हैं तो ''कामायनी'' प्रबन्धकाव्य, ''करुणालय'' काव्य-रूपक है, ''उर्वशी'' चम्पू काव्य, तो ''आँसू'' खंड काव्य है। ''प्रेम-पथिक'' को भी लघु खंड काव्य कहा जा सकता है। अतः कह सकते हैं कि श्रृंगार, वीर, करूण, शान्त तथा वात्सल्य आदि के सुन्दर उदाहरणों से समृद्ध इस रसवादी कवि का समग्र काव्य चिन्ता, लज्जा, निर्वेद तथा काम आदि अमूर्त भावनाओं को मूर्त करने वाला महान एवं अद्वितीय शैली का काव्य है।

8.6.3 प्रतीक विधान

काव्य के अभिप्रेषित अर्थ का घोषित करने के लिए जो माध्यम बनते हैं वे प्रतीक कहलाते हैं। ये प्रतीक प्रकृति, संस्कृति समाज, इतिहास तथा लोकानुभवों से किए जाते हैं। प्रसाद ने भी काव्य-सौन्दर्य की श्री वृद्धि के लिए बहुत से प्रतीकों का आश्रय लिया। संगीत कला के वीणा, झंकार, तार, प्रभाती, भैरवी मूर्च्छना, विहाग तथा वंशी जैसे प्रतीक यहाँ हैं तो चित्रकला के चित्र, रंग, रेखा चितेरा, तूलिका आदि प्रतीक भी उपलब्ध हैं। मूर्तिकला के

मूर्ति, मूर्तिकार तथा पाषाण आदि प्रतीक भी देखे जा सकते हैं। प्रकृति के फूल, काँटा, उषा, संध्या, चाँद, निशा, कामधेनु, कल्पवृक्ष, चातक, घन, दीपक आदि सैकड़ों प्रतीक भी मिलते हैं। अतः प्रसाद काव्य में सार्वभौमिक, देहागत, परम्परागत, वैभक्तिक, युगीन तथा भावात्मक आदि सभी प्रतीकों के उदाहरण देखे जा सकते हैं। ''आँसू'' में प्रसाद के तम, प्रकाश नवज्योति तथा मंजुल-मोती जैसे प्रतीक जीवन्त भावों की मार्मिक अभिव्यक्ति करते हैं।

फिर तम प्रकाश झगड़े में
नव ज्योति विजयिनी होती
हँसता यह विश्व हमारा
बरसाता मंजुल मोती।

इसी प्रकार ''घन में सुन्दर बिजली सी, बिजली में चपल चमक सी'', ''सूखी-सी फुलवारी में, आये तुम इस क्यारी में'' प्रयोग भी द्रष्टव्य हैं जहाँ प्रतीक मुखरित हैं। ''झरना'' का एक उदाहरण देखिए जहाँ मलयानिल ''शीतलतम'' उजड़ी क्यारी (शुष्क-जीवन) तथा गुलाब (हृदय) आदि प्रतीक प्रयुक्त हैं-

मलयानिल की तरह कभी आ
गले लगोगे तुम मेरे।
फिर विकसेगी उजड़ी क्यारी,
क्या गुलाब की यह मेरे।

प्रसाद के तो 'आँसू' और 'कामायनी' प्रतीकों की भाषा में ही लिखे गए अन्यतम ग्रंथ है। ''इस करुणा कलित हृदय में, अब विकल **रागिनी** बजती'', ''पतझड़ था झाड़ खड़े थे, सूखे से **फुलवारी में'',** जैसी पंक्तियों में रागिनी (व्यथा के स्वर), पतझड़ (शुष्कता) और फुलवारी (हृदय) जैसी प्रतीक देखे जा सकते हैं। इसी तरह झंझा, बिजली, नीरद माला, मुरली, स्फुल्लिंग, माधवी, कुंज-छाया आदि प्रतीक भी दृष्टव्य हैं। कलियाँ सम्मोहन हैं, काँटे दुख हैं, आँधी हृदय की क्षुब्ध स्थिति है। प्रसाद की इस विपुल प्रतीक योजना ने मनोद शाओं का बहुत सुंदर ढंग से चित्रण किया है। ''लहर'' में भी प्राकृतिक प्रतीकों तथा प्रतीकात्मक अप्रस्तुतों का प्रचुर प्रयोग है। ''करुणा की नव अंगड़ाई सी'', ''तू भूल न री पंकज बन में'', ''उठ-उठ री लघु-लघु लोल लहर'' आदि कितने ही ऐसे प्रयोग हैं। कामायनी में तो प्रतीकों का प्रौढ़तम रूप ही देखा जा सकता है, जहाँ पात्र, सर्ग तथा कथा-क्रम भी प्रतीकात्मक हैं। मनु (मन या मनोमय कोश का जीव), श्रद्धा (हृदय), इड़ा (बुद्धि), मानव (नवमानव), देवगण (इन्द्रियाँ), त्रिलोक (भाव, कर्म और ज्ञानलोक) तथा कैलाश (आनन्दमय कोश) आदि इसी के उदाहरण हैं। अतः स्पष्ट है कि प्रसाद की प्रतीक योजना कवि के चिंतन एवं भाव व्यापार की कलात्मक पहचान बनती है।

8.6.4 बिम्ब विधान

काव्य सौन्दर्य के निर्धारक तत्वों में बिम्ब की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अंग्रेजी के ''इमेज'' शब्द का पर्याय है बिम्ब। इसका अर्थ है किसी वस्तु या पदार्थ का मनचित्र प्रस्तुत करना। इसे भावगर्मित शब्द चित्र भी कह सकते हैं। छायावाद में इसे चित्र विद्यान कहा गया है। अमूर्त को मूर्त करने की इस कला में प्रसाद बहुत निपुण हैं। भावों को स्थापित करने के लिए चित्रभाषा का कथात्मक प्रयोग करने वाले महाकवि प्रसाद ने बहुत से बिम्ब तैयार किए जिनमें उनकी स्वानुभूति, संस्कार, अध्ययन तथा जीवनानुभवों की स्पष्ट झलक मिलती है। इन बिम्बों में **शब्द** बिम्ब भी हैं। वर्ण बिम्ब भी हैं और व्यजंन प्रवण सामाजिक बिम्ब भी। अमूर्त को मूर्त बनाने की कथात्मक उपलब्धि प्रसाद के ''कामायनी'' जैसे महाकाव्य में सहज ही हो जाती है। ''लज्जा'' जैसे भाव का अद्‌भुत मूर्तिकरण देखिए:

कोमल किसलय के अंचल में
नन्हीं कलिका ज्यों छिपती सी,

गोधली के धूमिल पट में,
दीपक के स्वर में दिपती सी।

नीरव निशीध में लतिका सी,
तुम कौन आ रही हो बढ़ती?
कोमल बाँहें फैलाये सी,
आलिंगन का जादू पढ़ती[1]

यहीं नहीं प्रसाद के काव्य में ऐद्रिंय बिम्बों को भी प्रचुर मात्रा में उकेरा गया है। रमणीय **चाक्षुस**-बिम्ब की छटा ''किंजल्क-जाल हैं बिखरे, उड़ता पराग है रूख'' में भी बिखर जाती है तो काली आँखों में कितनी, यौवन के मद की लाली'' जैसी पंक्तियों में वर्ण-सौन्दर्य भी दर्शनीय बन जाता है। प्रसाद के व्यंजनाप्रवण सामासिक बिम्ब का एक उदाहरण देखिए-

संध्या की मिलन प्रतीक्षा
कह चलती कुछ मनमानी
ऊषा की रक्त निराशा
कर देती अन्त कहानी

प्रसाद बिम्बविधान के संदर्भ में छायावादी अन्य तीनों कवियों की तुलना में कम सावधान रहे हैं। किन्तु फिर भी यह बहुविध और पर्याप्त व्यापक गुण बन कर आया है। पंत और निराला के बिम्बों से तुलना तो नहीं हो सकती, किन्तु जहाँ-जहाँ भी काव्य सौन्दर्य की वृद्धि में इनकी आवश्यकता पड़ी है, प्रसाद ने इनका प्रयोग किया है। विराट दृश्यों को प्रस्तुत करने वाले एक उदात्त बिम्ब का दृश्य भी देखा जा सकता है। बिम्बों ने प्रसाद के कलात्मक सौख्य में अपार श्री वृद्धि की है-

अतलान्त महागम्भीर जलधि
तजकर अपनी मह नियत अवधि
लहरों के भीषण हासों में
आकर खारे उच्छवासों में,
युग-युग की मधुर कामना के
बन्धन को देता जहाँ ढील।

-लहर

8.6.5 अलंकार तथा छंद

छायावादी कवियों ने अलंकारों का प्रयोग काव्य में रमणीयता बनाये रखने के लिए किया है। यह प्रयोग सामास नहीं स्वतः प्रविष्ट हुआ जान पड़ता है। प्रसाद साहित्य में तो अलंकार अतिशयता के फलस्वरूप सहज एवं स्वाभाविक रूप में प्रस्फुटित हुए हैं। उनके काव्य में सादृश्य-मूल्क, वैषम्यमूलक तथा मानवीकरण आदि अलंकारों का सहज प्रयोग कई स्थानों पर देखा जा सकता है। सादृश्य मूलक अलंकारों में उपमा, रूपक, श्लेष तथा रूपकातिशयोक्ति जैसे कई अलंकारों का सुंदर प्रयोग दृष्टव्य है-

उपमाः i) वसुधा **चरण-चिह्न सी बनकर** यहीं पड़ी रह जावेगी।

ii) करुणा की **नव अंगराई सी,** मलयानिल की परछाई सी।

iii) उसी **तपस्वी से लम्बे थे** देवदारु दो चार खड़े

इसी प्रकार ''मस्तक में **स्मृति सी छाई'',** ''जल उठा स्नेह **दीपक सा''** तथा ''बड़वानल की **ज्वाला सी''** जैसे कई उदाहरण देखे जा सकते हैं।

रूपकः नील नयन से ढुलकाती हो
ताराओं की पाँत घनी रे।

बीती विभावरी जाग री
अम्बर पनघट में डुबो रही
ताराघट उषा नागरी।

पहले उदाहरण में जीवन को संध्या कहकर नील नयनों को आकाश और अश्रुओं को तारे कहा गया है। दूसरे उदाहरण में उषा को नायिका मानकर अम्बर रूपी पनघट में तारे रूपी घड़ों को डुबोने का सुंदर रूपक बनाया गया है। इसी प्रकार 'अलबेली-बाहुलता' और 'मानव-जीवन-वेदी' पर जैसे प्रयोग भी देखे जा सकते हैं।

रूपकातिशयोक्तिः बाँधा था विधु को किसने
इन काली जंजीरों से
मणि वाले फणियों का मुख
क्यों जड़ा हुआ हीरों से?

सन्देहः नायिका की बाँह लता है या सौंदर्य रूपी सरोवर की कोई सुंदर लहर? सन्देह का सुंदर उदाहरण है-

अलबेली बाहुलता या तनु
छवि सर की नव लहरी।

व्यतिरेकः लहरें उठती थीं मानो चूमने को मुझको
और साँस लेता था समीर मुझे छूकर

इसी तरह ''सोने वाले जग कर देखें अपने सुख का सपना'' में **वक्रोक्ति** है तो ''उठ-उठ री लघु-लघु लोल लहर'' में **अनुप्रास, पुनरूक्ति एवं अन्योक्ति** की छटा को एक साथ देखा जा सकता है। ''किन्तु दुर्भाग्य पीछा करने में आगे था'' या ''कल्याणी शीतल ज्वाला'' जैसी पंक्तियों में **विरोधाभास है''**। ''जैसे उस नील निलय में'' और ''मालती कुंज में जैसे'' प्रयोग **उदाहरण अलंकार** के प्रमाण हैं। ''वे कुछ दिन कितने सुंदर थे'' में **स्मरण अलंकार** है। ''ओ री मानस की गहराई'' में मानस के 'हृदय' और 'सागर' अर्थ होने से **भलेष है।** ''उठ-उठ गिर-गिर फिर-फिर आती'' में **चित्रालंकार** है। इसी प्रकार प्रसाद ने मूर्त-उपमेयों के लिए अमूर्त-उपमानों की योजना भी की है तो अमूर्त उपमेय के लिए मूर्त उपमान की प्रस्तुति भी द्रष्टव्य है- ''जल उठा स्नेह दीपक सा नवनीत हृदय का मेरा''। प्रसाद ने **मानवीकारण** का तो अद्भुत प्रयोग किया है। अनेकों उदाहरण देखे जा सकते हैं। यहाँ एक उदाहरण देकर हम अलंकार प्रसंग की चर्चा समाप्त करेंगे-

पगली हा सम्भाल तो कैसे
टूट पड़ा तेरा अंचल
देख बिखरती है मणिराजी
अरी उठा बेसुध चंचल।

अतः स्पष्ट है कि प्रसाद के काव्य में अनिवार्य तथा अभिन्न अंग बने थे तथा अन्य कई अलंकार काव्य-सौन्दर्य में अपार वृद्धि करते हैं। इनसे भावोत्कर्ष, एवं रस-सृष्टि में सहायता ही मिलती है। ये प्रभावी बनते हैं चमत्कारी नहीं।

छंदः प्रसाद ने भावों की मार्मिक अभिव्यक्ति के लिए विशिष्ट छंदों का प्रयोग किया है। पंत और निराला की तरह वे छंद-विधान में स्वतंत्रता भले ही न लेते हों किन्तु उन्होंने अंग्रेजी के ''सानेट'' और बंगला के ''त्रिपदी'' तथा ''पयार'' नामक छन्दों का भी बाखूबी प्रयोग किया है। स्वच्छन्दता के इस युग में प्रसाद ''पेशोला की प्रतिध्वनि'' में मुक्त-छन्द का

प्रयोग भी करते हैं। पर अधिकाशंतः प्रसाद ने नवीन और प्राचीन का सामंजस्य कर संगीत की अभिवृद्धि तथा भाव-प्रवणता के लिए ही छन्दों का चयन किया। कई तरह के छन्दों का प्रयोग उनके प्रगीतों में विद्यमान हैं। ''लहर'' में 'बाला' 'पीयूष पर्व' तथा 'श्रृंगारहार' जैसे प्रयोग देखे जा सकते हैं। ''महाराणा का महत्व'' और ''प्रेम-पथिक'' में वे अनुकान्त प्रणाली को अपनाते हैं। ''आँसू'' में तो प्रसाद ने एक नया छन्द ही गढ़ डाला जिसका नाम भी ''आँसू'' छन्द ही पड़ गया। इसमें 14, 14 के विराम से 28 मात्राएँ हैं। इसका अनुकरण आगे चलकर मराठी साहित्य में ही हुआ। आँसू छन्द प्रसाद को अत्यंत प्रिय था। 'कामायनी' के अंतिम सर्ग ''आनन्द'' में भी वे इसी छंद का प्रयोग करते हैं-

। । । । ऽऽ । । । । ऽऽ । ।

समरस थे जड़ या चेतन = 14 मात्राएँ
सुंदर साकार बना था, = 14 मात्राएँ } =28
चेतनता एक विलसती
आनंद अखंड घना था।

प्रसाद ने छंदों के मामले में बहुत जगह पर स्वच्छन्दता भरी दृष्टि का इस्तेमाल किया है। कहीं घनाक्षरी के आधार पर द्वन्द बनाया तो उसका अन्त बदल डाला। प्रसाद ने 'प्लवंगम' नामक छंद के आधार पर अन्तमुक्त प्रयोग भी किये हैं। ''कामायनी'' में तो प्रसाद ताटंक, पादाकुलक, रूपमाला, सार, रोला और स्वयं प्रसाद द्वारा निर्मित छंद-पादाकुलक-पद्धति, ताटंक और गेय आदि का सुंदर प्रयोग किया है। कुल मिलाकर कह सकते हैं कि प्रसाद का छन्द-विधान उनकी शास्त्रीय एवं मौलिक प्रतिभा का प्रबल प्रमाण है। उनके समग्र काव्य-संसार में इसे देखा जा सकता है।

बोध प्रश्न 3

1. प्रसाद के भाषा-सौन्दर्य को काव्य-गुण तथा शब्द-शक्तियों ने अत्यन्त प्राणवान और सार्थक बनाया है। आठ पंक्तियों में उदाहरण सहित स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. प्रसाद ने अपने काव्य के लिए कौन-कौन सी शैलियों को अपनाया? पाँच पंक्तियों में लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

3. प्रसाद ने अपने काव्य को सार्थक प्रतीक विधान से सुसज्जित ही नहीं किया उसे शक्ति भी प्रदान की है। आठ-दस पंक्तियों में स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

.....

4. प्रसाद के बिम्ब-विधान पर पाँच-छह पंक्तियाँ लिखिए।

.....

.....

.....

.....

5. प्रसाद का अलंकार-विधान उनके काव्य का अनिवार्य तथा अभिन्न अंग बन कर आया है। किन्हीं दो अलंकारों के उदाहरण देकर आठ पंक्तियों में स्पष्ट कीजिएः

.....

.....

.....

.....

6. प्रसाद की काव्य-भाषा में प्रयुक्त मुहावरों में से किन्हीं तीन के उदाहरण सहित आठ पंक्तियों में विवेचन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

8.7 मूल्यांकन (प्रसाद का प्रदेय)

इस समग्र विवेचन के बाद यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रसाद ने अपने जीवनानुभव तथा अध्ययन को काव्य के माध्यम से प्रस्तुत किया। कल्पना और अनुभूति, इतिहास एवं संस्कृति तथा प्रेम एवं सौन्दर्य के योग से उन्होंने जिन आदर्शों का निर्माण किया उनमें जीवन-दर्शन को सन्निहित करने का सफल प्रयत्न किया है। ''कामायनी'' में वे मानव जाति के उत्थान और आनन्द-शिखर की यात्रा का महावर्णन करते हैं। ''आँसू'' में प्रसाद व्यक्तिगत प्रेम भावना को एक व्यापक धरातल प्रदान कर विश्व की करुणा को अपनी वेदना में समाहित करते हैं तो लहर में बौद्ध-दर्शन से प्रभावित युग चेतना को सफलतम अभिव्यक्ति देने वाले गीतों का सृजन करते हैं। जीवन को दृढ़ता से अपनी भावना में समन्वित कर अनेकों समस्याओं का समाधान खोजने वाले इस महाकवि ने मानवता के कल्याण का पथ-प्रशस्त किया है। बौद्धिकता, भौतिकवाद तथा विज्ञानवाद की अति से त्रस्त मानवता में श्रद्धा, आस्था, विश्वास और सहृदयता का पावन भाव जागृत करने वाले

इस सृजक ने भाव और कला दोनों ही दिशाओं में अपनी बहुमुखी प्रतिभा के वरदान से उपकृत किया है। इस कालजयी महाकवि की देन भारतीय साहित्य के ही नहीं समग्र विश्व के लिए एक प्रेरणा बनती है। महाकवि प्रसाद छायावाद के प्रवर्तक ही नहीं विश्व साहित्य सृजन के पुण्य पथ को प्रशस्त करने वाले अप्रतिम, अद्वितीय तथा अलौकिक प्रतिभा के विश्व कवि बन जाते हैं।

8.8 सारांश

- इस इकाई के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि अतीत के झरोखों से वर्तमान की स्थितियों एवं समस्याओं को सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक डोर में पिरोकर स्वच्छन्द रूप से प्रतिष्ठित करने वाले प्रसाद अलौकिक प्रतिभा के धनी व्यक्ति थे। उदारता तथा धर्मनिष्ठता जैसे गुणों से सम्पन्न स्वस्थ मन मस्तिष्क और गम्भीर विचारों वाले इस महाकवि ने विषम परिस्थितियों और चुनौती भरे वातावरण में राह खोजने और समाधान ढूंढने का पाठ पढ़ाया।

- कविता, नाटक, उपन्यास, कहानी तथा निबन्ध आदि गद्य विधाओं के माध्यम से प्रसाद ने सामाजिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक एवं राष्ट्रीय चेतना का प्रसार कर वैविध्यमयी पृष्ठभूमि में कल्याणकारी साहित्य का सृजन किया। युगीन समस्याओं को इनके परिप्रेक्ष्य में उजागर कर कवि ने कल्याण का पथ प्रशस्त किया है।

- प्रसाद की कविता में इतिहास, संस्कृति, पुराण, उपनिषद तथा वेदों आदि के कल्याणकारी निष्कर्ष को संजोया गया। उसमें राष्ट्रीय चेतना का उद्‌बोधन गान है, प्रेम की मर्म भरी व्यंजना तथा प्रकृति और नारी सौन्दर्य के प्रति कवि की नव्यतम दृष्टि एवं अनुपम प्रतिभा का प्रामाणिक लेखा-जोखा है। प्रसाद की गीति योजना परक सौंदर्य दृष्टि ने आत्मोद्‌गारों की संगीतमय अभिव्यक्ति से भी काव्य में मार्मिक प्रभाव पैदा किया है।

- कवि का काव्य-संसार ब्रह्म के प्रति प्रणय और उसकी खोज यात्रा की रहस्यात्मक अभिव्यक्ति से सुसज्जित होता है तो जीवन और जग संबंधी चिन्तन परम गम्भीर दर्शन में शैव, बौद्ध, शाक्त, वैष्णव एवं गांधी दर्शन आदि का सम्मिश्रण कर कल्याण एवं आनन्द का मार्ग भी दिखाता है।

- प्रसाद काव्य शिल्प के भाषा, शैली, प्रतीक, बिम्ब एवं अलंकार छंद आदि उपकरणों के कलात्मक प्रयोग से अपने अभिव्यंजना कौशल का ही परिचय नहीं देते, खड़ी बोली को उत्कर्ष शिखर पर पहुँचाकर अपनी मौलिक कलात्मक प्रतिभा से अभिव्यक्त पक्ष को सार्थक, समर्थ, रमणीय एवं प्रभावोत्पादक भी बना देते हैं।

8.19 शब्दावली

मानवतावादी दृष्टि : वह दृष्टि जिसमें मनुष्य के हित और कल्याण को महत्व दिया जाता है।

सार्वभौमिक दृष्टि : वह दृष्टि जो पृथ्वी के हर हिस्से को ध्यान में रख कर चले।

शैवमतावलम्बी : शैव दर्शन के मत पर आधारित रहने वाले।

अनुप्राणित : प्रेरित या अनुकरण करने वाले।

चतुर्दिक उन्नति : चारों दिशाओं में उन्नति पाना।

आत्मोत्सर्ग : आत्मा का उत्सर्ग अर्थात उन्नत होना।

आन्तर सौंदर्य : भीतर कर या आत्मा का सौंदर्य।

आह्लादकारी रूप : हार्दिक खुशी देने वाला रूप।

एकेश्वरवाद : एक ही ईश्वर को मानने वाला मत।

8.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

प्रसाद का काव्य, डॉ. प्रेमशंकर, भारती भंडार, सन् 1986।

छायावाद के आधार स्तम्भ, संपादकः राम जी पाण्डेय, लिपि प्रकाशन, सन् 1971।

प्रसाद साहित्य की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, डॉ. प्रेमदत्त शर्मा, जयपुर पुस्तक सदन, सन 1968।

जयशंकर प्रसाद, नन्ददुलारे वाजपेयी, भारती भंडार, इलाहाबाद।

छायावादी काव्य, डॉ. कृष्णचंद्र वर्मा, मध्य प्रदेश हिंदी ग्रंथ अकादमी, सन् 1972।

छायावाद की परिक्रमा, श्याम किशोर मिश्र, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, सन् 1985।

जयशंकर प्रसाद, रमेशचन्द्रशाह; साहित्य अकादमी, दिल्ली, सन् 1984।

8.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1. i) x
   ii) ✓
   v) x
   iv) ✓
   v) ✓

2. i) सन् 1889
   ii) श्री शम्भुरत्न
   iii) 12 वर्ष
   iv) सन् 1908

3. i) कामायनी, लहर, आँसू, झरना, कानन-कुसुम
   ii) सन् 1937 में, राजयक्षमा के कारण
   iii) सन् 1935 में, चित्राधार
   iv) स्कन्दगुप्त, चन्द्रगुप्त, ध्रुवस्वामिनी, अजात- शत्रु तथा जनमेजय का नागयज्ञ
   v) काव्य और कला तथा अन्य निबन्ध
   v) कंकाल और तितली तथा आंधी और आकाशदीप

बोध प्रश्न 2

1. औरों को हँसते देखो मनु,
   हँसो और सुख पाओ,
   अपने सुख को विस्तृत कर लो,
   सबको सुखी बनाओ

   -कामायनी

   जननी जिसकी जन्मभूमि हो, बसुन्धरा ही काशी हो।
   विश्व स्वदेश, भ्रात मानव हों पिता परम अविनाशी हो।

   -कानन -कुसुम

2. देखिए, उपभाग 8.5.2
3. देखिए, उपभाग 8.5.3
4. देखिए, उपभाग 8.5.4
5. देखिए, उपभाग 8.5.4
6. देखिए, उपभाग 8.5.4
7. देखिए, उपभाग 8.5.5
8. देखिए, उपभाग 8.5.1

बोध प्रश्न 3

1. देखिए, उपभाग 8.6.1
2. देखिए, उपभाग 8.6.2
3. देखिए, उपभाग 8.6.3
4. देखिए, उपभाग 8.6.4
5. देखिए, उपभाग 8.6.5
6. देखिए, उपभाग 8.6.5
7. देखिए, उपभाग 8.6.1

इकाई 9 सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' और उनकी कविता

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 युग परिवेश

9.3 निरालाः जीवन और व्यक्तित्व

9.4 समर्थ-सर्जक का कृतित्व

9.5 निराला-काव्य की अन्तर्वस्तु

- 9.5.1 काव्य संवेदना
- 9.5.2 परम्परा और आधुनिकता की टकराहट
- 9.5.3 काव्यानुभूति में विद्रोह का स्वर या भाव-भूमि
- 9.5.4 सौन्दर्यानुभूति के उपादान
- 9.5.5 प्रयोग और प्रगति
- 9.5.6 मूल्य चेतना का विस्तार
- 9.5.7 काव्य कलाओं की प्रेरणा या स्रोत भूमि
- 9.5.8 छायावादोत्तर काव्य यात्रा

9.6 निराला काव्य का रचना-विधान

- 9.6.1 काव्य-रूपों के नए आधार
- 9.6.2 काव्य-भाषा की सृजनात्मकता
- 9.6.3 काव्य की शब्दावली
- 9.6.4 काव्य-प्रतीक
- 9.6.5 काव्य-बिम्ब
- 9.6.6 अप्रस्तुत विधान
- 9.6.7 छंद-विधान

9.7 निराला काव्य में सांस्कृतिक-सामाजिक नवजागरण

9.8 सारांश

9.9 शब्दावली

9.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

9.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

9.0 उद्देश्य

छायावाद में ही नहीं, समग्र हिंदी साहित्य में भी अपने उपनाम की तरह ''निराला' व्यक्तित्व एवं कृतित्व रखने वाले उस महामानव से सम्बद्ध इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- छायावादी कवि सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला के व्यक्तित्व, जीवन और युग परिवेश को समझ सकेंगे;

- निराला की काव्य रचनाओं तथा उनकी विषय-वस्तु को जान सकेंगे;
- छायावाद के स्वरूप एवं विकास में निराला के योगदान तथा उनके वैविध्यपूर्ण काव्य संसार के विभिन्न पक्षों की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे;
- निराला की काव्य चेतना को आप भाषा-सौन्दर्य और अभिव्यंजना- कौशल की दृष्टि से जान सकेंगे;
- छायावादी साहित्य को निराला-काव्य की अमूल्य देन का मर्म समझ सकेंगे।

9.1 प्रस्तावना

आप पहले ही जान चुके हैं कि सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' छायावाद के प्रतिनिधि कवि हैं। इस इकाई में उसी प्रतिनिधि कवि निराला के काव्य को छायावादी तत्वों के आलोक में देखने की चेष्टा की गई है। महाप्राण निराला के काव्य में कोमल और कठोर पक्षों का, अध्यात्म और व्यवहार का भावुक एवं क्रान्तिकारी रूप का विशेष परिचय दिया गया है। निराला छायावाद के सर्वाधिक चर्चित कवि रहे हैं। उनके विराट और उदात्त व्यक्तित्व की झलक हमें उनके संपूर्ण साहित्य में देखने को मिलती है। निराला की तरह ही उनका काव्य जगत भी निर्बन्ध है। व्यंग्य-विनोद का तीखा और उन्मुक्त रूप, यथार्थ का जीवन्त चित्रण एवं सामाजिक जीवन की कटु अनुभूतियों का सजीव निरूपण हमें निराला काव्य में देखने को मिलता है तथा साथ ही सुसंस्कृत भाव चेतना का वह रूप भी मिलता है जहाँ काव्य अध्यात्म की स्वतः ही अद्वैतपरक व्याख्या करता है।

9.2 युग परिवेश

निराला छायावादी युग के महत्वपूर्ण कवि हैं। ये युग अपने आप में नवजागरण काल कहा जाता है। उन्नीसवीं शताब्दी में राष्ट्रीय, सांस्कृतिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक नवचेतना का भारतीय जीवन में विशिष्ट प्रभाव दिखाई देता है। साहित्य का युग से घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। युग की प्रवृत्तियों और आन्दोलनों का साहित्य पर भी विशेष प्रभाव पड़ता है। महाप्राण निराला ने भी अपने युग-परिवेश से प्रभावित होकर साहित्य-सृजन किया। उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में भारतीय जनजीवन में राष्ट्र को स्वतंत्र देखने की बलवती भावना उजागर हो चुकी थी। सन् 1857 की क्रान्ति के असफल हो जाने के पश्चात भी स्वतंत्रता की चिंगारी ने भारतीय जनमानस में अपना स्थान बना लिया था, जिसका प्रभाव आधुनिक काल के प्रथम चरण अर्थात् भारतेन्दु युग में हमें देखने को मिलता है। द्विवेदी युग में यह राष्ट्रीय आकांक्षा नैतिकता के साथ-साथ पुनरूत्थानवादी चेतना से जुड़कर विशेष सक्रिय हुई। द्विवेदी युगीन कवियों ने अपने अतीत को पुनः स्मरण कर राष्ट्रीय भावना के साथ-साथ सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक चेतना का गान किया और छायावादी युग तक आते-आते इस भावना ने नवजागरण का रूप अपना लिया। विवेकानंद के प्रेरक विचारों ने उस युग में विशेष स्फूर्ति एवं उत्तेजना का संचार किया। व्यष्टि मुक्ति की अपेक्षा समष्टि मुक्ति की उन्होंने राह बतायी। पराधीनता को पटकने का मार्ग प्रशस्त किया और मानव को अपनी खोज-'आत्मिक-खोज' के लिए प्रेरित किया। दरिद्र भारत की पीड़ा को विवेकानन्द ने समझा, उसी प्रकार से महर्षि अरविन्द ने अपने क्रान्तिकारी विचारों के द्वारा एक ओर तो राष्ट्रीय जीवन में क्रान्ति के स्वर फूंके और दूसरी ओर आध्यात्मिक एवं सांस्कृतिक चेतना की ज्योति अपने साहित्य के द्वारा प्रसारित की। महात्मा गांधी ने भी अहिंसा के सिद्धांतों के साथ राष्ट्रीय भावना का सात्विक भाव जन-जन तक पहुँचाया। सामाजिक रूढ़ियों का विरोध करते हुए जन-जन को एकता के सूत्र में उन्होंने पिरोया। उस युग की अन्य विशिष्ट विभूतियों में टैगोर, लोकमान्य तिलक एवं गोखले भी विशेष

स्थान रखते हैं। संपूर्ण राष्ट्र में राष्ट्रीयता के साथ-साथ सांस्कृतिक और आध्यात्मिक चेतना का जो प्रसार व्यापक रूप से हुआ उसी को अपने में समाये छायावादी काव्यान्दोलन का हिंदी साहित्य में आगमन हुआ।

निराला के जीवन एवं साहित्य में इन सभी युगीन परिस्थितियों एवं विचारधाराओं का विशेष प्रभाव पड़ा। माँ भारती की पराधीनता से पीड़ित अवस्था को देखकर कवि के हृदय में करूणा और आक्रोश का भाव भर उठता है। वह अपने ''क्लेद युक्त तन'' को बलिदान करके उसे स्वतंत्र करना चाहता है। ''जागो फिर एक बार'' का बुलन्द स्वर फूंककर वह राष्ट्रीय-सांस्कृतिक चेतना को जन-हृदय में उत्पन्न करने का प्रयास करता है। ''राम की शक्ति पूजा'', ''तुलसीदास'', परिमल काव्य संग्रह की ''तुम और मैं'', ''मैं'', ''हमें जाना जग के उस पार'', ''अधिवास'', ''पारस'' एवं ''कण'' आदि कितनी ही कविताएँ इसी दृष्टिकोण से रची गई रचनाएँ हैं। रामकृष्ण परमहंस की विचारधारा का निराला के जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ा, जिस की अभिव्यक्ति उक्त रचनाओं में देखी जा सकती है।

छायावादी काव्यान्दोलन की पृष्ठभूमि में राष्ट्रीयता का स्वर भी काफी बुलन्दी पर रहा। अरविन्द, सुभाष एवं तिलक के क्रान्तिकारी विचारों ने उस युग के युवा मानस की क्रान्ति का आह्वान करने के लिए उत्साहित किया। निराला-काव्य में क्रान्ति का स्वर प्रखरता के साथ ध्वनित हुआ है। इस दृष्टि से ''बादल राग'' विशेष उल्लेखनीय है, जिसे विप्लव का प्रतीक मानकर कवि निराला ने प्रस्तुत किया है। इसी प्रकार, ''एक बार बस और नाच तू श्यामा'' कहकर निराला ने चण्डी को प्रलय करने के लिए सम्बोधित किया है। निराला की राष्ट्रीयता का आधार राजनैतिक न होकर सांस्कृतिक कोटि का अधिक रहा है। उन्होंने अपने युग में व्याप्त सामाजिक, रूढ़ियों-विशेषकर विधवा की दयनीय स्थिति, पूंजीपतियों द्वारा मजदूरों का शोषण, समाज के दीनहीन वर्ग-चाहे भिक्षुक हो या मज़दूरिन, वर्ण व्यवस्था के नाम पर किए जाने वाले सामाजिक अभिशापों पर निराला ने खुली और बेबाक चोट की है। अतः कह सकते हैं कि एक जागरूक भारतीय मानस निराला के पास था, जिसने अपने युग-परिवेश से प्रेरणा एवं उत्साह ग्रहण कर साहित्य की रचना की।

9.3 निरालाः जीवन और व्यक्तित्व

निराला के जीवन की संक्षिप्त जानकारी आप पहले ही हासिल कर चुके हैं। यहाँ कुछ विस्तृत जानकारी दी जा रही है। निराला का जन्म सन् 1896 ई. में बसन्त पंचमी के दिन बंगाल के मेदनीपुर ज़िले में महिषादल नामक स्थान पर हुआ। निराला की जन्म तिथि के विषय में विद्वानों में पर्याप्त मतभेद भी पाये जाते हैं। अनुश्रुति है कि उनकी माता सूर्य का व्रत रखा करती थीं और निराला का जन्म भी रविवार को हुआ। यही कारण है कि उनका नाम सुर्जकुमार रखा गया। कुछ लोगों का कहना है कि उनका जन्म महावीर हनुमान की पूजा के दिन मंगलवार को हुआ। निराला के पिता महावीर के भक्त थे, यही सोचकर पण्डित ने उनका नाम सुर्जकुमार रखा। लेकिन सन् 1917-18 के लगभग उन्होंने अपना नाम बदलकर सूर्यकान्त त्रिपाठी कर लिया और निराला उपमान उन्होंने ''मतवाला'' पत्र के सम्पादन काल में रखा।

निराला के पिता पं. राम सहाय, गढ़ा कोला, जिला उन्नाव के रहने वाले थे किन्तु आर्थिक परिस्थिति अनुकूल न होने के कारण कलकत्ता में जाकर पुलिस के सिपाही बन गए। कालांतर में महिषादल राज्य में सौ सिपाहियों का जमादार और राज्य कोष का संरक्षक उन्हें नियुक्त किया गया। निराला के पिता राजा के विशेष कृपापात्र थे, यही कारण है कि उनका पालन-पोषण राजकीय परिवेश में हुआ। अल्पायु में ही इन्हें मातृ स्नेह की छाया से वंचित रहना पड़ा। निराला के स्वस्थ, सुन्दर रूप एवं मातृहीन निरीहता से द्रवित होकर महिषादल राजा के छोटे भाई ने इन्हें गोद लेने का और ''कॉन्वेंट'' में पढ़ाने का प्रस्ताव रखा किन्तु इनके पिता ने स्वयं ही बच्चे की देखभाल करने का निश्चिय किया। इनकी

प्रारम्भिक शिक्षा बंगाल पाठशाला में हुई और सन् 1907 ई. में उन्होंने महिषादल हाई स्कूल में आठवीं कक्षा में दाखिला ग्रहण किया। अंग्रेजी ज्ञान की शुरूआत भी यहीं से निराला ने प्रारम्भ की। हाई स्कूल से ही निराला ने द्वितीय भाषा के रूप में संस्कृत का अध्ययन किया। हिंदी भाषा, सिपाहियों के साथ रहकर उन्होंने सीखी। घर पर बैसवाड़ी बोली जाती थी। इस प्रकार से निराला ने बंगला, संस्कृत, अंग्रेजी, हिंदी और अवधी का ज्ञान हाई स्कूल से ही अर्जित कर लिया। हिंदी की पत्र-पत्रिकाओं-विशेषकर 'सरस्वती' से -उन्हें हिंदी के प्रति विशेष लगाव अनुभव हुआ और हिंदी में लिखने की प्रेरणा भी उन्होंने यहीं से प्राप्त की।

शिक्षा अर्जन के साथ-साथ निराला को अपने शारीरिक विकास का अवसर भी मिला। कुश्ती लड़ने, घुड़सवारी करने एवं बन्दूक चलाने में निराला ने विशेष योग्यता अर्जित कर ली। इसके अतिरिक्त संगीत में भी उनकी गहन रुचि थी और निराला का कण्ठ-स्वर बहुत सधा हुआ था। अपनी स्कूली शिक्षा को हाई स्कूल के पश्चात ही निराला ने विराम दे दिया क्योंकि निराला को किसी ने कह दिया कि प्रतिभाशाली व्यक्ति कभी परीक्षाओं के चक्कर में नहीं पड़ते, स्वयं रवीन्द्रनाथ नवीं पास हैं। बस निराला ने ठान लिया कि वे रवीन्द्र से कम थोड़े ही हैं उन्होंने भी परीक्षा नहीं दी ताकि नवीं कक्षा पास ही रहें।

निराला का विवाह चौदह वर्ष की आयु में मनोहरा देवी के साथ हुआ। मनोहरा देवी देखने में तो मनोहर थीं ही, गुण सम्पन्न और गृह कार्य दक्षा भी थीं। निराला को हिंदी में साहित्य-सृजन करने की प्रेरणा भी मनोहरा देवी से मिली। निराला अपनी पत्नी के प्रति अनन्य प्रेम का भाव रखते थे किन्तु निराला का वैवाहिक जीवन चार-पाँच वर्ष की अल्प आयु पर आकर बिखर गया। पत्नी की मृत्यु से निराला का अन्तर्मन टूट गया। निराला के काव्य में इस पीड़ा की गहन अभिव्यक्ति देखने को मिलती है। कवि की यह पीड़ा यहीं समाप्त नहीं हो जाती, परिवार के अनेक सदस्य इसी बीच निराला को छोड़ कर संसार से विदा हो लिए। निराला के भावुक मन के लिए पत्नी-विछोह वज्रपात से कम नहीं था, ऊपर से अपने दो बच्चों और परिवार के अन्य बच्चों के पालन-पोषण की व्यवस्था का भार भी इन्हीं पर आन पड़ा। इन सभी विषम परिस्थितियों में निराला के व्यक्तित्व का निर्माण हुआ। निराला के व्यक्तित्व में एक ओर करुणा तथा जगत की नश्वरता का भाव मिला हुआ है तो दूसरी ओर विद्रोह एवं क्रान्ति का स्वर भी। निराला के जीवन में दुःख और अभावों का सिलसिला जीवन पर्यन्त चलता रहा। पत्नी की मृत्यु के पश्चात् जो अन्य जबरदस्त आघात उन्हें लगा, वह था पुत्री 'सरोज' का युवावस्था में अकाल मृत्यु-मुख में चले जाना। एक के बाद एक प्रिय जन के विछोह से निराला जहाँ टूटे हैं, वहीं अपने अन्तर से शक्ति ग्रहण कर जीवन-संघर्षों से जूझे भी हैं। यही कारण है कि निराला के व्यक्तित्व में हम संघर्ष-प्रियता, रुढ़ियों के विरोध तथा विद्रोह के स्वर को विशेष रूप से देखते हैं। दूसरी ओर, करुणा का ऐसा मोहक रूप पाते हैं जो दूसरे के दुःखों और अभावों में अपनी वास्तविक स्थिति को भूल जाता है। फकीरी में भी उन्हें सुख मिलता है। निराला ने कविता को ही निबन्ध नहीं किया, अपने आप में भी निबन्ध रहे। निराला स्वभाव के स्वाभिमानी और निर्भीक व्यक्तित्व के स्वामी रहे हैं। उन्हें अवढर दानी कहकर सभी सम्मानित किया करते थे और अपनी मस्ती में वे फक्कड़ थे। उनके बाह्य व्यक्तित्व की झलक कुछ इस प्रकार से थीः ''कद लगभग छः फुट, चौड़ा सीना, विशाल मस्तक, दिव्य तेज से परिपूर्ण आंखें, बैल की तरह चौड़े कन्धे, विशाल बाहू, तीखी सुडौल नासिका, लम्बे बाल।'' उनकी आकृति और शारीरिक संरचना ग्रीक योद्धाओं के समान थी, इसीलिए कोई उन्हें 'अपोलो' कहता था तो कोई 'विवेकानन्द'।

सरस्वती के इस वरद् पुत्र ने आजीवन साहित्य साधना की। सन् 1920 ईस्वी में राज्य की नौकरी छोड़ कर पूर्ण संकल्प से निराला ने साहित्यक जीवन में प्रवेश किया और अन्त तक उसी को ही अपना जीवन मानकर चले। 15 अक्तूबर, 1961 को महाप्राण निराला ने अपने इस नश्वर-शरीर का त्याग किया।

9.4 समर्थ-सर्जक का कृतित्व

महाकवि निराला का जीवन वैविध्यपूर्ण है, इसीलिए उनका काव्य भी अनेक विलक्षणताओं से भरा हुआ है। जीवन के अनेक रूपों को कवि ने देखा और भोगा है। प्रतिकूल परिस्थितियों ने उनके कवि-मानस को तराशा और उन्हें समर्थ-सृजक के रूप में साहित्य जगत में प्रतिष्ठित किया। छायावादी काव्य का प्रारम्भ सन् 1918 के आसपास माना जाता है। उन्हीं दिनों निराला साहित्य साधना में पूरी तन्मयता से लीन थे। निराला की प्रारम्भिक रचनाओं में ''अनामिका'' (प्रथम) (सन् 1922), ''परिमल'' (सन् 1930), ''गीतिका'' (सन् 1936) एवं ''अनामिका'' (द्वितीय) (सन 1938) हैं। अनामिका (प्रथम) में केवल सात कविताएँ थीं। वे आगे चलकर अन्य संग्रहों में ले ली गई। वास्तव में ''परिमल'' को ही उनकी प्रथम काव्य कृति होने का गौरव प्राप्त है। इससे पूर्व निराला ''मतवाला'' में ''जूही की कली'' नामक कविता के माध्यम से साहित्य जगत में अपने कवि रूप की पहचान बना चुके थे। ''परिमल'' में निराला लिखित 1930 तक की कविताएँ संकलित हैं। स्वच्छन्द छन्द की कविताएँ उनके इस प्रारम्भिक सृजन में प्राप्त हो जाती हैं। ''परिमल'' में लगभग 78 रचनाएँ हैं जिन पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट हो जाता है कि उनके काव्य की अनेक धाराओं में बहने की अपरिमित सम्भावनाएँ निहित हैं। इस काव्य संग्रह के अधिकांश गीत दार्शनिकता एवं आध्यात्मिकता की भावना से परिपूर्ण हैं। कुछ कविताएँ राष्ट्रीय, सांस्कृतिक चेतना को वाणी प्रदान करने वाली हैं। समाज के दलित एवं पीड़ित वर्ग के प्रति कवि-हृदय में जो असीम करूणा का भाव रहा, वह भी ''परिमल'' की कविताओं में मुखरित हुआ। निराला का प्रसिद्ध गीत ''तुम और मैं'', ''माया'', ''विधवा'', ''भिक्षुक'', ''बादल राग'' एवं ''जागो फिर एक बार'', आदि ''परिमल'' की अनेक रचनाएँ हैं जो निराला के समर्थ कवि रूप को साहित्य लोक में स्थापित कर गई।

''परिमल'' के पश्चात् निराला ने लगभग 101 गीतों के संग्रह के रूप में ''गीतिका'' की सृष्टि की। इस संग्रह की कविताओं में निराला ने कई प्रयोग किए हैं। अद्वैतवादी काव्य रचनाओं की संख्या यहाँ पर्याप्त मात्रा में देखी जा सकती है। ''कौन तम के पार रे कह'' एवं ''पास ही रे हीरे की खान'' आदि गीतों में रहस्य की भावना का संस्पर्श स्पष्टतः देखा जा सकता है। कुछ गीतों का स्वर राष्ट्रीय सांस्कृतिक भावना से परिपूर्ण हैं। ''वर दे वीणा वादिनी'' और ''भारती जय विजय करे'' गीतों में कवि की राष्ट्रीय भावना का उज्ज्वल एवं सांस्कृतिक रूप दृष्टव्य है। गीतिका के विषय में जयशंकर प्रसाद का निम्न कथन महत्वपूर्ण हैं- ''गीतिका, हिंदी साहित्य के लिए सुन्दर उपहार है। उसके चित्रों की रेखाएँ पुष्ट, वर्णों का विकास भास्कर है। उसका दार्शनिक पक्ष गम्भीर और व्यंजना मूर्तिमती है।''

सन् 1938 में निराला का तीसरा काव्य संग्रह अनामिका प्रकाशित हुआ। इसमें कुछ 56 कविताओं को संग्रहीत किया गया है। इसमें मौलिक और अनूदित दोनों प्रकार की रचनाएँ एक साथ रखी गई हैं। ''सरोज स्मृति'', ''वह तोड़ती पत्थर'' और ''राम की शक्ति पूजा'' विशेष चर्चित काव्य रचनाएँ। इसमें भी ''राम की शक्ति पूजा'' सबसे अधिक सशक्त और प्रौढ़तम रचना मानी जाती है।

निराला के कृतित्व की एक अन्य महत्वपूर्ण उपलब्धि है-''तुलसीदास''। महाकाव्योचित शैली में रचित यह प्रबन्ध कृति निराला काव्य की अक्षय-कीर्ति का आधार है।

साहित्य में सर्वथा नये आयाम को लाने वाली रचना ''कुकुरमुत्ता'' निराला के सृजक रूप को एक नया मोड़ प्रदान करती है। इस की भाषिक संरचना ठेठ शब्दावली पर आधारित है। ''कुकुरमुत्ता'' में काव्य के परम्परित मानदण्डों से पूर्णतः भिन्न शैली को कवि ने अपनाया है। काव्य क्षेत्र में ऐसा साहसपूर्ण विस्फोट निराला जैसा सशक्त और निर्भीक रचनाकार ही कर सकता है। इसका रचना काल सन् 1942 के भारत छोड़ो आन्दोलन के

समय का है। पैनी हास्य-व्यंग्य की दृष्टि इस काव्य की विशेषता है। प्रगतिवादी युग के कवि इस काव्य रचना को अपना आदर्श और प्रेरणा केन्द्र मानते हैं।

''अणिमा'', ''बेला'' और ''नये पत्ते'' आदि काव्य संग्रह प्रगतिशील एवं प्रयोगवादी रचनाओं से अनुष्ठित हैं। ''अणिमा'' में कवि की एकाकी भावना की पीड़ा और भक्ति का स्वर भी यत्र-तत्र देखा जा सकता है। प्रयोगवादी ढर्रे की कविता ''चूंकि यहाँ दाना है'' अपनी विचित्र प्रकार की संरचना के कारण उल्लेखनीय है। इस कविता में पूंजीवादी संस्कृति पर तीखा व्यंग्य प्रहार किया गया है। ''बेला'' में निराला ने अनेक रंगों के गीतों की सृष्टि की है। भाषा, भाव एवं प्रयोग की दृष्टि से ''बेला'' के गीतों में नवीनता और विविधता का रूप झलकता है। उर्दू गजलों की लोकप्रियता का प्रभाव भी कुछ रचनाओं में पाया जाता है। ''नये पत्ते'' में हास्य व्यंग्य का पुट लिए कई कविताएँ हैं परन्तु उनका व्यंग्य कहीं-कहीं बड़ा मार्मिक रूप अपना लेता है। इसकी पहली कविता ''रानी और कानी'' में चेचक के दाग, काली, नाक चिपटी, गंजा सिर, एक आँख कानी पर ''माँ उसको कहती है रानी'' के द्वारा माँ के हृदय की कारुणिक अवस्था को देखा जा सकता है।

''अर्चना'', ''आराधना'' और ''गीत गुंज'' ये तीनों गीत संग्रह निराला की अन्तिम स्थिति है। निरन्तर संघर्षों से जूझने के कारण निराला का मानसिक सन्तुलन डगमगाा गया, उस अवस्था का रूप इन गीतों में कहीं-कहीं देखा जा सकता है। इसके अतिरिक्त भक्ति भावना, विनय और प्रार्थना मिश्रित करुणा की आभा लिए कुछ गीतों की भी रचना उन्होंने की है।

काव्य के अतिरिक्त निराला ने ''निरूपमा'', ''अप्सरा'', ''अलका'', ''प्रभावती'' तथा ''काले कारनामे'' आदि उपन्यासों की रचना भी की है। कहानी के क्षेत्र में निराला की महत्वपूर्ण देन ''लिली'', ''देवी'', ''सखी'', ''सुकुल की बीवी'' और ''चतुरी-चमार'' है। ''कुल्लीभाट'' और ''बिल्ले सुर बकरिहा'' इनके प्रसिद्ध रेखाचित्र हैं। श्रेष्ठ समालोचक और समीक्षक के रूप में निराला की ''रवीन्द्र कविता कानन'', ''पन्त और पल्लव'', ''चाबुक'', ''प्रबन्ध पद्य'', ''प्रबन्ध प्रतिभा'' तथा ''चयन'' आदि कृतियों का विशेष महत्व है। इसके अतिरिक्त निराला ने अनुवाद कार्य के द्वारा भी अपनी प्रतिभा का परिचय दिया है। ''आनन्द मठ'' के रचयिता बंकिम बाबू की ''कपाल कुण्डला'', ''चन्द्र शेखर'' ''दुर्गेश नन्दिनी'', कृष्णकान्त का बिल'', ''युगांगुलीय'' ''रजनी'' तथा देवी ''चौधरानी'', ''राजा-रानी'', ''विष वृक्ष'' आदि उपन्यासों को हिंदी में प्रयुक्त कर बहुत बड़ा कार्य किया।

निराला की इस साहित्य यात्रा का संक्षिप्त सा परिचय यह स्पष्ट करता है कि ये सभी रचनाएँ एक समर्थ सृजक के अन्तर्मन की अनेक स्थितियों को आभासित करती हैं। निश्चय ही महाप्राण निराला का साहित्य भी महान है।

बोध प्रश्न 1

1. नीचे एक प्रश्न के उत्तर में एक से अधिक विकल्प दिए जा रहे हैं। सही विकल्प को (✓) के निशान से चिन्हित कीजिए।

   i) निराला का जन्म सन् (1896 / 2001 / 1890) में हुआ था।

   ii) निराला की प्रथम काव्य कृति होने का गौरव (अनामिका / गीतिका / परिमल) को प्राप्त है

   iii) (भिक्षुक / तुलसीदास / वह तोड़ती पत्थर) कविता निराला की महाकाव्योचित शैली में रचित प्रबन्ध कृति है।

   iv) निराला की काव्य रचना (गीतिका / अनामिका / कुकुरमुत्ता) को प्रगतिवादी युग के कवियों ने अपना आदर्श तथा प्रेरणा-केन्द्र माना।

v) हिंदी साहित्य के लिए सुन्दर उपहार कहलाने वाले गीतसंग्रह ''गीतिका'' का रचनाकाल सन् (1921 / 1930 / 1942) है।

1. i) ''अणिमा'', ''बेला'' और ''नये पत्ते'' नामक काव्य-संग्रह प्रगतिशील और प्रयोगवादी रचनाओं में अनुष्ठित संग्रह है। ( )

ii) निराला का वैवाहिक एवं पारिवारिक जीवन अत्यन्त सुखमय रहा है। ( )

iii) संघर्ष-प्रेमी, रूढ़ि विरोधी तथा स्वभावतः निर्भीक एवं स्वाभिमानी कवि निराला को ''अपोलो'' और ''विवेकानन्द'' भी कहा जाता था। ( )

iv) निराला एक महाकवि थे और कहानी, निबन्ध, संस्मरण या उपन्यास आदि से उनका कोई संबंध न था। ( )

v) सर्वप्रथम ''मतवाला'' में प्रकाशित कविता ''जूही की कली'' से ही निराला के कवि रूप की पहचान साहित्य जगत में बनी थी। ( )

टिप्पणीः इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

9.5 निराला-काव्य की अन्तर्वस्तु

निराला का काव्य संसार उनकी जीवन-साधना का प्रतिरूप है। सन् 1916 में ''जूही की कली'' जैसी सफल काव्य कृति का निराला ने सृजन किया, तब से अनवरत वे साधना लीन रहे। निराला के समग्र काव्य की अन्तर्वस्तु का परिचय प्राप्त करने के लिए हमें उनके काव्य के निम्न चरणों को ध्यान में रखना होगा।

9.5.1 काव्य संवेदना

निराला का काव्यालोक निराला के समान ही विराट, उदात्त और विस्तृत है। निराला के पास महाकवि की वह सूक्ष्म दृष्टि थी जिसने अपने आस-पास के जीवन को बड़ी गहराई से देखा निराला काव्य में छायावादी युग की अन्तर्वस्तु के सभी तत्व तो मिलते ही हैं, साथ ही प्रयोगशील एवं प्रगतिवादी विचारों की गहरी छाप भी मिलती है किन्तु निराला सारे वादों की सीमा को पार करते चले गए हैं। उनकी काव्य सम्वेदना के लिए सारे सीमित वाद छोटे हैं। निराला काव्य में सम्वेदना के मुखर स्वर निम्न प्रकार से देखे जा सकते हैंः

1. **राष्ट्रीयता की भावनाः** निराला नव जागरण काल के कवि हैं। राष्ट्र को पराधीनता के बंधन से मुक्त देखने की लालसा उस काल के प्रायः सभी कवियो के काव्य का मुख्य विषय रहा है। निराला काव्य में राष्ट्रीय भावना का धरातल बड़ा विस्तृत और बहुरंगी है। निराला ने असंख्य गीतों में भारत के गौरव का गान, माँ भारती का शतशः स्मरण कर जातीय जीवन में उत्तेजना के प्राण फूंकें हैं। भारतीय जन मानस में उद्‌बोधन का संचार करते हुए निराला ''तुलसीदास'' में जागरण का सन्देश इस प्रकार से देते हैंः

''जागो, जागो आया प्रभात,
बीती वह, बीती अन्धरात।''

इसके लिए कवि आत्म बलिदान हेतु माँ भारती के चरणों में भावपूर्ण समर्पण करते हुए कहता हैः

''बाधाएँ आएँ तन पर
देखूं तुझे नयन निर्भर

x x x
क्लेदयुक्त अपना तन दूँगा
मुक्त करुँगा तुझे अटल,

तेरे चरणों पर देकर बलि
सकल श्रेय-श्रम-सिंचित फल।

2. **अद्वैत भावनाः** राष्ट्रीयता के अतिरिक्त अद्वैत तत्व की सम्वेदना का संस्पर्श निराला काव्य की अन्तर्वस्तु में मुख्यतया से गाया गया है। निराला के जीवन पर रामकृष्ण परमहंस एवं विवेकानन्द के विचारों का बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। ''परिमल'', ''अनामिका'', ''गीतिका'', ''अर्चना'', ''बेला'' एवं ''अर्णिमा'' इत्यादि में निराला की अद्वैत भावना को देखा जा सकता है। निराला का प्रसिद्ध गीत ''तुम तुंग हिमालय श्रृंग और मैं चंचल गीत सुर सरिता'' इसी भाव भूमिका की अभिव्यक्ति करता है।

3. **करुणा एवं पीड़ाः** निराला काव्य में पीड़ा एवं करुणा की गहरी व्यंजनाएँ देखने को मिलती हैं। कवि की सम्वेदना का विस्तार स्वर से लेकर जगती की विभिन्न बदलती हुई स्थितियों तक छाया हुआ है। निराला का ''सरोज स्मृति'', ''विधवा'', मैं अकेला'', ''स्नेह निर्झर बह गया है'' इत्यादि में कवि-ह्रदय की आंतरिक पीड़ा एवं करुणा का उत्कृष्ट रूप देखा जा सकता है। निराला के शब्दों में- ''दुःख ही जीवन की कथा रही'' इसी भाव को साक्षात्कार हम कह सकते हैं।

4. **व्यंग्य एवं आक्रोशः** निराला काव्य की सम्वेदना में व्यंग्य एवं आक्रोश का भाव बड़े पैने रूप से व्यक्त किया गया है। सामाजिक विषमताओं के प्रति निराला सदैव ही विद्रोही रहे हैं। निराला को ''महाप्राण'' की उपाधि से साहित्य जगत ने सम्मानित किया। उनके महाप्राण होने की प्रामाणिकता व्यंग्य एवं आक्रोश के गहरे मर्मस्पर्शी रूपों में मिलती है। निराला की सम्वेदना वह पारस है जिसके स्पर्श मात्र से जगती के सम-विषम भाव स्वर्ण के समान अमूल्य बन जाते हैं। ''कुकुरमुत्ता'', ''गर्म पकौड़ी'', ''बादल राग'', ''दौड़ते हैं बादल यह काले काले'', ''कुत्ता भौंकने लगा'', ''घोड़ी के पेटों में बहुतों को आना पड़ा'', ''दगा की'', ''झींगुर डटकर बोला'', ''डिप्टी साहब आये'' और ''महगूं मंहगा रहा'' जैसी रचनाओं में व्यंग्यात्मकता का हास्य एवं आक्रोश जनित रूप काफी सशक्त बन पड़ा है। हास्य व्यंग्य का निम्न रूप निराला के उसी भाव को साकार करता हैः

जमींदार का सिपाही लट्ठा कान्धे पर डाले
आया और लोगों की ओर देखकर कहा,
''डेरे पर थानेदार आये हैं;
डिप्टी साहब ने चन्दा लगाया है,
एक हफ्ते के अन्दर देना है।
चलो बात दे आओ।''

देखा जाये तो निराला की काव्य-संवेदना इतनी विराट और विस्तृत है कि उसमें उच्च भाव भूमि एवं निम्न से निम्न क्षुद्र अंश तक समाया हुआ है। छायावादी काव्य वस्तु के सभी प्रमुख तत्व भी उसमें समाये हैं और आधुनिक कविता के समस्त नए-नए प्रयोगों की भाव भूमि भी उसी में समाविष्ट है। नारी जीवन के प्रति करुणा एवं सम्मान का भाव, प्रेम की निश्छल अभिव्यक्ति, प्रकृति के विभिन्न रूपों की भावपूर्ण प्रस्तुति, मानवतावादी दृष्टि, सर्वमंगल की कामना, परमात्मा के प्रति अटूट विश्वास, जीवन की नश्वरता का बोध, सौन्दर्यानुभूति के साथ-साथ रहस्यानुभूति के अनेक भाव निराला की काव्य संवेदना में भरे पड़े हैं।

9.5.2 परम्परा और आधुनिकता की टकराहट

निराला का व्यक्तित्व बहु-आयामी है जिसमें अनेक विरोधी तत्वों का सामंजस्य हम देखते हैं। महान काव्य की सम्वेदना भी असीम और उदात्त होती है। निराला की प्रकृति ही स्वच्छन्द थी, परंपरा के बाधक रूप से उन्होंने सदैव टक्कर ली। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी का युग परम्पराओं का युग कहलाता है। ऐसे में निराला ने बंगला की स्वच्छ प्रवृत्ति का आत्मसात् कर हिंदी काव्य में शक्ति और गति का स्वर प्रस्तुत किया। दर्शन अध्यात्म और संगीत की महती प्रतिष्ठा साहित्य में की। अपने ओजस्वी रूप का परिचय परम्पराओं की जकड़न को तोड़कर दिया। काव्य में प्रेम और सौन्दर्य के उदात्त और उन्मुक्त रूप को उभारा। छायावादी कवियों में निराला सर्वाधिक स्वच्छंद प्रकृति के कवि माने जाते हैं। निराला की अभिव्यक्ति में सर्वत्र नूतनता का आह्वान देखने को मिलता है। चाहे काव्य की अन्तर्वस्तु हो या शिल्प-विधान सभी में उन्होंने नए-नए प्रयोग किए हैं। कविता को निराला ने छंदों के बंधन से मुक्ति प्रदान की एवं अपनी भाव चेतना को भी विद्रोह और क्रान्ति से शक्ति सम्पन्न किया।

निराला की अभिव्यंजना, छंदों की बनावट, भाषा की विविधता एवं बिम्ब और प्रतीकों आदि में क्रान्तिकारी नूतनता और आधुनिकता को देखा जा सकता है। ''जूही की कली'', ''प्रेयसी'', ''रेखा'', ''जागो फिर एक बार'', ''बादल राग'', ''कुकुरमुत्ता'', ''काई'', ''बहू'', ''राम की शक्ति पूजा'' एवं ''तुलसीदास'' आदि सभी काव्य रचनाओं में स्वच्छंदतावादी भावी चेतना और परंपरागत मान्यताओं के प्रति विद्रोह का भाव देखा जा सकता है।

9.5.3 काव्यानुभूति में विद्रोह का स्वर या भाव-भूमि

निराला क्रान्तिकारी कवि हैं। सामाजिक रुढ़ियों और विषमताओं के प्रति उनकी निर्भीक वाणी ने सदैव चोट की है। निरंतर दुःख और अवसाद को भोगते हुए भी निराला टूटे नहीं अपितु सामाजिक जीवन की गलत मान्यताओं और अन्याय के प्रति अपने विद्रोही स्वर के द्वारा तीखी चोट करते रहे। विद्रोह का स्वर निराला की प्रयोगवादी कविताओं में साकार है। ''बादल राग'' कविता में विप्लव और विद्रोह का भाव चरम सीमा पर प्रतिष्ठित है। ''कण'' कविता में कवि त्रस्त मानवता को पीड़ित देखकर कह उठता है:

> ''पड़े हुए सहते हो अत्याचार, पद पद पर रूढ़ियों के, पद प्रहार।''

तथा रूढ़ियों का खंडन करते हुए निराला आक्रोश युक्त वाणी में प्रेरणा का महामन्त्र फूंकते हुए कहते हैं:

> ''जला दे जीर्ण-शीर्ण प्राचीन,
> क्या करुंगा तन-जीवन-हीन।''

कहा जा सकता है कि निराला-काव्य की भाव भूमि इसी प्रकार के असंख्य भाव रूपों का एक समृद्ध कोष है जिसमें प्रतिकूलताओं और विषमताओं से लोहा लेने की अमिट शक्ति छुपी हुई है।

9.5.4 सौन्दर्यानुभूति के उपादान

कवि की निधि है- संवेदना प्रवण का हृदय। जिसमें अनगिनत भावनाओं का विशाल रूप निवास करता है। विश्व के विस्तृत साम्राज्य में कवि अपनी सौन्दर्यानुभूति के रूप की ही झांकी देखता है। सौन्दर्यानुभूति कवि की दृष्टि और हृदय में रहती है। क्षण-क्षण नव्यता को ग्रहण करने की भावना ही सौन्दर्य है। ''परिमल'' काव्य संग्रह में निराला ने सौन्दर्य को यौवन के मधुर रूप से जोड़ते हुए कहा है-

> ''यौवन के तीर पर प्रथम था आया जब स्रोत सौन्दर्य का
> वीचियों में कलरब सुख-चुम्बित प्रणय का,

था मधुर आकर्षण मय-
मज्जना वेदन मृदु फूटता सागर में।''

कवि निराला के पास सूक्ष्म अनुभूति की वह सामर्थ्य है जो सृष्टि के नाना उपकरणों में सौन्दर्य का दर्शन करती है। नारी-सौन्दर्य का चित्रण सभी छायावादी कवियों के काव्य का अभिन्न अंग रहा है। निराला नारी-सौन्दर्य का अंकन करते हुए कहते हैं-

शिला खंड पर बैठी वह, नीलांचल मृदु लहराता था
मुक्त बन्ध-सन्ध्या-समीर सुन्दरी संग
कुछ चुपचाप बातें करता जाता और मुस्कुराता था।

कवि की दृष्टि केवल कोमल और बाह्य सौन्दर्य को ही नहीं देखती वह तो उस नारी में भी सौन्दर्य की छवि ढूंढती है जो मेहनतकश है। निराला की सम्वेदना ''पत्थर तोड़ने वाली'' के परिश्रम शील रूप में भी सौन्दर्य को ही देखती है। निश्चित ही नारी-सौन्दर्य की यह चेतना रीतिवादी सौन्दर्य-दृष्टि से पूर्णतः भिन्न रही है।

अतः स्पष्ट है कि सौन्दर्यानुभूति का संबंध कवि की उस मार्मिक दृष्टि में है जो असुन्दर को भी सुन्दर बना देती है। वह कठोर और भयानक में भी सुन्दरता की झलक पाती है। निराला ने सौन्दर्य की अनुभूति केवल आकर्षक और कोमल रूप में ही नहीं की वरन् शौर्य, उत्साह, पुरुषता, दीनता, कातरता, आदि भावों में भी की है। ''राम की शक्ति पूजा' और ''तुलसीदास'' में निराला की सौन्दर्यानुभूति के विशाल रूप की प्रतीति हमें होती है। सौन्दर्य चेतना के उत्कृष्ट रूप का परिचय हमें इन पंक्तियों से मिलता है-

''विच्छुरित वह्नि राजीव-नयन हत लक्ष्य बाण,
लोहित-लोचन-रावण-मद-मोचन-महीयान।''

9.5.5 प्रयोग और प्रगति

निराला काव्य का अध्ययन करने से यह स्पष्ट हो ही चुका है कि वे किसी एक युग का वाद के कवि नहीं है, वे सार्वभौम के कवि हैं। अवश्य ही साहित्य जगत में निराला का आगमन छायावादी युग से माना जाता है किन्तु उनका विराट व्यक्तित्व किसी भी 'वाद' के बन्धन में कभी भी सीमित नहीं रहा। निराला काव्य में हमें जहाँ एक ओर छायावादी काव्य की सौन्दर्यानुभूति लाक्षणिक विधान, प्रकृति प्रेम, अमांसल सौन्दर्य, रहस्यवादी भावना, गीतात्मकता, राष्ट्रीयता, मानवीयकरण एवं मानवतावाद आदि की अभिव्यक्ति देखने को मिलती है तो दूसरी ओर ओज, पौरुषता, रुढ़ियों को नकारते हुए व्यंग्य प्रहार, नए-नए प्रयोग, भाषा में विषय के अनुरूप परिवर्तन, भाव लोक का सामान्य जीवन के छोटे-छोटे उपेक्षित रूपों तक विस्तार भी मिलता है। निराला की मान्यता है कि कवि की मुक्ति के समान काव्य की मुक्ति भी होनी चाहिए। इसीलिए उन्होंने कविता को भी स्वच्छंद छंद से सजाया। निराला की ''भिक्षुक'', ''तोड़ती पत्थर'', ''विधवा'', ''कुकुरमुत्ता'', ''बादल'', ''गर्म पकौड़ी'' आदि कविताओं में प्रगतिवादी एवं प्रयोगवादी काव्य चेतना का भाव एवं शिल्प विधान देखा जा सकता है। आम बोलचाल की भाषा में निराला की सशक्त व्यंग्य कला यहाँ अपने चरम पर है।

9.5.6 मूल्य चेतना का विस्तार

कवि निराला की काव्य-गंगा ने अबाध गति से बहते हुए कई-कई रूप और आकार ग्रहण किए हैं। परन्तु उनका निर्माण कवि की मूल्य-चेतना के धरातल पर ही हुआ है। समय एवं परिस्थिति के अनुरूप निराला ने अपनी मूल्य चेतना को लचीला बनाया है। यही कारण है कि निराला की काव्य चेतना बहुरंगी है। कवि की मूल्य चेतना पर विवेकानन्द की अद्वैत दृष्टि, रवीन्द्र नाथ ठाकुर की भाव चेतना तथा राष्ट्रीय आकांक्षा की पूर्ति के लिए स्वातन्त्र्य की पुकार का व्यापक प्रभाव भी पड़ा। निराला के पास संसार के क्षुद्र और उपेक्षित समझे

जाने वाले प्राणी के लिए भी उतना ही प्यार और करुणा है जितनी विराट और महान् के लिए। कवि के अनन्त भाव ही उसकी मूल्य चेतना के उपादान हैं जिन्हें वह संसार के विभिन्न रूपों से ग्रहण करता है।

9.5.7 काव्य कलाओं की प्रेरणा या स्रोत भूमि

कवि अपनी काव्य कलाओं को जितने भी आकार-प्रकार प्रदान करता है उसकी प्रेरणा उसे अपने परिवेश से ही मिलती है। निराला ने सन् 1916 के आस-पास काव्य रचना प्रारंभ की जो अनवरत उनके जीवन काल तक चलती रही। निराला की काव्य कला को निखारने और प्रेरित करने वाले स्रोत एक ओर तो बाह्य जगत में हम विद्यमान देखते हैं तो दूसरी ओर उनकी भाव-भूमि है उनका अन्तस्। निराला का पालन-पोषण बंगाल की धरती पर हुआ। बंगला भाषा में ही उन्होंने अपनी सोच को प्रारम्भ में विकसित किया। काव्य कलाओं के सृजन की प्रेरणा भी निराला ने कवीन्द्र रवीन्द्र के काव्य संसार से प्राप्त की। स्वयं निराला ने ''रवीन्द्र कविता कानन'' पुस्तक में रवीन्द्र के प्रति अपनी श्रद्धा भावना समर्पित की है। सांस्कृतिक पुनर्जागरण काल की पृष्ठभूमि में निराला ने काव्य कलाओं का सृजन प्रारंभ किया अतः उस काल की घटनाओं ने प्रेरणा भूमि का कार्य भी किया। अपने युग की राष्ट्रीय, सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक गतिविधियों से निराला ने अपनी काव्य कला को सजाया संवारा।

9.5.8 छायावादोत्तर काव्य यात्रा

जैसा कि पूर्व पृष्ठों में यह स्पष्ट किया ही जा चुका है कि निराला की काव्य यात्रा की कोई निश्चित सीमा नहीं है, वह निरन्तर प्रवाहमान रही है। भले ही निराला ने काव्य का प्रणयन छायावादी काल की सीमा रेखा में रह कर किया किन्तु वह कभी भी वादों की परिधि में नहीं समाये। उनका व्यक्तित्व बहुआयामी रहा है। वादों को निराला की आवश्यकता भले ही हो परन्तु निराला तो हर वाद से स्वच्छंद रहे हैं। छायावाद की सीमा रेखा भी 1937-38 के आसपास जाकर समाप्त प्रायः हो जाती है। तत्पश्चात् प्रगतिवाद और प्रयोगवाद का आगमन साहित्य जगत में प्रारम्भ हुआ। निराला काव्य में हमें नव प्रयोग और नव विषय दोनो ही देखने को मिलते हैं। ''कुकुरमुत्ता'', ''बादल राग'', सर्प पकौड़ी'', ''नये पत्ते'', ''बेला'' और ''अणिमा'' आदि में ''प्रगतिवाद'' और ''प्रयोगवाद'' के रूप में जाना जाता है।

बोध प्रश्न 2

टिप्पणीः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।
ii) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1. एक पंक्ति में अपना उत्तर लिखिएः

   i) निराला की किन्हीं दो प्रगतिवादी रचनाओं के नाम लिखिए।

   .....

   .....

   .....

   ii) साहित्य जगत में निराला को किस उपाधि से सम्मानित किया जाता है।

   .....

   .....

iii) निराला की छायावादोत्तर युग की किन्हीं तीन रचनाओं के नाम लिखिए ।

.....

.....

iv) ''बादल राग'' कविता में बादल किस का प्रतीक है?

.....

.....

v) ''कुकुरमुत्ता'' कविता में कुकुरमुत्ता और गुलाब किस के प्रतीक हैं?

.....

.....

vi) निराला का पूरा नाम क्या है?

.....

.....

vii) निराला के किन्हीं दो उपन्यासों के नाम लिखिए।

.....

.....

viii) निराला मूलतः किस युग के कवि हैं?

.....

.....

2. पाँच-छह पंक्तियों में अपना उत्तर लिखिए::

i) निराला की काव्य-सम्वेदना के मुख्य आयाम क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

ii) निराला के काव्य में प्रयोग और प्रगति का क्या स्वरूप है।

.....

.....

.....

.....

iii) निराला की कविता में मूल्य-चेतना का क्या स्वरूप है।

.....

.....

.....

.....

9.6 निराला काव्य का रचना-विधान

निराला का समूचा व्यक्तित्व ही निराला है। विरोधी तत्वों के संघाता से उनके व्यक्तित्व का निर्माण हुआ है। निराला काव्य की अन्तर्वस्तु के समान ही उसका रचना विधान भी सशक्त है। निराला की अनुभूति में जितनी गहराई और पकड़ है अभिव्यक्ति में उतनी ही विलक्षणता है। कवि का रचना विधान कवि के व्यक्तित्व के अनुरूप कहीं कोमल है तो कहीं कठोर। भावों की अभिव्यक्ति के माध्यम- काव्य रूप, भाषा, बिम्ब योजना, प्रतीक-विधान एवं छंद योजना आदि सभी में निराला ने नव रचना कौशल की सृष्टि की है। यही कारण है कि निराला का रचना विधान इतना सशक्त और बोधगम्य है। आधुनिक युग के सभी नये-नये रचना शिल्पों के निर्माण में निराला बेजोड़ हैं।

9.6.1 काव्य-रूपों के नए आधार

निराला काव्य को हम मुख्यतः चार रूपों में विभक्त कर सकते हैं- गीत, प्रगीत, कथाश्रित-काव्य और गीति नाट्य। निराला ने 400 से ऊपर गीतों की रचना की है। ''गीतिका'' से निराला के गीत-लेखन का प्रारम्भ माना जाता है। ''गीतिका'' में स्वयं निराला ने अपनी गीत लेखन की विवशता को स्पष्ट किया है। उनके गीतों में भाव प्रवणता के साथ-साथ संगीत का मनोहर रूप भी देखा जा सकता है। निराला के गीतों में प्रार्थना, वेदना, करुणा, प्रेम, नारी सौन्दर्य, राष्ट्रीय भावना, प्रकृति प्रेम एवं अनन्त मानवीय भावनाओं का वैविध्य हम पाते हैं।

गीतों के अतिरिक्त ''प्रगीत'', ''काव्य का रूप विस्तार भी निराला काव्य का एक अन्य विशिष्ट्य है। प्रगीत गीत की तुलना में अधिक लम्बे होते हैं। शास्त्रीय संगीत और वैयक्तिकता के स्थान पर पाठ्य तत्व और दृश्याकंन को इसमें मुख्यता दी जाती है। प्रगीत की भाषा में शब्दों की कसावट और संक्षिप्तता के स्थान पर कवि उन्मुक्तता से काम लेता है। कहीं-कहीं प्रगीतों में आख्यानक तत्व का समावेश भी हम देखते हैं। निराला की ''सरोज-स्मृति'', ''यमुना के प्रति'', ''विधवा'', ''भिक्षुक'' एवं ''शिवाजी के पत्र'' आदि रचनाएँ प्रगीत कोटि में आती हैं।

''आख्यानक काव्य'' का सम्बन्ध सामान्य जनमानस में बसे लोक विश्वासों के आधार पर निर्भर करता है। भावावेश और सरल कल्पना इसकी प्रभाव क्षमता को बढ़ाते हैं। निराला काव्य में ''राम की शक्ति पूजा'' और ''तुलसीदास'' आख्यानक रचनाएँ मानी जाती हैं। इनमें **लोक-गाथा परम्परा** को अपनाया गया है। ''राम की शक्ति पूजा'' में प्रयुक्त लोक विश्वास को निराला ने समाज युक्त शैली में प्रस्तुत किया है। ''तुलसीदास'' भी लोक कथा के आश्रय पर विकास प्राप्त करती है। इन दोनों रचनाओं में **महाकाव्यात्मक-औदात्य** का पूर्ण विकास पाया गया है।

''गीतिनाट्य'' का रूप हमें निराला की रचना ''पंचवटी'' में देखने को मिलता है। नाट्य एवं गीति का मिश्रित रूप ''गीतिनाट्य'' कहलाता है। संक्षिप्तता स्वगत कथनों के प्रयोग द्वारा चरित्रोद्घाटन और संवादों की मार्मिकता आदि मिलकर गीति-नाट्य को प्रभावोत्पादक बनाते हैं। इस प्रकार से हम देखते हैं कि निराला के इन चारों काव्य रूपों तथा इनसे इतर

विविध काव्य रचनाओं में उनके व्यक्तित्व की अमिट छाप अंकित है। इन सीमित काव्य रूपों में निराला की असीम कल्पना शक्ति समायी हुई है और कितनी ही ऐसी रचनाएँ हैं जो इनकी प्रयोगशील प्रवृत्ति की परिचायक है।

9.6.2 काव्य-भाषा की सृजनात्मकता

निराला कुशल शब्द-शिल्पी हैं उनकी भाषा विषय के अनुरूप कहीं-कहीं तत्सम बहुल है, तो कहीं क्लिष्ट। ठेठ देशी शब्दों के प्रयोग से उन्होंने भाषा में हास्य एवं व्यंग्य की सृष्टि की है। कहीं-कहीं भाषा का रूप सरलता लिए है तो कहीं ओज से परिपूर्ण है।

कालक्रम की दृष्टि से निराला काव्य में तीन मोड़ पाये जाते हैं। प्रथम चरण की रचनाओं में- ''परिमल'', ''अनामिका'', ''गीतिका'' एवं ''तुलसीदास'' हैं। द्वितीय चरण में - ''कुकुरमुत्ता'', ''अणिमा'', ''बेला'' और ''नए पत्ते'' एवं अन्तिम चरण में, ''अर्चना'', ''आराधना'' और ''गीत गुंज'' को लिया जा सकता है। प्रथम चरण की रचनाओं में समास युक्त तत्सम बहुल शब्दावली का प्रयोग अधिक मात्रा में प्रयुक्त किया गया है। दूसरे चरण में बोलचाल की भाषा में कहीं व्यंग्य का तीखा रूप है तो कहीं हास्य-व्यंग्य की मिश्रित छाया। अंतिम चरण की रचनाओं में हिंदी का विशुद्ध एवं सरल, स्पष्ट भक्ति-भाव सम्पन्न रूप मिलता है।

''राम की शक्ति पूजा'' में निराला की भाषा का रूप समास युक्त तत्सम बहुक्त है। महाकाव्योचित औदात्य को कवि ने अपनी भाषा के द्वारा साकार किया है। यथा

विच्छुरित वह्नि-राजीव-नयन-हत-लक्ष्यवान,
लोहित लोचन-रावण मद-मोचन-महीयान,
राघव-लाघव-रावण-वारण-गतयुग्म प्रहर।

सीधी सरल भाषा में भी निराला ने अपनी संवेदना को वाणी दी है। पूर्व पंक्तियों से सर्वथा विपरीत सरल भाषा का प्रयोग भी द्रष्टव्य है-

वह तोड़ती पत्थर-
देखा उसे मैंने इलाहाबाद के पथ पर-
वह तोड़ती पत्थर।

''अनामिका'' में सरल पद-विन्यास का निराला ने अधिक प्रयोग किया है। अपनी बात को बड़ी सहजता से निराला व्यक्त करते हुए कहते हैं-

मेरे इस जीवन की है-
तू सरस साधना कविता।
मेरे तरु की है तू-
कुसुमति-प्रिय कल्पना- लतिका

यहाँ जीवन और कविता के मध्य सरस सम्बन्ध को सरल-पद-विन्यास के द्वारा निराला ने उभारा है।

द्विरुक्ति का प्रयोग निराला का काव्य भाषा की एक अन्य विशिष्टता है। भाव को अधिक बल प्रदान करने के लिए शब्दों की आवृत्ति बड़ी सार्थक भूमिका निर्वाहित करती है। यथा-

i) दिवसावसान का समय
मेघमय आसमान से उतर रही है।
वह संध्या सुन्दरी परी-सी
धीरे .....धीर.....धीरे ।

x x x

ii) बार.....बार.....गर्जन

x x x

iii) सुन-सुन घोर व्रज हुंकार।

विषय के अनुरूप निराला ने शब्दों के आधार पर छोटा बड़ा किया है। जहाँ छोटे शब्दों की आवश्यकता है वहाँ वे शिल्पी की सूक्ष्म कारीगरी का परिचय देते हैं-

हिल हिल
खिल खिल
हाथ हिलातें
तुझे बुलाते
विप्लव रव से छोटे ही हैं
शोभा पाते।

निराला काव्य की भाषा का एक महत्वपूर्ण रूप है उसका-पैनापन। व्यंग्य की सटीक चोट करते हुए निराला की भाषा का रूप भी तीखा हो जाता है। बेलाग भाषा में निराला को जो कहना होता है वह वे कह देते हैं। समाज के पूंजीपति वर्ग की शोषक मनोवृत्ति पर प्रहार करते हुए निराला की भाषा का आक्रामक रूप द्रष्टव्य है-

अबे सुन बे गुलाब,
भूल मत गर पाई खुशबू रंगों आब,
खून चूसा खाद का तूने अशिष्ट,
डाल पर इतरा रहा है कैपीटलिस्ट।

इसी प्रकार आडम्बरप्रिय व्यक्तियों की ढकोसलावृत्ति पर कटु चोट करते हुए निराला की भाषा का व्यंग्यात्मक रूप अवलोकनीय है-

मेरे पड़ोस के वे सज्जन
करते प्रतिदिन सरिता मज्जन।
बोला मैं धन्यश्रेष्ठ मानव।

कहा जा सकता है कि निराला की सृजनशीलता को साकार करने में, उसे प्राणवान बनाने और उदातत्ता की उच्च कोटि में पहुँचाने का जितना श्रेय उनकी भाव चेतना को है, उतना ही उनकी भाषा की सृजनशीलता को भी है।

9.6.3 काव्य की शब्दावली

निराला काव्य में भाषा सृजनशीलता का जो स्वरूप उभर कर हमारे सामने आता है- उसका बहुत बड़ा श्रेय उनकी कविता शब्दावली का है। काव्य शब्दावली में तत्सम शब्दों की समायुक्त सरल एवं ठेठ देशी भाषा का रूप देखा जा सकता है। उर्दू एवं अंग्रेजी शब्दावली का प्रयोग भी विषय की आवश्यकता के अनुरूप निराला ने किया है। भाषा के इन विविध रूपों की जानकारी के लिए निराला काव्य की शब्द योजना का परिचय प्राप्त करना महत्वपूर्ण है।

तत्सम शब्द-निर्धुम, निरभ्र, दिगन्त, दुर्जय, प्रसर, निर्मम, निरामय, निःस्पृह, निष्पात, नीरज, गर्जितोर्भि, रारदिन्दु, मज्जनावेदन इत्यादि।

समासान्त शब्दावली-क्लेदयुक्त, कामना-कुसुम

विच्छुरितन्वह्नि-राजीव-नयन-हतलक्ष्य-बाण, कुसुम-कपोलों, विरह-विटप,अलि-अलकों इत्यादि।

उर्दू शब्द- दग़दगा़, खूब, गैर सिर्फ़, तूफान, नाराज़, रंगों-आब, आसमानी, फ़व्वारे, फीरोज़ी, सफ़ेद आदि।

ग्रामीण ठेठ देशी शब्दों का प्रयोग निराला ने व्यंग्य को साकार करने में किया है। शब्दों के मनमाने प्रयोग भी निराला ने बहुत किए हैं। निराला की शब्द रचना का सरल, देशी और व्यंग्यपूर्ण रूप द्रष्टव्य है-

पहले तूने मुझको खींचा,
दिल देकर फिर कपड़े-सा फींचा,
अरी, तेरे लिए छोड़ी
बाम्हन की पकाई
मैंने घी की कचौड़ी।

नाद एवं संगीत की निराला को गहरी जानकारी थी। भाषा के निर्माण में शब्दावली का संगीतमय प्रयोग उन्होंने प्रायः किया है। यथा-

नूपुरों में भी रून झुन रून झुन नहीं
सिर्फ एक अव्यक्त शब्द-साचुप, चुपचुप।

निराला की काव्य शब्दावली में प्रयोगशीलता असीम है। विषय के अनुरूप निराला ने इन शब्दों का भरपूर प्रयोग किया है। शब्दावली की पकड़ ही भाषा की सृजनात्मकता का मुख्य आधार है।

9.6.4 काव्य प्रतीक

निराला का काव्य सौन्दर्य उनकी भावानुभूति पर जितना निर्भर करता है उतना ही प्रतीक-योजना पर भी। प्रतीक में भावों को साकार करने की अद्‌भुत शक्ति छुपी रहती है। निराला की काव्य चेतना ने जीवन के विविध पक्षों की मार्मिक अभिव्यक्ति की है और उसे प्रभावी बनाया है उनकी प्रतीक योजना ने।

निराला की प्रारम्भिक रचनाओं में प्रकृति और अध्यात्म का, मिश्रित रूप देखने को मिलता है। ''जूही की कली'' से ही निराला ने अपनी अनुभूति को प्रतीकात्मक सजीवता प्रदान की है। माया पाश में आबद्ध व्याकुल आत्मा (कली) परमात्मा (मलय) की सहानुभूति और कृपा से बन्धन मुक्त हो आनन्दानुभव प्राप्त करती है, उसकी प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति द्रष्टव्य है-

हेर प्यारे को सेज़ पास
नम्रमुखी हंसी खिली,
खेल रंग प्यारे संग।

''राम की शक्ति पूजा'' और ''तुलसीदास'' में निराला की विराट प्रतीक योजना का स्वरूप देखने को मिलता है। महानाश के विराट प्रतीकों-आकाश, पर्वत, सागर आदि के द्वारा मन की तामसिक शक्तियों की अभिव्यक्ति निराला ने की है। रावण की आसुरी शक्ति का प्रतीकात्मक वर्णन निराला के शब्दों में इस प्रकार से वर्णित है-

रावण-महिमा श्यामा विभावरी अन्धकार
यह रूद्र राम-राम-पूजन-प्रताप तेजःप्रखार।

देखा जाए तो ''राम की शक्ति पूजा'' और ''तुलसीदास'' निराला की सर्वश्रेष्ठ प्रतीक योजना के अनुपम काव्य हैं। ''कुकुरमुत्ता'' और ''नये पत्ते'', ''बेला'' इत्यादि में प्रतीक योजना का सामान्य धरातल पर प्रयोग भी काफी सशक्त और व्यंग्यपूर्ण रहा है।

प्रकृति के विराट् साम्राज्य को निराला ने सन्ध्या, प्रभात, तरंगों एवं बादल के द्वारा प्रस्तुत किया है। बादल-राग में प्रतीक योजना की उत्कृष्ट छाया देखी जा सकती है-

तिरता है समीर सागर पर,
अस्थिर सुख पर दुःख की छाया-

जग के दग्ध हृदय पर
निर्दय विप्लव की प्लावित माया।

बादल को निराला ने कभी विप्लव का प्रतीक माना है तो कभी युद्ध की आकांक्षा से पूर्ण।

अन्धकार के आंगन में खेलने वाला शिशु भी बादल है और कृषक के जीवन की आशा भी बादल है। अतः कह सकते हैं कि ''बादल'' के द्वारा निराला ने अमिट भावों की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति की है।

''कुकुरमुत्ता'' प्रतीक योजना की दृष्टि से निराला की सर्वाधिक क्रान्तिकारी रचना मानी जाती है। व्यंग्य शक्ति की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति का अद्वितीय रूप इस कविता की विशेषता है। महाप्राण निराला की चेतना ने जीवन के विविध रूपों को अपनी संवेदना का आधार बनाया है, यही कारण है कि उनकी प्रतीक योजना भी अनेक मुखी है। निराला के प्रतीकों में जीवन्तता और चित्रात्मकता का अद्‌भुत योग देखने को मिलता है।

9.6.5 काव्य-बिम्ब

निराला की बिम्ब योजना भी प्रतीक विधान के समान अनूठी है। जैसा कि आपको विदित ही है, बिम्ब दो प्रकार के माने जाते हैं- एक ऐन्द्रिय और दूसरे मानस। एन्द्रिय बिम्बों से तात्पर्य है जो हमारी किसी न किसी इन्द्रिय के आकर्षक का केन्द्र बनते हैं। दृश्य, आस्वादन, श्रवण इत्यादि की संवेदनाओं से युक्त बिम्ब इसी कोटि में आते हैं। बिम्ब की सफलता अपने भाव को साकार रूप देने में निहित हे।

निराला जीवन के कुशल चितेरे हैं, जिसकी सार्थकता हम उनके बिम्ब विधान में देख सकते हैं। निराला की बिम्ब योजना का भावपूर्ण रूप ''तुलसीदास'' में देखा जा सकता है। रत्नावली का भावपूर्ण अंकंन रूप ही नहीं अरूप को भी मूर्तिमान करने की सामर्थ्य रखता है। रत्नावली का विराट् योगिनी रूप द्रष्टव्य है-

बिखरी छूटीं शफरी अलकें
निष्पात नयन-नीरज पलकें,
भावातुर पृथु उरकी छलकें उपशमिता,
निःसंबल केवल ध्यान मग्न
जागी योगिनी अरूप-लग्न
वह खड़ी शीर्ण प्रिय भाव मग्न निरूपमिता।

पति के **अनाहूत** आने पर भावातुर रत्नावली के इस तेजोद्‌दीप्त बिम्ब के अतिरिक्त नारी की शान्त नीरव स्थिति का बिम्ब भी द्रष्टव्य है। विधवा नारी की मनःस्थिति का भावपूर्ण अंकन निम्न पंक्तियों में साकार हुआ है-

वह इष्ट देव के मंदिर की पूजा सी
वह दीपशिखा सी शान्त भाव में लीन।

निराला ने जीवन के विविध पक्षों का बड़ा मार्मिक अंकन किया है। ऐसे में निराला के बिम्बों में अर्थ को साकार करने की शक्ति अपार रूप अपना लेती है। जीवन की नश्वरता को कवि ने ''रेत'' के बिम्ब द्वारा इस प्रकार से मूर्त्त किया है-

स्नेह निर्झर बह गया है
रेत ज्यों तन रह गया है।

इसी प्रकार से सर्वत्र ही निराला-काव्य में बिम्बों का प्रभावी रूप देखा जा सकता है। चाहे बादल राग का ''बादल'' हो या ''कुकुरमुत्ता'' और ''गुलाब''। निराला की काव्य प्रतिभा

ने जिस भी दिशा में पग उठाया है उसी दिशा में ससीमता के दायरे को पार कर गए हैं- जिसक पुष्टि उनके काव्य बिम्बों के सफल चित्रण द्वारा की जा सकती है।

9.6.6 अप्रस्तुत विधान

कवि अपने काव्य को भाव और सौन्दर्य से सजाता है। भाव की गहराई, ऊँचाई और विस्तार अनुभूति की मार्मिकता से सम्बन्ध रखते हैं। कवि अपनी भाव चेतना को अभिव्यक्ति के सांचे में ढालता है। उसके लिए वह अपने शिल्प विधान की रचना करता है। शिल्प विधान में जो स्थान भाषा, प्रतीक और बिम्ब योजना का है, वही स्थान अप्रस्तुत योजना या अलंकार विधान का है। अप्रस्तुत योजना कवि की कुशल कल्पना शक्ति पर निर्भर करती है।

निराला काव्य में अनुप्रास, रूपक, पुनरूक्ति, उपमा, यमक इत्यादि अलंकारों के अतिरिक्त संगीत पर आधारित नाद जन्य सौन्दर्य का विशेष प्रयोग देखने को मिलता है। छायावादी कवियों का सर्वाधिक प्रिय अलंकार मानवीकरण भी निराला काव्य में बहुधा प्रयुक्त हुआ है। निराला काव्य में अलंकार योजना के कुछ मुख्य रूप द्रष्टव्य हैं:

अनुप्रासः पय पीयूषपूर्ण पानी से
भरा प्रीति का प्याला है।

एक वर्ण की आवृत्ति के रूप में अनुप्रास का प्रयोग ''नील नयन'', ''सरस साधना'', ''सौन्दर्य सरोवर'', ''सुख-स्मृति'', ''कमल-कामिनी'' इत्यादि में तथा ''नव-नव'', ''पग-पग'', ''जन-ज़न'', ''सुमन-सुमन'', ''झर-झर'', ''पवन-पवन'' इत्यादि में पुनरूक्ति प्रकाश का सौन्दर्य देखा जा सकता है।

उपमा
-''वह इष्ट देव के मन्दिर की पूजा सी''
-''क्रूर काल-ताण्डव की स्मृति रेखा सी'
-''दीप शिखा सी शान्त भाव में लीन''
- ''टूटे तरु की छुअी लता सी दीन''

यह उपमा अलंकार का अद्‌भुत-सौन्दर्य-सम्पन्न उदाहरण है।

मानवीकरण
-''सन्ध्या सुन्दरी परी सी''
- ''सखि वसन्त आया''
- ''भारति जय विजय करे''
- ''खुलती मेरी शेफाली''

इन मुख्य अलंकारों के अतिरिक्त अन्य सभी प्रमुख अलंकार निराला के अप्रस्तुत विधान में सौन्दर्य का आधान करते हैं।

9.6.7 छंद विधान

आप जानते हैं कि अक्षर, अक्षरों की संख्या एवं क्रम मात्रा, मात्रा-गणना तथा पति-गति आदि से सम्बन्धित विशिष्ट् नियमों से नियोजित पद्य रचना छंद कहलाती है। निराला को छायावादी युग के कवियों में सर्वाधिक स्वच्छन्द प्रकृति का कवि माना जाता है। व्यक्ति की मुक्ति के समान वे काव्य की मुक्ति में विश्वास करते हैं। निराला ने छंद के बंध से कविता को मुक्त किया।

निराला के प्रथम काव्य संग्रह ''अनामिका'' का आलोचक-वर्ग ने अनादर करते हुए उसमें प्रयुक्त छन्द को ''रबरछन्द'', केंचुआ छंद'' कह कर हंसी उड़ाई किन्तु निराला के लिए इन सभी मान्यताओं का कोई अर्थ नहीं था। मुक्त छंद की दृष्टि से ''जूही की कली'' का ऐतिहासिक महत्व है। हिंदी कविता में मुक्त छंद का प्रथम प्रभात यहीं से माना जाता है।

घनाक्षरी छंद के आधार पर नया प्रयोग करते हुए निराला ने ''जुही की कली'' की छंद योजना बनाई। समग्र रूप में लय के कारण उनकी रचना छन्दात्मक है तथा वर्ण, मात्रा तथा तक के बन्धन के अभाव में मुक्त है।

निराला के मुक्त छंद को अपनाने के पीछे आलोचकों की अपनी-अपनी धारणायें हैं। कुछ इसे अंग्रेजी साहित्य के अनुकरण का फल मानते हैं किन्तु अधिकांश की दृष्टि में निराला को यह प्रेरणा बंगला काव्य से मिली।

9.7 निराला काव्य में सांस्कृतिक-सामाजिक नवजागरण

हम पहले ही जान चुके हैं कि छायावादी काव्यान्दोलन का उदय नवजागरण काल की बेला में हुआ। उस समय देश में सांस्कृतिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय धरातल पर एक नयी क्रान्ति का सूत्रपात हो चुका था। भारतीय जनमानस में छायावाद या स्वच्छन्दतावाद के उदय से पूर्व आध्यात्मिक एवं राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना का प्रणयन श्री अरविन्द, रानाडे, राजा राममोहन राय, स्वामी दयानन्द, स्वामी रामतीर्थ, विवेकानन्द, टैगोर एवं गांधी आदि के द्वारा प्रारम्भ हो चुका था। अपने युग की चेतना से कवि स्वतः ही प्रेरणा प्राप्त करता है। कवि निराला पर अपने युग का प्रभाव तो पड़ा ही, साथ में रामकृष्ण मिशन से बहुत साल तक सम्बद्ध रहने के कारण मिशन की विचारधारा का विशेषकर स्वामी विवेकानन्द के ओजपूर्ण व्यक्तित्व का अधिक प्रभाव पड़ा। यही कारण है कि उनका काव्य राष्ट्रीय सांस्कृतिक नवजागरण की प्रभाती का काव्य माना जाता है।

निराला की प्रारम्भिक रचनाओं में अध्यात्म के प्रति गहरी आस्था दिखाई देती है। उनकी ''तुम और मैं'' कविता इस दृष्टि से एक विशेष अर्थ रखती है। अद्वैत दर्शन की पीठिका पर कवि ने इसकी रचना की है किन्तु इसके साथ-साथ कवि की सांस्कृतिक भावना भी स्पष्टतया देखी जा सकती है। अध्यात्म को आत्मसात करने के पश्चात ही निराला ने सांस्कृतिक नवजागरण का जयघोष अपने काव्य में किया है। ''गीतिका'', ''राम की शक्ति पूजा'' एवं ''तुलसीदास'' में निराला की सांस्कृतिक रुचि का विशेष परिचय प्राप्त होता है। माँ भारती के गौरवपूर्ण रूप को कवि ने जिस आस्था के साथ प्रस्तुत किया है, वह अपने में एक प्रार्थना का ही रूप है-

भारती जय विजय करे।
कनक शस्य कमल धरे।
लंका पद तल-शत दल
गर्जितोर्मि सागर जल
धोता शुचि चरण युगल
स्तव कर बहु अर्थ भरे

कवि जब भी संस्कृति के समुज्जवल एवं उन्नत पक्ष का उद्घाटन करता है तब उसमें राष्ट्रीय एवं सामाजिक जीवन स्वतः ही समाये रहते हैं, क्योंकि संस्कृति का अपने राष्ट्र और समाज से गहरा एवं अटूट सम्बन्ध है। निराला ''जागरण'' का महामन्त्र फूंकते हैं तो वह एकांशी न होकर संपूर्ण अर्थ में ही जागरण है। ''जागो फिर एक बार'' में निराला ने भारतवासियों को उद्घोषित करते हुए कहा है-

तुम हो महान् तुम सदा हो महान्
है नश्वर यह दीन भाव
कायरता, पामरता,
ब्रह्म हो तुम
पद रज भी है नहीं
पूरा यह विश्व भार-
जागो फिर एक बार

सामाजिक नवजागरण की दृष्टि से निराला काव्य का वह अंश महत्वपूर्ण है जहाँ उन्होंने समाज में फैली रूढ़ियों और विसंगतियों पर गहरी चोट की है। ऐसे में निराला का स्वर विद्रोही रूप अपना लेता है। एक जागरूक कलाकार होने के नाते कवि को अपने समाज की पतनोन्मुख स्थिति देखकर मार्मिक पीड़ा अनुभव होती है। ''सरोज स्मृति'' में कवि की इसी पीड़ा को देखा जा सकता है, जहाँ कवि जाति के संकीर्ण बन्धनों पर प्रहार करता है।

सोचा मन में हर बार-बार-
''ये कान्यकुब्ज-कुल कुलांगार
खाकर पत्तल में करें छेद
इनके कर कन्या, अर्थखेद
इस विषय वेलि में विष ही फल,
यह दग्ध मरुस्थल, नहीं सुजल''।

''बादल राग'' और ''कुकुरमुत्ता'' में भी सामाजिक जीवन के लिए अभिशाप बने व्यक्तियों पर कवि ने कटु व्यंग्य किया है। इसमें कवि का लोकहितवादी रूप विशेष उभरकर आता है। कुकुरमुत्ता में पूंजीपति की शोषक मनोवृत्ति पर चोट करते हुए निराला ''अबे, सुन बे गुलाब'' कहकर उसे फटकारते और दुतकारते हैं।

इस प्रकार से हम देखते हैं कि निराला काव्य में सांस्कृतिक एवं सामाजिक नवजागरण का जो गान है, वह अपने राष्ट्र को गौरवपूर्ण देखने का रागात्मक भाव लिए हैं।

9.8 सारांश

अतः निराला सम्बन्धी इस समग्र एवं गहन अध्ययन के बाद स्पष्ट हो जाता है कि निराला के विराट् व्यक्तित्व के समान मूल्यांकन के सारे मानदण्ड बौने रह जाते हैं। निराला का बादल के समान विराट्-व्यक्तित्व है जो दूसरे के लिए रिक्त होना जानता है। निराला के व्यक्तित्व का निर्माण विषम परिस्थिति से निर्मित है। आजीवन उन्हें संघर्ष करना पड़ा तथा संघर्ष का रूप कभी आर्थिक रहा तो कभी सामाजिक और वैयक्तिक। निराला में वह अद्भुत शक्ति थी जिसने, उन्हें फौलादी बनाया एवं ''महाप्राण निराला'' का गौरव प्रदान किया। उनकी संवेदना ने विराट् और महान को ही संस्पर्श नहीं किया अपितु उपेक्षित, दलित, शोषित और लघु मानव को भी साहित्य में प्रतिष्ठित किया। निराला का साहित्य विविध आयामी है जिसमें अमूल्य-मानवीय-जीवन की निधियाँ भरी पड़ी हैं। उन्होंने अपने साहित्य में जो कुछ भी सृजा है वह निराला के समान ही महान और अपरिमेय है।

बोध प्रश्न 3

टिप्पणी: i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।
ii) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1. पाँच-छह पंक्तियों में उत्तर लिखिए:

i) निराला का रचना-विधान इतना सशक्त और बोधगम्य क्यों है?

.....

.....

.....

.....

ii) निराला काव्य को हम मुख्यतः किन रूपों में विभक्त कर सकते हैं? कृतियों के आधार पर स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

iii) निराला की काव्य-भाषा में शब्दावली का क्या स्वरूप है?

.....

.....

.....

2. कविता का एक-एक उदाहरण देकर पुष्ट कीजिएः

i) निराला की कविता में भावों को साकार करने की अद्‌भुत शक्ति उनके प्रतीक-विधान में छुपी है।

.....

.....

.....

ii) निराला-काव्य की बिम्ब-योजना अर्थ को रूपायित करके भावपूर्ण अभिव्यक्ति प्रदान करती है।

.....

.....

.....

.....

iii) निराला काव्य का अप्रस्तुत-विधान कवि की कुशल कल्पना शक्ति का प्रमाण है। उपमा और मानवीकरण के उदाहरण से स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

3. निराला की छंद-योजना पर पाँच-छह पंक्तियाँ लिखिएः

.....

.....

.....

.....

.....

4. निराला के काव्य में सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय चेतना पर लगभग दस पंक्तियाँ लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

9.9 शब्दावली

छायावादोत्तर : छायावाद के बाद का

निर्बन्ध : बन्धन रहित

अद्वैत : भारतीय दर्शन परंपरा का पारिभाषिक शब्द जिसके अनुसार अ+द्वैत अर्थात जहाँ द्वैत (दो) न हो। आत्मा और परमात्मा मूलतः एक हैं दो नहीं।

क्लेदयुक्त तन : पसीने से तर बदन

विलक्षण : असाधारण या अलौकिक

प्रतिकूलताएँ : विपरीत स्थितियाँ

भाव- प्रवणता : भावों की प्रबल प्रधानता

आख्यानक काव्य : ऐसा काव्य जिसमें कथा को आधार बनाया गया है अर्थात् कर्थात्मक-कविता

महाकाव्यात्मक-औदात्यः कविता का वह श्रेष्ठतम रूप जिसमें महाकाव्य के सभी गुण उपलब्ध हों।

अनाहूत : बिन बुलाया या अनिमंत्रित

आक्रामक : आक्रमण करने वाला

मनोवृत्ति : मन की वृत्तिश्या विकार

चितेरे : चित्रकार

तेजोद्दीप्त : तेज से उद्दीप्त

आत्मसात : आत्मा को अपने अधिकार में कर लेना

अपरिमेय : जिसे नापा न जा सके अर्थात् असीम

9.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

महाप्राण निरालाः गंगा प्रसाद पाण्डेय; लोक भारती प्रकाशन; इलाहाबाद

निराला नवमूल्यांकनः डॉ. राम रतन भटनागर; स्मृति प्रकाशन, प्रभाग

निराला की साहित्य साधना, भाग-1, 2 डॉ. रामविलास शर्मा, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1971

निरालाः सं. डॉ. पद्मसिंह; राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 1969 ई.

निरालाः व्यक्तित्व और कृतित्वः डॉ. प्रेमनारायण टण्डन

निराला आलोचकों की दृष्टि मेंः सं. डॉ, वचनदेव कुमार; विहार ग्रंथ कुटीर प्रकाशन, पटना 1980 ई.

निराला की कविताएँ और काव्य भाषाः रेखा खरे; लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1989 ई.

निरालाः सं. डॉ. इन्द्रनाथ मदान

अलक्षित निरालाः डॉ. सूर्यप्रसाद दीक्षित; नचिकेता प्रकाशन, दिल्ली

निराला काव्य का अध्ययनः डॉ. भगीरथ मिश्र

निराला स्मृति ग्रंथः सं. ओंकारशरद; भारती परिषद्, प्रयाग, 1968

निराला का काव्यः डॉ. जगदीश प्रसाद श्रीवास्तव

युग कवि निरालाः सं. डॉ. रजनीकांत लहरी; निराला संगीत, साहित्य एवं नाट्य अकादमी उन्नाव, 1989

9.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1. i) सन् 1896 में
   ii) परिमल
   iii) तुलसीदास
   iv) कुकुरमुत्ता
   v) सन् 1930 में
2. i) ✓
   ii) x
   iii) ✓
   iv) x
   v) ✓

बोध प्रश्न 2

1. i) कुकुरमुत्ता और बेला

   ii) महाप्राण निराला

   iii) कुकुरमुत्ता, अपरा और अर्चना

   iv) विप्लव का

   iv) कुकुरमुत्ता सर्वहारा वर्ग का और गुलाब पूंजीपत संस्कृति का

   v) सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला

   vi) निरुपमा और अप्सरा

   vii) छायावाद के

2. i) निराला की विराट, उदात्त और विस्तृत काव्य संवेदना में छायावादी अन्तर्वस्तु के साथ-साथ प्रयोगशील एवं प्रगतिवादी विचारों की छाप भी देखने को मिलती है। उसमें राष्ट्रीय-चेतना के गौरव-ज्ञान तथा जागरण का स्वर है तो करुणा, पीड़ा, वेदना एवं संघर्ष की गाथा भी है। अद्वैत भावना का संस्पर्श है तो शोषण एवं सामाजिक विषमताओं के प्रति व्यंग्य एवं आक्रोश की भावना भी मुखर है।

   ii) निराला के काव्य में छायावादी कविता का लाक्षणिक, प्राकृतिक एवं अमांसल सौन्दर्य तो मिलता ही है साथ ही रूढ़ियों को नकारने की शक्ति, व्यंग्य और प्रहार का स्वर, नए-नए प्रयोगों से विषय, भाव एवं भाषिक उपकरणों का नव्यतम स्वरूप भी देखने को मिलता है।

   iii) निराला की कविता में मूल्यों का बहुरंगी स्वरूप देखा जा सकता है। नैतिकता, उदात्तता तथा पर दुःखकातरता जैसे भावों से समृद्ध कविता के इस सृजक की मूल्य चेतना पर विवेकानन्द की अद्वैत दृष्टि का तथा रवीन्द्रनाथ ठाकुर एवं रामकृष्ण परमहंस जैसे उत्तम पुरुष-संतों की विचारधारा का व्यापक प्रभाव रहा। यही कारण है कि ''भिक्षुक'' ''विधवा'' तथा ''वह तोड़ती पत्थर'' जैसे उपेक्षित प्राणियों के प्रति भी उनकी कविता में उतना ही प्यार और करुणा है जितनी कि विराट् और महान् के लिए।

बोध प्रश्न 3

1. i) निराला की अनुभूति में गहराई है तो अभिव्यक्ति में विलक्षण-शक्ति। व्यक्तित्व के अनुरूप ही कोमल एवं कठोर भावों-विचारों का अद्‌भुत सम्मिश्रण करने वाले इस महाकवि ने नए काव्य रूपों तथा भाषिक-उपकरणों से अपने रचना-कौशल का परिचय दिया है। बिम्ब योजना, प्रतीक विधान, मौलिक छंद निर्माण तथा अप्रस्तुत विधान की विलक्षणता सभी मिलकर निराला के रचना विधान को सशक्त, बोधगम्य तथा बेजोड़ बना देते हैं।

   ii) निराला काव्य को हम मुख्यतः चार रूपों में विभक्त कर सकते हैं। गीत, प्रगीत, कथाश्रित-काव्य तथा गीति- नाट्य। गीतिका काव्य-संग्रह में निराला के गीति-लेखन को देखा जा सकता है। ''सरोज स्मृति'', ''विधवा'', ''यमुना के प्रति'', ''भिक्षुक'' तथा ''शिवाजी का पत्र'' जैसी कविताएँ प्रगति कोटि में आती हैं। ''तुलसीदास'' आख्यानक या कथाश्रित-काव्य का उदाहरण है तथा गीति नाट्य का एक निराला की रचना ''पंचवटी'' में देखने को मिलता है।

iii) निराला कुशल शब्द-शिल्पी कहे जाते हैं। विषय के अनुरूप कोमल, कठोर तथा तत्सम बहुल या किलष्ट शब्दावली भी निराला के काव्य में है तो ठेठ देशी शब्दों का प्रभावी रूप भी उसमें देखने को मिलता है। भाषा अपेक्षानुसार सरल और ओज से परिपूर्ण होती चलती है। प्रथम चरण की रचनाओं में तत्सम बहुल शब्दावली है तो दूसरे चरण की रचनाओं में बोलचाल की भाषा-व्यंग्य एवं आक्रोश का तीखा रूप लिए है। अन्तिम चरण में हिंदी का विशुद्ध, सरल, स्पष्ट रूप मिलता है। ''राम की शक्ति पूजा'' में समाज-मुक्त तत्सम-बहुल भाषा है तो कहीं द्विरुक्ति प्रधान। कहीं-कहीं उर्दू, अंग्रेज़ी तथा ठेठ देशी शब्दों का भी सुन्दर-सटीक प्रयोग देखने को मिलता है।

2. i) देखिए, उपभाग 10.6.4

ii) देखिए, उपभाग 10.6.5

iii) देखिए, उपभाग 10.6.6

3. निराला, छंद के बंधनों से कविता को मुक्त कराने वाले वे कवि हैं जो व्यक्ति की मुक्ति के समान ही काव्य की मुक्ति की बात भी करते रहे। आलोचकों द्वारा उनके छन्दों को ''रबर छन्द'' या ''केंचुआ छन्द'' कहे जाने पर भी निराला अपनी स्वच्छन्द-धारणा पर अडिग रहे। ''जुही की कली'' से मुक्त-छंद की मौलिक स्थापना करने वाले इस महाकवि ने कविता को वर्ण, मात्रा तथा तुक के बन्धनों से मुक्ति दिलाई। निराला का यह योगदान हिंदी साहित्य में अमिट पहचान बनाए हुए है।

4. छायावादी-युग में फैल रही सांस्कृतिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय चेतना की क्रांतिमयी-लहर से प्रेरणा ग्रहण करके महाकवि निराला कविता में नवजागरण का मंत्र फूंकने वाले कवि हैं। उनकी अध्यात्म के प्रति आस्था ''तुम और मैं'' कविता में अद्वैत-दर्शन की पुष्टि से स्पष्ट होती है तो श्री अरविन्द, स्वामी दयानन्द, स्वामी रामतीर्थ, स्वामी विवेकानन्द, टैगोर एवं गांधी जैसे महान युग एवं भविष्य-दृष्टाओं की विचारधारा को कविता में ढालने से कवि की सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय चेतना का परिचय मिलता है। ''राम की शक्ति पूजा'' तथा ''तुलसीदास'' जैसी अतुलनीय रचनाएँ निराला की भारतीयता को स्थापित करती हैं तो ''विधवा'', ''भिक्षुक'' एवं ''वह तोड़ती पत्थर'' जैसी बहुत सी रचनाएँ कवि की सामाजिक चेतना को मुखर कर देती हैं। समाज, संस्कृति एवं साहित्य को राष्ट्र के परिप्रेक्ष्य में एक अभिन्न तथा अटूट सम्बन्ध के रूप में देखने वाले इस जागृति-दूत ने रूढ़ियों-विसंगतियों पर ही चोट नहीं की राष्ट्र के गौरव-गान गा-गाकर-''जागो फिर एक बार'' जैसे जागरण-मन्त्र भी जन-जन में फूंके। इस दृष्टि से निश्चित ही सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय चेतना का यह अग्रदूत हिंदी साहित्य में अपनी विशिष्ट पहचान रखता है।

इकाई 10 सुमित्रानंदन पंत और उनकी कविता

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 कवि परिचय

10.3 रचनाकार-व्यक्तित्व और रचनाएँ

10.4 काव्य-चेतना का विकास

- 10.4.1 काव्यानुभूति
- 10.4.2 प्रकृति-सौन्दर्य
- 10.4.3 जीवन दर्शन
- 10.4.4 नारी के प्रति नवीन दृष्टि

10.5 काव्य- शिल्प

- 10.5.1 काव्य-रूप या प्रगीत कला
- 10.5.2 काव्य भाषा
- 10.5.3 बिम्ब और प्रतीक
- 10.5.4 अलंकार, लय और एवं छन्द विधान

10.6 सारांश

10.7 शब्दावली

10.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

10.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

10.0 उद्देश्य

छायावादी कोमल-कान्त पदावली के लिए प्रमुख माने जाने वाले और प्रकृति से अनन्य प्रेम रखने वाले महत्वपूर्ण कवि सुमित्रानन्दन पंत के काव्य पर लिखी गई इस इकाई के अध्ययन के बाद आप- :

- पन्त जी के जीवन तथा रचनाकार-व्यक्तित्व से परिचित हो सकेंगे।
- पन्त जी की रचनाओं पर विचार कर सकेंगें।
- उनकी काव्य-चेतना के विकास की दिशा और दृष्टि का निरूपण कर सकेंगे।
- कवि की काव्यानुभूति की विशेषताएँ बता सकेंगे।
- प्रकृति सौन्दर्य की विशिष्टताओं को जान सकेंगे।
- उनके जीवन-दर्शन से साक्षात्कार कर सकेंगे।
- पंत जी के काव्य-शिल्प की आन्तरिक विशेषताओं का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
- उनकी काव्य भाषा, उपमान, बिम्ब, प्रतीक, लय एवं छंद के कलात्मक सौन्दर्य का आस्वादन कर सकेंगे, और
- कविताओं के अर्थ- विश्लेषण के माध्यम से उनकी कविताओं के सौन्दर्य की पहचान कर सकेंगे।

10.1 प्रस्तावना

सर्जनात्मक प्रतिभा से सम्पन्न रचनाकार सुमित्रानन्दन पंत आधुनिक हिंदी कविता के लिए काल खंड में रचना कार्य करते हैं, वह बीसवीं शताब्दी का सामाजिक-सांस्कृतिक जागरण-युग है। भारतीय स्वाधीनता-संग्राम के दिनों का एक विशाल जागरण उनके सामने मौजूद था। राजनीतिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में रामकृष्ण परमहंस, विवेकानंद, दादाभाई नौरोजी, बाल गंगाधर तिलक, अरविंद रवीन्द्रनाथ और गांधी जी जैसे महान व्यक्ति उस युग में सक्रिय थे। इन नेताओं दार्शनिकों और चिन्तकों में भारतीय संस्कृति की विवेक-परम्परा नये तेज प्राप्त कर रही थी। पूरा देश ब्रिटिश साम्राज्यवाद से मुक्ति के लिए संघर्ष कर रहा था और देश के बुद्धिजीवी हर कीमत पर पराधीनता की बेड़ियाँ काटना चाहते थे। इसी परिवेश में सुमित्रानन्दन पंत का आरम्भिक रचनाकार- व्यक्तित्व भी निर्मित हुआ।

बीसवीं शताब्दी का यह भारतीय नवजागरण रूढ़िवादी विरोधी नवीन दृष्टि लेकर जन्मा था। पूरे एशिया में नवजागरण की एक ऐसी हवा चल रही थी जो मानव-मुक्ति की चेतना को बढ़ाने वाली और साम्राज्यवादी शक्तियों से सीधे मुठभेड़ करने को आमादा थी। इस भारत में परम्परागत रीतिवादी दृष्टिकोण में दरार डाल कर नया लोक-जागरण राजनीति और साहित्य दोनों में उभर रहा था। सन् 1917 ई. की बोल शेविक-क्रांति ने विश्व भर में मुक्ति चेतना की लहर को नई आस्था दी थी। भारतवासी भी जमींदारों-व्यापारियों, साहूकारों-पूंजीपतियों और छोटे सामन्तों से मुक्ति पाने के लिए छटपटाने लगे था। किसान-मज़दूर आन्दोलन उठ खड़े हुए थे और उनकी धमक द्विवेदी युग (1900-1916 ई.) की हिंदी कविता में साफ सुनाई पड़ रही थी। फिरंगी सरकार ने धन की जो लूट इस देश में मचाकर पूरे देश के उद्योग धन्धों को चौपट कर दिया था- उस बर्बादी को जनता और नेता दोनों ही खुली आँखों से देख रहे थे। तिलक और गांधी के युग में हमारा स्वाधीनता आन्दोलन पूरी तरह जवान हो गया था और उसके हर स्वर में मानव-मुक्ति की पुकार थी। हिंदी का छायावाद (1916 ई.- 1936 ई.) भी इसी मानव मुक्ति-चेतना का संदेश लाया। हिंदी के छायावाद ने हर क्षेत्र में रूढ़ि विरोधी रुख अपनाया और इस दृष्टि से यह सच्चे स्वच्छन्दतावाद का सृजन संघर्ष भी है। सुमित्रानन्दन पंत इसी सृजन संघर्ष की मानसिकता से बने रचनाकार हैं। राजनीति में जो मुक्ति गांधीवादी खोज रहा था साहित्य में उसी मुक्ति भावना का परिणाम था छायावाद। पंत जी को छायावाद की इसी पृष्ठ भूमि में समझना उचित होगा।

10.2 कवि-परिचय

सुमित्रानन्दन पंत का जन्म 20 मई सन् 1900 ई. रविवार को कौसानी में हुआ। यह स्थान कूर्मांचल के अल्मोड़ा नगर से तिरपन किलोमीटर की दूरी पर हिमालय की सौन्दर्य - पुलकित घाटी में स्थित है। देवदार, चीड़ के सघन वनों की हरियाली, हिमकिरीट शिखरों की नयनाभिराम-शोभा, रंग-बिरंगे फूलों का सौन्दर्य और वनपक्षियों की चहकन में मग्न कूर्मांचल का सुन्दरतम स्थान है । प्रातः काल शिशु पंत को जन्म देकर माँ सरस्वती सदैव के लिए संसार से विदा हो गई। माँ के अभाव को प्रकृति की गोद ने पूरा किया। पंत के लिए प्रकृति की धात्री माँ बन गई। पन्त जी ने स्वयं लिखा है-

> माँ से बढ़कर रही धात्रि, तू बचपन में मेरे हित,
> धात्रि कथा रूपक भरः तूने किया जनक बन पोषण।
> मातृहीन बाल के सिर पर वरदहस्त धर गोपन।
>
> - (अंतिमा)

प्रकृति ने बालक पंत को सौन्दर्यमयी अनुरागमयी गोदी में खिलाकर बड़ा किया। पन्त जी की कविताओं में प्रकृति-सौन्दर्य का विकास इसी प्रकृति अनुराग का अंग है। प्रकृति के साहचर्य ने उनकी काव्य संवेदना पर अमिट छाप छोड़ी और प्रकृति का सौन्दर्य ही उनकी सृजन प्रेरणा बन गया। यही प्रधान कारण है कि पंत जी ने महान पुरुषों की वाणी और दर्शन से ज्यादा प्रकृति के मौन-मुखर सहवास से सीखा और सिखाया है। इस मातृहीन बालक को पिता गंगादत्त पंत ने दीर्घायु की कामना करते हुए ''हरिगिर बाबा'' को दे दिया। बाबा जी शिव के भक्त थे-उन्होंने बालक का नामकरण किया–गोसाईं दत्त। पंत जी ने बड़े होने पर ''गोसाई दत्त'' नाम छोड़कर नाम रख लिया सुमित्रानन्दन पंत। पंत जी के घर में प्रारम्भ से ही गीता-भागवत-रामायण और आरती पूजा की धूम रही। पंत जी ने लिखा है- ''चबूतरे पर बैठा मैं पढ़ता हूँ और गौरी बूढ़ी दादी'' की गोद में सिर रखकर दन्त कथाएँ और देवी-देवताओं की आरती के गीत सुनता हूँ।'' (साठ वर्ष एक रेखांकन पृ.-10) इन लोक-कथाओं, पुराण-कथाओं ने बालक की कल्पनाओं को उर्वर बनाया। 1905 ई. में पंत जी गाँव की पाठशाला में पढ़ने गए और अंग्रेजी की पढ़ाई घर पर शुरू हुई। संगीत की शिक्षा भी दी गई और शास्त्रीय-संगीत के रागों का अभ्यास भी किया। ''एकान्त प्रिय मैं निश्चित रूप से था, सुघर, सुकुमार और सम्भवतः सुन्दर भी।'' पंत जी 1910 ई. में अल्मोड़ा गए। यहीं पन्द्रह-सोलह वर्ष की आयु से नियमित कविता लिखना शुरू किया।

आठवीं कक्षा से ही पंत जी ने हिंदी कविता और संस्कृत काव्य शास्त्र पढ़ना शुरू किया। महामना मदनमोहन मालवीय, स्वामी रामकृष्ण परमहंस, स्वामी रामतीर्थ तथा विवेकानन्द के सांस्कृतिक नवजागरण का प्रभाव ग्रहण किया। कविताओं पर हरिऔध, मुकुटधर-पाण्डेय और मैथिलीशरण गुप्त जी का गहरा प्रभाव पड़ा। कालिदास, रवीन्द्रनाथ और पश्चिम के स्वच्छन्दतावादी कवि खूब पढ़े। हाई स्कूल पास कर वे प्रयाग गए और प्रयाग ही उनका काव्य-साधना का मुख्य केन्द्र बना। गांधी, मार्क्स और दार्शनिक अरविंद से विश्व-दृष्टि ग्रहण की। छायावाद के इस प्रमुख कवि ने साठ वर्षों तक निरन्तर लेखन कार्य किया और 29 दिसम्बर 1977 ई. को इस संसार से विदा हो गए।

10.3 रचनाकार-व्यक्तित्व और रचनाएँ

पंत जी के रचनाकार-व्यक्तित्व का निर्माण पूर्व और पश्चिम दोनों के नव जागरण वादी तत्वों को लेकर निर्मित हुआ। प्राचीन भारतीय साहित्य, हिंदी का मध्ययुगीन काव्य और पश्चिमी साहित्य विशेषकर अंग्रेजी के स्वच्छन्दतावादी साहित्य का उन्होंने मनोयोग-पूर्वक अध्ययन किया। भारतीय रचनाकारों में वे वाल्मीकि और कालिदास, सूरदास और घनानन्द, रवीन्द्र नाथ और भारतेन्दु आदि से विशेष रूप से प्रभावित हुए। पश्चिमी कवियों में गेटे और वर्डस्वर्थ, कॉलरिज और टेनीसन आदि के सृजन की उन पर गहरी छाप पड़ी। फलतः पन्त जी के सृजन के प्रकृति-प्रेम और सौन्दर्य बोध जैसे पक्षों पर पूर्व और पश्चिम की साहित्यिक-परम्पराओं का प्रभाव साफ देखा जा सकता है। राजनीतिक सामाजिक चिन्तन में वे गांधी, मार्क्स और अरविन्द तीनों से आन्दोलित-प्रभावित होकर लिखते रहे। रीतिवादी रूढ़ियों के प्रति वे जन्मजात विद्रोही रहे हैं। ''पल्लव'' का प्रवेश (भूमिका) उनके इसी रूढ़ि-विरोधी क्रान्तिकारी चिन्तन का सुविचारित घोषणा पत्र है। नतीज़ा यह हुआ कि वे अपने सृजन और चिन्तन में लगातार प्रगतिशील होते रहे।

रचनाएँ

कविवर पन्त जी का रचनाकाल सन् 1916 ई. से लेकर 1977 ई. तक लगभग साठ वर्षों तक फैला हुआ है। आरम्भ में उन्होंने एक ''हार'' नामक उपन्यास लिखा जिसे प्रकाशित नहीं करवाया। प्रथम रचना ''उच्छवास'' नाम से छपी। आरम्भिक कवि पंत जी में नवीन कल्पना की सृजनात्मकता का ऐसा विस्फोट हुआ जिनसे उन्हें छायावाद के प्रवर्तकों में भी माना जा सकता है। उनकी कविताएँ ''सरस्वती'' पत्रिका में छपीं और उन्हें लोक-प्रसिद्धि

भी मिली। पन्त जी की रचनाएँ इस प्रकार एक लम्बे समय का काव्य इतिहास हैं। ''वीणा'' उनका आरम्भिक काव्य संग्रह (1918 ई. में और दूसरा काव्य-संग्रह ''ग्रंथि'' 1920 ई. में प्रकाशित हुआ। तीसरे काव्य संग्रह ''पल्लव) में 1922-1926 ई. तक की बत्तीस कविताएँ हैं। चौथे काव्य संग्रह -''गुंजन'' में 1926-1932 तक की 46 कविताएँ हैं। पाचवाँ संग्रह ''ज्योत्सना'' 1934 में छायावाद की प्रगति-कला के चरम विस्तार को लेकर आया।

पन्त जी अन्य काव्य कृतियों में ''युगान्त'' (1935), ''युग वाणी'' (1937), ग्राम्या ''1939-40'' ''स्वर्ण किरण'' (1974), ''स्वर्ण धूलि'' (1947), ''मधु ज्वाल'', उमर खैय्याम का भावनुवाद ''युग पथ'' (1948 ई.), ''खादी के फूल'' (1948), ''रजतशिखर'' (1951 ई.), तथा ''शिल्पी'' ''अतिमा'', ''सौवर्ण'', ''वाणी'', ''कला और बूढ़ा चाँद हैं।'', ''लोकायतन'' (1964) कवि का प्रथम महा काव्य है। इसके बाद ''किरण वीणा'', ''पुरुषोत्तम राम'', ''पौ फटने से पहले'', ''गीत हंस'', ''पतझर'', ''एकभाव क्रांति'', ''शंख ध्वनि'' (1971), ''शशि की तरी'', ''समाधिता'', ''आस्था'', ''सत्यकाम'',''सक्रांति'' और ''गीत-अगीत'' (1977 ई.) जैसे कई काव्य संग्रह आते रहे हैं। किन्तु पंत जी की कविता- 'पल्लव-गुंजन' के बाद चुक सी जाती है और वे कवि कम, कलाकार अधिक हो जाते हैं।

अविवाहित पंत का व्यक्तित्व आवृत्तियों से पीड़ित तो रहा, लेकिन उसने मानव के आस्थावादी जीवन-मूल्यों का साथ कभी नहीं छोड़ा। पश्चिम के किसी भी आस्थावादी दर्शन से उन्होंने समझौता नहीं किया। वे अपने समस्त सृजन में मानव के कल्याण का मार्ग ही खोजते रहे हैं।

10.4 काव्य-चेतना का विकास

कविवर पन्त जी की काव्य-चेतना निरन्तर परिवर्तन और प्रगति के पथ पर अग्रसर रही है। हिंदी कविता के बहुत से काव्य आन्दोलन उनकी आँखों के सामने उठे और इतिहास बन गए। किन्तु पन्त जी छायावाद, प्रगतिवाद और फिर आध्यात्मिक चेतनावाद की ओर एकनिष्ठ होकर चलते रहे। पन्त जी की लम्बी काव्य यात्रा के विकास को हम अध्ययन की सुविधा के लिए तीन सोपानों में विभक्त कर सकते हैं। (क) छायावादी काव्यः इसे उनके सृजन युग का सौन्दर्य भी कह सकते हैं। (ख) प्रगतिवादी काव्यः इसे हम लोकमंगल वादी या शिव युग भी कह सकते हैं। (ग) आध्यात्मिक नव चेतना का अरविन्द वादी कालः इसे सत्य से साक्षात्कार का चिन्तन युग या सत्य युग भी मान सकते हैं। साहित्य में पन्त जी के काव्य चेतना के विकास के इन युगों की प्रसिद्धि ''सौन्दर्य'', ''शिव'', ''सत्य'' के नाम से रही ही है। (क) छायावादी काव्य (1916 ई. से 1935 ई. तक) पन्त जी के सृजन का सर्वोत्तम रूप उनके छायावादी काव्य में ही दृष्टिगत होता है। इस काल में ही वे ''वीणा'' लेकर आए और ''ग्रांथि'', ''पल्लव'', ''गुंजन'' तथा ''ज्योत्सना'' जैसे छायावादी काव्य मुहावरे की, भाव संकल्पना की। प्रकृति-सौन्दर्य-चेतना और शिल्पकला की चमत्कारी रचनात्मकता वे इसी समय दे गए। ''वीणा'' कवि की काव्य भावना का कोमल शिशु संसार है जिसमें प्रगीतात्मक गीत विहग कल्पना के रंगीन पंख फैलाकर उड़ते हैं। इन प्रगीतों की मूल प्रेरणा प्रकृति-सौन्दर्य है। पर कभी-कभार विवेकानंद और तिलक पर भी नवजागरणवादी रचनाएँ लिखी हैं। ''ग्रंथि'' असफल प्रेम की मार्मिक जीवनानुभव से भरी रचना है। ''शिकला सी एक बाला'' कल्पना के आकाश को घेर लेती है। फलतः यह कोमल मधुर-सौन्दर्य की रचना है।

''पल्लव'' की भूमिका का चिन्तन और प्रगीत-कला छायावादी सर्जनात्मकता का चरम उत्कर्ष है। हिंदी के सभी आलोचक ''पल्लव'' (1926) को ही पन्त जी की प्रतिभा का सर्वश्रेष्ठ प्रस्फुटन मानते हैं। इस संग्रह की भूमिका का वही महत्व हिंदी में है जो वर्डस्वर्थ की ''लिरिकल वैलेड्स'' की भूमिका का पश्चिमी स्वच्छन्दतावादी काव्यशास्त्र में रहा है। ''पल्लव'' के बाद ''गुजंन'' और ''ज्योत्सना'' जैसे काव्य-संग्रह आये पर काव्यात्मकता का वह प्रगीत संसार फिर नसीब नहीं हो सकता ।

ख) **प्रगतिवादी काव्यः** छायावाद के बाद पन्त जी पर मार्क्स की विचारधारा का प्रभाव पड़ा। वे छायावाद की भाव भूमि से हटकर मार्क्सवादी भाव भूमि की कविताएँ लिखने लगे। किन्तु पन्त जी के काव्य की यह भाव दिशा सहज नहीं थी। पन्त जी ''ज्योत्सना'' में ही मार्क्सवाद से प्रभावित हुए। किन्तु इस प्रभाव का खुलासा ''युगांत'' में दिखाई दिया। ''युगांत'' ''गुण-वाणी'' तथा ''ग्राम्या'' में इनके काव्य स्वभाव का बदलाव स्पष्टतः देखा जा सकता है। वे भाववादी-आदर्शवादी भूमि को छोड़कर यथार्थवाद की कठोर वास्तविकता-वादी भूमि पर आते हैं। उनका मूलस्वर उस प्रगतिवादी काल में ''नष्ट-भ्रष्ट'' हो रहे ''जीर्ण पुरातन'' का विद्रोही-स्वर है। ''गा कोकिल बरसा पावक कण'' इसी नवीन यथार्थवाद का मुखर रूप है। पंत जी ने लिखा है ''ज्योत्सना तक मैं सौन्दर्य-बोध की भावना से ही जगत का परिचय प्राप्त करता रहा। उसके बाद मैं बुद्धि से भी संसार को समझाने की चेष्टा करने लगा हूँ। यह कहा जा सकता है कि यहाँ मेरी काव्य साधना का दूसरा युग आरम्भ होता है।'' (आधुनिक कवि पन्त जी पृ.11) कहना न होगा कि यह दूसरा युग कल्पनावाद से निकलकर यथार्थवाद की भाव भूमि को अपनाता है।

ग) प्रगतिवादी काव्य में पंत जी ने प्रथम बार प्रकृति के सौन्दर्य लोक से निकल कर हाड़-मांस के आदमी को पहचानने की कोशिश की है। इस क्षेत्र में कोशिश पूरी भी न हो पाई थी कि वे अरविन्द-दर्शन के अध्यात्मवाद की ओर चले गए। पंत के काव्य विकास का यह तीसरा सोपान मूलतः उनके आत्म विकास और आत्म मंथन का काल है। उन्हें लगा अरविंद दर्शन ही मानवों की समस्याओं का हल है। उन्हें मनुष्य का आध्यात्मिक विकास भी जरूरी लगने लगा। ''स्वर्ण-धूलि'', ''अंतिमा'', ''रजत शिखर'' और ''लोकायतन'' इसी अध्यात्मवादी भावलोक की रचनाएँ हैं। इसके बाद पन्त जी के बहुत से संग्रह आए पर उनसे कविता जैसे छूटती गई। वे चिन्तन की झोंक के कलाकार बनते गए। ''भू जीवन हो भगवत् दर्पण'' का जीवन-दर्शन उनकी कविता को निगल गया। अतिमानस को अरविंदवादी प्रवाह से वे फिर छूट न सके।

10.4.1 काव्यानुभूति

पंत जी की काव्य अनुभूति में वास्तविक जीवनानुभवों की उतनी सम्पन्नता और गहराई कभी नहीं रही है जितनी की उनके समसामयिक कवियों में जयशंकर प्रसाद और सूर्यकांत त्रिपाठी निराला में रही है। पंत जी की आरम्भिक काव्य अनुभूतियों में शिशु सुलभ कोमलता मधु-विस्मय, जिज्ञासा, प्रकृति के प्रति रहस्य भावना, व्यक्तिवादी मनःस्थितियाँ और मूलमनोदशाओं का गायन प्रमुख रहा है। इस दृष्टि से ''छाया'', ''मौन निमन्त्रण'', ''नौका'' बिहार'' तथा ''सान्ध्य तारा'' जैसी कविताएँ उत्कृष्ट हैं। उन्होंने अपनी काव्य संवेदनाओं को सीधे-सीधे व्यक्त किया है और उनकी सौन्दर्यानुभूति में प्रकृति और मानव-सौंदर्य की अद्‌भुत छवियाँ अंकित होती हैं।

i) मैं झरता जीवन डाली से
साहलाद शिशिर का शीर्ण पात
फिर से जगती के कानन में
आ जाता नव मधु का प्रभात

X X X

ii) देख वसुधा का यौवन भार,
गूंज उठता है जब मधुमास,
विधुर उठ के से मृदु उदगार,
कुसम जब खुल पड़ते सोच्छवास।

न जाने सौरभ के निस कौन,
संदेशा मुझे भेजता मौन।

छायावाद जिस स्थूल के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह था उसके भावमय सूक्ष्म-गहन संसार के सच्चे प्रतिनिधि पंत जी रहे हैं। इनकी अनुभूति में आध्यात्मिक-छायाभास का रवीन्द्रीय रंग चढ़ा रहा। चूंकि छायावाद राष्ट्रीय जागरण की काव्यात्मक अभिव्यक्ति है और इस भाव क्षेत्र ने पंत जी की काव्यानुभूतियों को सहज और विशाल क्षेत्र दिया। इसलिए उनकी आत्माभिव्यक्ति में ''एक कर दे धरती आकाश'' की सहज उठान मिलती है। पंत जी की छायावादी काव्यानुभूतियों में घनता और भाव-सम्पदा खूब है। ''वीणा'', ''पल्लव'' और गुंजन'' आदि की कविताओं में प्रकृति के सुन्दर रूपों की आनन्दमयी अनुभूति है। यहाँ पंत जी की रहस्य-भावना भी स्वाभाविक है कृत्रिम नहीं। प्रगतिवादी काव्य जैसे ''युगांत'', ''ग्राम्या'' आदि की कविताओं में वास्तविक जीवनाभूतियों का दर्शन होने लगता है। अरविंदवादी या अन्तर चेतनावादी काव्य दौर में ''स्वर्ण शिखर'', ''स्वर्ण धूलि'' आदि में उनकी आध्यात्मिक अनुभूतियों का विस्तार प्रसार है। ये अनुभूतियाँ कृत्रिम प्रतांत होती हैं और ह्रदय को छूती नहीं है।

10.4.2 प्रकृति-सौन्दर्य

हिंदी के सभी आलोचक इस बात पर एकमत हैं कि पंत सौन्दर्य के कवि हैं। उनकी कविता में मानव तथा प्रकृति दोनों तदाकार हैं। उनकी प्रकृति-सौन्दर्य की चेतना कालिदास और वर्डस्वर्थ की स्मृति ताज़ा करती है। पंत जी के अन्तर्गगत की स्वाधीनता, प्रकृति-सौन्दर्य के चित्रण में उजागर हुई है। पंत जी को कविता कहने की प्रेरणा ही प्रकृति से मिली है। प्रकृति-सौन्दर्य ने इनके स्वच्छन्दतावादी कवि को सबसे अधिक आकृष्ट किया है-

i) पावस ऋतु थी प्रर्वत प्रदेश,
पल पल परिवर्तन प्रकृति वेश,
मेखलाकार पर्वत अपार,
अपने सहस्त्र दृग सुमन फाड़,
अवलोक रहा है बार बार
नीचे जल में निज महाकार
जिसके चरणों में पला ताल,
दर्पण-सा फैला विशाल।

ii) ह्रदय के प्रणय कुंज में लीन,
मूक कोकिला का मादक गान
बहा जब तन मन बन्धनहीन,
मधुरता से अपनी अनजान,
खिल उठी रोओं सी तत्काल
पल्लवों की यह पुलकित डाल।

राष्ट्रीय जागरण की कविताओं में देश-प्रेम की भावना प्रकृति प्रेम से ही उत्पन्न हुई। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने तो साफ कहा है- ''किसी को अपने देश से प्रेम है तो उसे अपने देश के मनुष्य, पशु, पक्षी, लता, गुल्म, पेड़, पत्ते, कण, पर्वत, नदी, निर्झर सबसे प्रेम होगा। सबको वह चाह भरी दृष्टि से देखेगा।'' पन्त जी को शुरू से ही प्रकृति की अक्षय सुषमा से प्रेम है। ''छोड़ द्रुमों की मृदु दुष्ट से देखेगा।'' पन्त जी को शुरू से ही प्रकृति की अक्षय सुषमा से प्रेम है। ''छोड़ द्रुमों की मृदु छाया तोड़ प्रकृति से भी माया, बाले तेरे बाल जाल में कैसे उलझा दूँ लोचन। प्रकृति की तरल तरंगों से तथा इन्द्रधनुष के रंगों से उन्हें अपार मोह है।

छायावादी कवि पंत जी प्रकृति की ओर न केवल झुकते हैं बल्कि उसे महत्व देकर, उसकी स्वतन्त्र सत्ता को काव्य में प्रतिष्ठित भी करते हैं। छायावाद के कवि प्रसाद, निराला, महादेवी ने भी प्रकृति को महत्व दिया लेकिन सबसे अधिक महत्व उसे पंत जी द्वारा ही

प्राप्त हुआ।''प्रथम रश्मि'' ने पंत को बाल विहंगिनी का गान सुनाया। निराकार तम से निकल वे सुन्दर सृष्टि में आ जाते हैं-

खुले पलक फैली सुवर्ण छवि, जगी सुरभि, डोले मधु बाल,
स्पन्दन, कम्पन और नवजीवन, सीखा जन ने अपनाया।

इस प्रकृति-दर्शन ने पंत जी के जीवित जगत को नया आलोक दिया उनकी संपूर्ण जीवन-दृष्टि ही बदल दी। कालिदास का मेघ स्वयं सोच नहीं सकता, पर पंत का बादल अपनी चेतना से भाव प्रकट कर सकता है। पन्त के लिए प्रकृति सखी है, आत्मीय सखी। पंत जी ने प्रकृति को मध्ययुगीन उद्दीपन मात्र से निकाल कर आलम्बन रूप में उसका स्वतंत्र सौंदर्य प्रस्तुत किया। पहली बार पर्वतीय दृश्यों का ऐसा मधुर सौंदर्य प्रस्तुत किया कि पाठक विस्मय से मुग्ध हो गए। पंत जी ने वर्ण, ध्वनि, गंध, स्पर्श और स्वाद के एन्द्रिय बोध जगाने वाले दृश्यों से कविता भर दी। वर्ण विवेक में ''लहरों पर स्वर्ण रेख सुन्दर पड़ गई नील ज्यों अधरों पर, अरुणाई प्रखर-शिशिर से डर'' या फिर ध्वनि-चित्र ''गुंजित अलि सा सागर अपार'' या ''चिड़िया करती टी वी टुट टुट।'' या फिर स्वर-मिच झींगुर सी झीनी झंकार'' जैसे कई अद्वितीय चित्र अंक दिए। पंत जी भावावेग से उत्पन्न कल्पना को ''नौका विहार'', ''मौन निमंत्रण'' जैसी कविताओं में एक ऐसा रूप-रंग देते हैं कि अनुभूति हृदय के भीतर छा जाती है। नारी भी प्रकृति है वह देवी, माँ सहचरी प्राण, बनकर सामने आती है।

10.4.4 नारी के प्रति नवीन दृष्टि

प्रकृति की भाँति पंत जी ने नारी को नवीन भाव दृष्टि से देखा है। यह सच है कि छायावादी कविता में ही नारी की प्रधानता है। छायावाद से पहले भी नारी का चित्रण कवि कर रहे थे किन्तु उनकी दृष्टि पुरुष प्रधान थी। द्विवेदी युग की कविता में नारी उद्धार का पुरुष-दम्भ ज्यादा है, ''उच्छवास'', ''आँसू'', ''ग्रांथि'' में एक बालिका के साथ अनुराग में बंधते हैं उसकी स्मृति में रूप-सौंदर्य से कल्पना भर जाती है-

स्नेह मयी, सुन्दरता मयि,
तुम्हारे रोम रोम से नारि,
मुझे है स्नेह अपार,
तुम्हारा मृदु उर ही सुकुमारि,
मुझे है स्वर्णागार

छायावादी कवियों पर नारी-सुधार-आन्दोलनों की धमक भी काफी गहरी है। इससे भी प्रसाद, पंत, निराला आदि कवियों के नारी संबंधी दृष्टिकोण में परिवर्तन हुआ। बींसवीं शताब्दी में नारी शिक्षा का जोर बढ़ा और नवजागरण के प्रति नारियाँ भी सतर्क हो गई। प्रथम बार नारी ने मुक्ति की सांस ली और वैयक्तिक प्रेम का उदय हुआ। नारी-प्रेम को इस काव्य में जो स्वच्छन्द दृष्टि मिली वह सम्बन्ध हीन और अद्भुत है। पुरानी नैतिकता के बंधन तोड़कर वह पुरुष से मिलने स्वतंत्र हो गई-

मुक्त करो नारी को मानव,
चिरंवदिनी नारी को,
युग-युग की बर्बर कारा से
जननी, सखी, प्यारी को।

छिन्न करो सब स्वर्ण पाश,
उसके कोमल तन-मन के,
वे आभूषण नहीं दाम-उसके बंदी जीवन के

पंत जी ने प्रसाद की भांति ही नारी-प्रेम की महिमा गाई। नारी ही ''असीम सौन्दर्य-सिंधु'' बनकर उनकी कल्पना का शृंगार कर उठी। हालांकि इसमें उनकी अव्यक्त-काम कुंठा का हाथ भी कम नहीं है।

स्त्री-पुरुष का एक नया रूप पंत में मिलता है। इसमें न तो प्रसाद की मधुचर्या है, न निराला का उद्दाम वेग। पंत के प्रेम में बालपन की सरलता का सौंदर्य है। डॉ. नामवर सिंह के शब्दों में ''इसमें न तो मधु की सी प्रगाढ़ मिठास है, न ज्वार का उबाल। इसमें छोटे से पहाड़ी झरने की सी तरलता है। ''बालिका की प्रेम स्मृति में पंत जी ने ह्रदय खोलकर रख दिया है। यथा-बालकों सा ही तो मैं हाय, याद कर रोता हूँ अनजान। पंत जी अत्यंत भोलेपन से प्रणय की अनुभूतियों को व्यक्त करते हैं। पंत की नारी कल्पना में बेहद भावा-वेग है- वह आधी नारी और आधी कल्पना है। वह कल्पनामयी और स्पर्श में पावन-गंगा स्नान लिए है। पंत जी की कविता ''अप्सरा'' इसी सौंदर्य की कविता है जिसमें ''पल पल का विस्मय'' का भाव है। पंत ने स्थूल नारी सौंदर्य की ओर न जाकर उसके भाव सौंदर्य पर अपने कवि मन को केन्द्रित किया। यथा तुम्हारी आँखों में कर वास प्रेम ने पाया था आधार। ''नारी के ह्रदय में झांक कर पाया- चाँदी का स्वभाव में वास, विचारों में बच्चों की सांस।'' यह सौंदर्य कामोत्तेजना उत्पन्न नहीं कर सकता-पावन गंगा स्नान ही करा सकता है। पंत जी ने अपना दृष्टिकोण इस प्रकार नारी को लेकर व्यक्त किया है कभी कवि नारी को- अकेली सुन्दरता कल्याणी, सकल ऐश्वर्यों की सन्धान! देवी, माँ, सहचरी, प्राण कहता है तो कभी प्रेम की जननी मानता है-

तुम जननी, प्रीति की स्रोतस्विनी,
तुम दिव्य चेतना दिव्यमना,
तुम स्वर्ण किरण की निर्झरिणी,
आभा देही, आभा बसना।

कितनी सुंदर हो तुम, शोभा के मंदिर-सी,
स्वप्नों के सुकुमार अजिर सी,
चंपक फूलों के तनु स्वर्णिम गौर-शिखर-सी।

10.4.4 जीवन-दर्शन

छायावादी काव्य दर्शन में पंत जी प्रकृति और नारी के नवजागरणवादी नवीन दृष्टिकोण को लेकर बहुत प्रसिद्ध हुए। उनके जीवन-दर्शन पर विवेकानन्द, उपनिष्द, राम-कृष्ण, रवीन्द्र और गांधी के विचारों की सीधी छाप पड़ी। अंग्रेजी के स्वच्छन्दतावादी कवियों ने भी उनके जीवन दर्शन को नया रुख दिया। सन् 1934 ई. के बाद पंत जी ने मार्क्सवादी जीवन दर्शन अपना लिया और लिखा-

धन्य मार्क्स चिर तमच्छन्न पृथ्वी के उदर शिखर पर,
तुम त्रिनेत्र के ज्ञान चक्षु से प्रकट हुए प्रलयंकर।

कुछ समय तक मार्क्सवाद के मानवतावादी पक्ष को पंत जी ने ग्रहण किया किन्तु शीघ्र ही वे फिर भारतीय अध्यात्म की ओर मुड़ गए। वास्तविकता यह है कि मार्क्सवाद पंत जी के कोमल प्राण, मर्धुर-मधुर व्यक्तित्व में खप भी नहीं सका। भौतिक मूल्यों की अतिशयता पंत जी के संस्कारी धर्मप्राण-मन को तृप्त नहीं कर सकी। इसलिए उनका संवेदनशील मन भौतिक मूल्यों से विद्रोह करता हुआ आध्यात्मिकता की ओर बढ़ गया। मार्क्सवाद का अनात्मवाद या निरीश्वरवाद भी उनकी जीवन दृष्टि के अनुकूल नहीं पड़ा। वे आत्मा और ईश्वर की ओर अरविंद दर्शन का सहारा पाकर ''स्वर्ण किरण'', ''अतिमा'' आदि में मुड़ गए और जीवन की सभी समस्याओं का समाधान भी उन्हें अरविंद के अन्तरचेतनावादी दर्शन में ही मिला।

मुझे असत् से ले जाओ तुम सत्य ओर,
मुझे तमस से उठा, दिखाओं, ज्योति छोर,
मुझे मृत्यु से बचा, बनाओ अमृत भोर।
बार-बार आकर अन्तर में हे चिर परिचित
दक्षिण मुख से, रुद्र करो मेरी रक्षा नित।

डॉ. नगेन्द्र का मत है कि ''उन्होंने जिस आध्यात्मिक चेतना की कल्पना की है, उसमें भौतिकता का परिष्कार है, तिरस्कार नहीं, उन्नयन है, दमन नहीं है।'' जाहिर है कि पंत जी जीवन के आस्थावादी दर्शन के कवि हैं।

बोध प्रश्न 1

1. पंत जी के जीवन का परिचय पाँच पंक्तियों में लिखिए।

.....

.....

.....

.....

2. पंत जी के रचनाकार-व्यक्तित्व की किन्हीं दो विशेषताओं का उल्लेख तीन पंक्तियों में कीजिए।

.....

.....

.....

.....

3. पंत की काव्य चेतना के विकास पर दस पंक्तियों में विचार कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

4. पंत जी की काव्यानुभूति के वैशिष्ट पर पाँच पंक्तियाँ लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

5. पंत जी प्रकृति-सौंदर्य के कवि हैं। इस कथन पर उदाहरण देते हुए सात-आठ पंक्तियाँ लिखिए।

.....

.....

.....

.....

6. पंत जी की नारी भावना का मूल वैशिष्ट्य तीन पंक्तियों में बताइए।

.....

.....

.....

.....

7. पंत जी के जीवन-दर्शन पर सात-आठ पंक्तियों में चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

.....

10.5 काव्य शिल्प

पंत जी के कथ्य और कथन के बीच किसी भी प्रकार की कोई दूरी नहीं है। उनकी काव्यानुभूति का अभिव्यक्ति पक्ष अत्यधिक समृद्ध है। अनुभूति एवं अभिव्यक्ति के अभेद ने उनकी कला को एक अखंड-सौंदर्य में ढाल दिया है। मूलतः यह कला ''अपने भीतर से मोती के पानी की तरह अन्तर-स्पर्श करके भाव समर्पण करने वाली अभिव्यक्ति की छाया'' का रूप है। डॉ. नगेन्द्र के शब्दों में पंत जी की कला तितली के पंखों से चुराई गई कला है। कवि का रचना-शिल्प कृत्रिम न होकर सहज और प्रभावशाली है। किन्तु यह उनके सहज प्रयत्न का मूर्त रूप है। पंत जी अमूर्त्त भावनाओं को मूर्त्त करने के लिए अभिव्यंजना के सभी उपकरणों का उपयोग करते हैं। उनके काव्य-शिल्प के प्रमुख उपकरण हैं। (i) काव्य रूप (ii) काव्य भाषा (iii) बिंब-विधान तथा प्रतीक विधान (iv) अप्रस्तुत-योजना; तथा (v) लय एवं छंद। यहाँ हम कला-शिल्प के इन उपकरणों का विवेचन-विश्लेषण एवं मूल्यांकन प्रस्तुत करेंगे, ताकि आप पंत जी के काव्य-सौन्दर्य के कला-पक्ष और उसके कलात्मक-सौंन्दर्य से परिचित हो सकें।

10.5.1 काव्य-रूप या प्रगीत कला

पंत जी ने छायावाद के प्रमुख काव्य रूप प्रगीत को अपनाया और उसे अपनी अंतर्मुखी भाव-साधना में ढालकर चमका दिया। उनमें प्रसाद जैसी महाकाव्यकार की सर्जनात्मक प्रतिभा भी नहीं है- और न ही निराला जैसी नूतन प्रयोगशील रचना शक्ति है। महादेवी और पंत तो विशुद्ध रूप से प्रगीतकार ही हैं।

प्रगीतकाव्य (लिरिकल पोयट्री) की चर्चा पश्चिम में काव्य-चर्चा के आरंभ से ही मिलती है। यूनान में महाकाव्य, नाटक और प्रगीत काव्य के तीन रूप मौजूद मिलते हैं। किन्तु हिंदी

में ''प्रगीत'' काव्य रूप का प्रयोग पुराना नहीं है। भारतीय काव्यशास्त्र में काव्य के गेय रूप की चर्चा तो है पर इस गेय रूप का स्वरूप विवेचन नहीं किया गया है। हिंदी की आधुनिक कविता में अंग्रेजी ''लिरिक'' के समानार्थी ''प्रगीत'' जैसा नवीन शब्द गढ़ा गया है। अंग्रेजी के वर्डस्वर्थ, शैली, कॉलरिज, कीट्स, बायरन आदि प्रगीतकारों से प्रभावित होकर आधुनिक छायावादी कवियों ने नए प्रकार की प्रगीतात्मक रचनाओं की सृष्टि की है। इस प्रगीत सृष्टि में अन्तः प्रेरणा, आत्माभिव्यक्ति और प्रबल भावावेगों का विशेष योग रहता है। इसमें भाव अनुवर्तन करने वाली शब्द-अर्थ-संगीत की लय रहती है। प्रसाद, पंत और निराला के प्रगीत पश्चिम से प्रभावित होने पर भी अपनी गीति परंपरा की मूल भूमि का ही विस्तार हैं - पश्चिम की नकल नहीं। महादेवी के शब्दों में ''साधारणतः गीत व्यक्तिगत सीमा में तीव्र सुख-दुःखात्मक अनुभूति का वह शब्द रूप है जो अपनी ध्वन्यात्मकता में गेय हो सके। ''छायावादी प्रगीतकारों के कथनों की भाव ध्वनि के अनुसार प्रगीत के मूल तत्व सात हैं (1) आत्मभिव्यक्ति की प्रबलता और संगीतात्मकता (2) व्यक्ति तत्व या वैयक्तिकता (3) भाव वेग (4) भावान्विति (5) सहज अन्तः प्रेरणा (6) संक्षिप्त रूपाकार; तथा (7) प्रवाहमयी शैली। पंत जी ने कविता का प्रेरणा स्रोत राग तत्व को ही माना है। उनकी समग्र कविता इसी राग तत्व की अभिव्यक्ति है। यह राग आत्म संगीत का रूप है। प्रसाद और पंत के प्रगीत आन्तरिक शब्द संगीत से अनुप्राणित हैं। ''गुंजन'' की तरल मधुर वर्णों की झंकार का लय युक्त रूप देखिए-

''विहग, विहग/फिर चहक उठे ये पुंज पुंज/कल कूंजित कर उर का निकुंज/ चिर सुभग, सुभग।'' जाहिर है कि पंत का स्वर स्वभावतः संगीतात्मक है। पंत जी प्रगीतों में शब्द के आंतरिक संगीत तथा स्वर संगीत का सामंजस्य कर देते हैं।

i) झम झम झम मेघ बरसते रे सावन के,
छम-छम छम गिरती बूंदे तरुओं से छन के।

ii) पावस ऋतु थी, पर्वत प्रदेश,
पल-पल परिवर्तित प्रकृति वेश
मेघलाकार पर्वत अपार
अपने सहस्र दृग सुमन फाड़।

प्रगीत मूलतः व्यक्ति प्रधान काव्य रूप है। इसमें आत्माभिव्यक्ति के अनेक रूप सक्रिय रहते हैं। वैयक्तिक भाव की अभिव्यक्ति के लिए पंत जी की कविता ''उच्छवास'' एक आदर्श प्रस्तुत करती है। यथा- ''सरल शैशव की सुखद सुधि सी वही। बालिका मेरी मनोरम मित्र थी।'' भावावेग को वे भावान्विति में बाँधते हैं। कल्पना खंड-खंड भावों की संशिलष्ट करती है। अतः प्रगीत का शुद्ध अन्तः स्फूर्त रूप भी पन्त जी में मिलता हैः

अहा, अभागिन हो तुम मुझ सी
सजनि, ध्यान में अब आया,
तुम इस तरुवर की छाया हो,
मैं इनके पद की छाया।

शब्द में गेयता, सुकुमारता, तरुल मधुरता और भाव प्रवाह ''नौका विहार '' जैसी रचनाओं में दर्शनीय है। प्रकृति का संगीत पन्त जी के प्रगीतों में लयबद्ध है। ''मौन निमंत्रण'' कविता में मधुर कोमल शब्द हीरे से जड़े हुए हैं-यथा-''न जाने, नक्षत्रों से कौन, निमंत्रण देता मुझ को मौन।'' चूंकि पंत शब्द शिल्पी हैं- उनके शब्दों में जड़ाव-कढ़ाव अधिक है। वे एक अखंड लयात्मक प्रवाह-प्रगीत में संयोजित कर देते हैं। ''परिवर्तन'' जैसी लंबी कविता और ''लोकायतन'' जैसे प्रगीतात्मक महाकाव्य को छोड़कर उनके प्रगीतों का आकार संक्षिप्त है।

पंत जी ने ''मौन निमंत्रण'' जैसे सम्बोधन गीत, ''लोकमान्य तिलक'' जैसे शोक गीत, ''स्मृति'' जैसे सॅनिट (चतुर्दश पदी) सफलता से लिखे हैं। हिंदी की प्रगीत कला पंत जी के हाथों परिष्कृत होकर ललित रूप धारण करती है।

10.5.2 काव्य भाषा

पंत जी की काव्य भाषा के लिए स्मरण रखने की विशेष बात यह है कि उन्होंने खड़ी बोली की सर्जनात्मकता को निखार कर जो छवियाँ अंकित की हैं, वे खड़ी बोली की अनुपम-श्री सम्पदा हैं। उन्होंने खड़ी बोली को उन्मुक्त कल्पना से रंग कर काव्य-भाषा में नवीन अर्थ का प्रकाश पैदा कर दिया है। द्विवेदी युगीन नीरस, इतिवृत्तात्मक और गद्यात्मक-भाषा को पंत जी ने तराशकर, मधुर, संगीतात्म्क एवं काव्यात्मक बनाया है। पंत जी ने ध्यान देकर कहा है कि ''भाषा का और मुख्यतः कविता की भाषा का प्राण राग है।'' उन्होंने सूक्ष्म से सूक्ष्म और गहन से गहन भावों को व्यक्त करने में सक्षम भाषा को प्रयोग के धरातल पर सिद्धि प्रदान की। उनकी काव्य भाषा से खड़ी बोली ने जागरण की चेतना, नया सौंदर्य बोध, कल्पना की नूतन चित्र शक्ति और शब्द चयन का औचित्य पाया। यह भी कह सकते हैं कि पंत जी शब्द-चयन, शब्द-प्रयोग, शब्द-संस्कार, शब्द-चित्र, शब्द-ध्वनि-झंकार के लिए अंग्रेजी स्वच्छन्दतावादी कवियों के पर्याप्त ऋणी हैं। वे भाषा की अभ्यास-जड़-रूढ़ियों को तोड़कर नए शब्दों में नया अर्थ भरते हैं ''सेब के रस की तरह जिसकी लालिमा भीतर न समा सकने के कारण बाहर झलक पड़ी हो।'' मूलतः पंत जी की भाषा चित्र -भाषा है, जिसमें स्वर और लय का सौंदर्य जन्मा है। भाषा के अर्थ विकास के लिए लक्षक-व्यंजना का प्रयोग उनकी कविता में विस्तार पाता है, जैसे ''सघन मेघों का भीमाकाश। गरजता है जब तमसाकार'' (मौन निमंत्रण) में कवि ने व्यंजना की स्वर संधि से तत्सम शब्दों में नयी अर्थ चेतना उत्पन्न की है। उन्होंने नए शब्दों में तत्सम तद्भव दोनों प्रकार के शब्दों में प्रत्यय लगाकर नवीनता पैदा की है- ''फेनिल'', ''रंगिणि'', ''तंरगिनि'', ''स्वामिल'', स्वप्निल'', ''तन्द्रिल'' आदि ऐसे ही प्रयोग हैं। भाव के अनुकूल वे अंग्रेजी शब्दों से निर्मित शब्दों का हिंदी रूपांतरण बेझिझक करते हैं यथा स्वर्णिम (गोल्डन), सुनहला- स्पर्श (गोल्डल टच), ''तन्द्रिल'' (ड्राइली), 'भग्न-हृदय'' (ब्रोकन हार्ट), ''अंजान''(इनोसेंट), ''रेखाकिंत'' (अंडर लाइन) आदि ''अचल रेखांकित उसे कर रही थी। प्रमुखता मुख की सुछबि के काव्य में।'' कभी कभार वे स्वर संधि से भी शब्द निर्मित करते हैं यथा शाब्दोच्छल, मदिराम, स्वर्णोत्यल आदि। जाहिर है पंत में तत्सम, तद्भव, देशज शब्दों के साथ विदेशी शब्दों का मोह भी है। वे व्याकरण की कठोरता को तोड़ते हैं- जैसे ''पल्लवों का यह सजल प्रभात'' में पुल्लिंग शब्द का स्त्रीलिंग में प्रयोग। वे छायावादी कवियों में संधि समास योग के लिए विशिष्ट कवि हैं-यथा- ''मरुदाकाश'' (सुरभि से अस्थिर मरुदाकाश)। पंत जी ने नाद-सौंदर्य के ध्वनयात्मक-वक्र प्रयोग भी खूब किए हैं- ''हैं चहक रही चिड़ियाँ। टी.वी.टी.....टुट टुट।'' काव्य भाषा, के इस प्रतिमान पर वे खरे उतरते हैं कि ''कविता के लिए चित्र भाषा की आवश्यकता पड़ती है, उसके शब्द सस्वर होने चाहिएँ, जो बोलते हों, जो अपने भावों को अपनी ही ध्वनि में आँखों के सामने चित्रित कर सकें, जो झंकार, में चित्र, चित्र में झंकार हों''(पल्लव-प्रवेश) भूमिका।

10.5.3 बिम्ब और प्रतीक

पंत जी काव्य भाषा में सांकेतिकता और प्रतीकात्मकता भाव की अभिव्यंजना के लिए एक विशेष पद्धति है। ये प्रतीकात्मकता प्रस्तुतः अर्थ से भिन्न किसी विशेष अर्थ की व्यंजना करते हैं। पंत जी ने लक्षण मूलक प्रतीकों का अधिक प्रयोग किया है। और प्रभात साम्य पर विशेष बल दिया है। आंतरिक प्रभाव साम्य के आधार पर लाक्षणिक और व्यंजनात्मक पद्धति के प्रयोगों ने असली छायावादी काव्य शैली का विकास किया है।

तुम्हारे छूने में था प्राण, संग में पावन गंगा स्नान,
तुम्हारी वाणी में कल्याणी, त्रिवेणी की लहरों की तान।

इसमें ''गंगा-समान''-सात्विक पवित्रता का तथा ''त्रिवेणी की लहरों का गान'' ''सात्विक संगीत माधुर्य'' का प्रतीक है। इन प्रतीकों की मूल भाषा में लक्षण-व्यंजना का अद्‌भुत चमत्कार है। अतः स्पष्ट है कि भाव विचार स्थिति के सूक्ष्म प्रतीक पंत जी की काव्यात्मक क्षमता को व्यक्त करते हैं। इनमें प्रत्यक्ष अनुभूति, विस्मय, रम्यता तथा कल्पना की प्रधानता हैं। अनुभूति की सूक्ष्म रोमानी आदि व्यंजना भी इन प्रतीकों की शक्ति है। पंत के नारी प्रतीक उनकी अतृप्त काम कुंठाओं का संकेत भी देते हैं।

पंत जी की काव्य भाषा अतिशय बिंब मूलक भाषा है। कल्पना के प्रति अतिरिक्त मोह होने के कारण कल्पना जन्म बिंबों में चमत्कार अधिक है। अतः इन बिंबों को ''कल्पना द्वारा सृजित ऐन्द्रियानुभव'' भी नाम दिया जा सकता है। पंत जी ने अपनी कल्पना जन्म संवेदना से वर्ण, गंध, ध्वनि स्पर्श, आदि के बड़े ही सूक्ष्म चित्र प्रस्तुत किए। रंगीन, कल्पनामय वर्ण बिंब देखिए-

''किरन तुम क्यों बिखरी हो आज। रंगी हो तुम किसके अनुराग।''

पंत जी की ''नौका विहार'' कविता में अनेक सुंदर एवं संश्लिष्ट बिंबों का एक साथ संयोजन हैः

1) मृदु मंद-मंद मंथर-मंथर, लघु तरणि, हंसिनी सी सुंदर, तिर रही खोल पालों के पर।

2) माँ के उर पर शिशु सा, समीप, सोया धारा में एक द्वीप।

3) साड़ी सी सिकुड़न थी जिस पर शशि की रेशमी विभा से भर।

रूप, रस, गंध, श्रवण, स्पर्श आदि सभी बिंब पंत के काव्य की रंगीन-चित्रशाला के अंग हैं। छायावादी कला पंत के बिंबों में अपने पूरे वैभव के साथ मौजूद है।

10.5.4 अलंकार, लय एवं छन्द विधान

अलंकारो के संदर्भ में प्रयुक्त ''अप्रस्तुत योजना'' शब्द भी अपरिचित नहीं है। सामान्य रूप से ''अप्रस्तुत'' शब्द उपमान का पर्याय है। पंत जी ने अनेक रूढ़ि मुक्त नवीन उपमानों की झड़ी अपनी कविता में लगा दी है यथा-

''मोती की लड़ियों, से सुन्दर। झरते हैं झाग भरे निर्झर।''

''मोती की लड़ियों'', की पूरी शक्ति नवीन बिंब की भाव सृष्टि में है। पंत जी रूप और भाव प्रभाव के नए बिंब भी उपमानों के माध्यम से लाने में कुशल हैं यथा-

''तड़ित सा सुमुखि तुम्हारा ध्यान। प्रभा के पलक भार उर चीर''।

प्रेयसी के रूप की विद्युत सी कौंध उठाने वाली स्मृति का समग्र प्रभाव पाठक की चेतना को कस लेता है। मूर्त्त के लिए मूर्त्त और अमूर्त्त की अप्रस्तुत योजना इस कला का वैचित्र्य है। भारतीय शब्द-अर्थ पर आधारित अलंकारों के साथ वे पश्चिम के प्रसिद्ध अलंकारों का डटकर प्रयोग करते हैं-

1) सैकत शैया पर दुग्ध धवल। तन्वंगी गंगा ग्रीष्म विरल (मानवीकरण अलंकार) जड़ को चेतन, अशरीरी को शरीरी बनाने वाला वह अलंकार (परसॉनिफकेशन) मानवीकरण पन्त जी को अत्यंत प्रिय है। विशेषण विषय (ट्रान्सफर्ड एपिथेड) का प्रयोग वे नए बिंब के लिए करते हैं, यथा- ''निज अब तरु उनके स्वप्नों से'' जैसे प्रयोग द्रष्टव्य हैं। निष्कर्ष यह है कि अलंकार योजना के द्वार पंत जी ने अपनी कला शक्ति के अर्थ संवेदन का विस्तार किया है।

पंत जी ने अर्थ के अनुकूल नूतन लयों का काव्य में प्रयोग किया है तथा प्राचीन छन्द शास्त्र के रूढ़ि बंधनों को स्वीकार नहीं किया। उन्होंने ''खुल गए छन्द के बंध, प्रास के रजत पाश'' कहकर ठीक ही कहा था।

पंत जी ने मात्रिक छन्दों को स्थान दिया तथा प्राचीन छंदों के स्वरूप को परिष्कृत किया। भावानुकूल नए छंदों का आविष्कार किया। ''रोला'' पंत जी का प्रिय छंद है। लय को मूलाधार बनाकर वे उच्छवास तथा ''परिवर्तन'' में इस छन्द का निर्झर प्रवाहित कर देते हैं। 'रोला' की पुरानी यति गति में परिवर्तन कर उसे भावानुरूप ढाल लिया। 24 मात्राओं का 'रूपमाला' और 22 मात्राओं का 'राधिका' छंद थिरकता हुआ पंत- काव्य में आता है। अराल्ली, पीयूष-वर्ष, चौपाई जैसे छन्द नयी गति से आते हैं। 16 मात्राओं के छन्द 'चौपाई' का उदाहरण लीजिएः

गिरिवर के उर से उठ उठ कर
उच्चाकांक्षाओं के तरुवर।

सखी, गोपी और चौपाई छंद भाषा के कदम खोलते हैं। 15 मात्राओं के गोपी छन्द का उदाहरण लीजिए-

गिरा हो जाती सनयन
नयन करते नीरव भाषा।

अतः पंत जी ने (1) शास्त्रीय छन्दों को नया रूप दिया (2) मुक्त छंद में स्वर लय के अद्‌भुत प्रयोग किए (3) अनेक नूतन छंदों का भाव के अनुसार आविष्कार किया (4) अतुकांत छन्द में ''ग्रंथ'' लिखकर सफलता प्राप्त की। कहा जा सकता है कि पंत जी की छन्द योजना-नूतन, समृद्ध तथा वैविध्यपूर्ण है। उन्होंने भाव-लय तथा अर्थ-लय प्रवाह के अनुकूल नए से नए छन्द प्रयोग किए हैं। अंग्रेजी की सॉनेट शैली का प्रभाव भी पंत जी पर दृष्टिगत होता है।

बोध प्रश्न 2

1. पंत जी की प्रगीत-कला की विशेषताओं को पाँच पंक्तियों में लिखिए?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. पंत जी की काव्य भाषा पर सात-आठ पंक्तियों में विचार कीजिए?

.....

.....

.....

.....

.....

3. बिंब और प्रतीक की कला ने पंत के काव्य सौन्दर्य में किस हद तक वृद्धि की है? पाँच पंक्तियों में लिखिए।

.....

.....

.....

.....

4. पंत जी नूतन छन्दों का प्रयोग करते हैं। इस कथन पर पाँच पंक्तियों में विचार कीजिए?

.....

.....

.....

.....

5. पंत जी के काव्य-बिम्ब में शोभा मात्र है या काव्य की शक्ति, तीन-चार पंक्तियों में लिखिए।

.....

.....

.....

.....

10.6 सारांश

छायावादी काव्य की अनुभूति एवं अभिव्यक्ति सम्पदा को पंत जी ने परिष्कृत करते हुए विकसित किया है। पंत जी सौन्दर्य के कवि हैं और उनका सौन्दर्य बोध देश और काल के अनुसार लगातार परिवर्तनशील एवं गतिशील रहा हैं। प्रकृति-सौन्दर्य की सूक्ष्म से सूक्ष्म संवेदना की पकड़ में छायावाद का कोई भी कवि उनका मुकाबला नहीं कर सकता। प्रगीत-कला की स्वतः स्फूर्त शक्ति का वे साहसिक और सर्जनात्मक उपयोग करते हैं। रूढ़ियों को तोड़कर उनकी कविता का स्वच्छन्दतावाद भाव एवं भाषा दोनों क्षेत्रों में अभिनव क्रान्ति उपस्थित कर देता है। खड़ी बोली की नीरसता को तोड़कर वे काव्यभाषा की काव्यात्मकता में नया रचाव लाते हैं। प्रकृति से प्राप्त ताजे उपमानों और नूतन छंद भंगिमाओं के कारण पंत जी की काव्य आधुनिक हिंदी कविता की विशिष्ट उपलब्धि है। कथ्य और शिल्प की उत्साहमय प्रयोगशीलता में वे निराला जी या प्रसाद जी का मुकाबला तो नहीं कर पाते, किन्तु खड़ी-बोली-भाषा की सर्जनात्मक ताकत को उनकी कविता से प्रयोग और प्रगति का नया काव्य-मुहावरा मिलता है।

10.7 शब्दावली

छायावाद : हिंदी क्षेत्र में 'छायावाद' शब्द का प्रचलन सन् 1918-20 ई. के आसपास हुआ छायावाद को 'स्वच्छन्दतावाद' का पर्याय माना गया कि छायावाद अनुभूति और अभिव्यंजना की नूतन-पद्धति है।

व्यक्ति प्रधान : जब कवि अन्तर्मुख होकर अपने भावों-विचारों, वृत्तियों को काव्य विषय के रूप में रचता है जब व्यक्ति-प्रधान काव्य की सृष्टि होती है। उसमें उसका अपना 'व्यक्ति' प्रधान हो जाता है।

सम्बोधन गीति : हिंदी में सम्बोधन गीत अंग्रेजी के ''ओड'' के रूप में स्वीकृत है।

प्रगीत : हिंदी में ''लिरिक'' के लिए प्रचलित शब्द रूप है। यह ''ल्यूरा'' नामक तंत्रीवाद्य के सहयोग से गाए जाने वाले गीत का यूनानी अभिधान है।

शोक गीत : अंग्रेज़ी के ''एलेजी'' का पर्याय।

सॉनेट : हिंदी में ''चतुर्दशपदी''। हिंदी के कवियों ने इस विधा को बंगला के माध्यम से ग्रहण किया। बंगला ने इसे अंग्रेजी से लिया।

ध्वनि चित्र : एक प्रकार के श्रावणिक बिम्ब होते हैं। ये वर्ण्य के ध्वनि एवं स्वरगत वैशिष्ट्य को उभारते हैं।

10.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

नगेन्द, सुमित्रानन्दन पंत, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली।

सिंह, नामवर, छायावाद, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।

पालीवाल, कृष्णदत्त, सुमित्रानन्दन पंत, साहित्य अकादेमी, नयी दिल्ली।

शुक्ल, रामचन्द, हिंदी साहित्य का इतिहास, नागरीप्रचारिणी सभा, वाराणसी

शारदा लाल, सुमित्रानन्दन पंतः कवि और काव्य, तक्षशिला प्रकाशन, दिल्ली।

10.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1. देखिए, भाग 10.2
2. देखिए, भाग 10.3
3. देखिए, भाग 10.4
4. देखिए, उपभाग 10.4.1
5. देखिए, उपभाग 10.4.2
6. देखिए, उपभाग 10.4.3
7. देखिए, उपभाग 10.4.4

बोध प्रश्न 2

1. देखिए, उपभाग 10.5.1
2. देखिए, उपभाग 10.5.2
3. देखिए, उपभाग 10.5.3
4. देखिए, उपभाग 10.5.4
5. देखिए, उपभाग 10.5.3

इकाई 11 महादेवी वर्मा और उनकी कविता

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 युग परिवेश

11.3 महादेवी वर्माः जीवन वृत्त

11.4 सृजनात्मक व्यक्तित्व

11.5 महादेवी वर्मा और उनकी रचनाएँ

11.6 काव्य सौन्दर्यः अन्तर्वस्तु

- 11.6.1 प्रणय एवं वेदनानुभूति
- 11.6.2 जड़-चेतन का एकात्म्य भाव
- 11.6.3 सौन्दर्यानुभूति
- 11.6.4 मूल्य-चेतना
- 11.6.5 काव्य-संवेदना का विस्तार या शक्ति

11.7 काव्य सौन्दर्यः रचना विधान

- 11.7.1 काव्य-रूप
- 11.7.2 काव्य-भाषा
- 11.7.3 प्रतीक-योजना
- 11.7.4 बिम्ब योजना
- 11.7.5 अप्रस्तुत-विधान

11.8 छायावादी काव्य और महादेवी वर्मा

11.9 सारांश

11.10 शब्दावली

11.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

11.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

11.0 उद्देश्य

छायावादी-काव्य की गंभीर विचारक, महान कवयित्री, विद्रोही गद्य-लेखिका तथा प्रतिष्ठा संपन्न महिला-महादेवी वर्मा के काव्य की समग्र समीक्षा से संपन्न इस इकाई के अध्ययन से आप-

- महादेवी वर्मा के जीवन, व्यक्तित्व एवं कृतित्व की विस्तृत एवं प्रामाणिक जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- छायावादी काव्य में महादेवी वर्मा की भूमिका और स्थान को जान सकेंगे।
- महादेवी के काव्य की अन्तर्वस्तु, उसकी शक्ति और उनकी सौन्दर्य-दृष्टि से अवगत हो सकेंगे।

- महादेवी के भाषिक-कौशल, काव्य-रूप एवं उनकी अभिव्यक्ति के प्रतीक एवं बिम्ब आदि उपकरणों के संदर्भ में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

11.1 प्रस्तावना

अभी तक आप छायावाद तथा उसके तीन प्रमुख कवियों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का गहन अध्ययन कर चुके हैं। इसी छायावाद की आधार-भूमि का सर्वाधिक साथ निभाने और जीवटता से निर्वाह करने का महत्वपूर्ण कार्य किया कवयित्री महादेवी वर्मा ने। किसी ने महीयसी कहकर उनकी प्रतिभा को आंका तो किसी ने ''आधुनिक युग की मीरा'' कहकर मूल्यांकित किया। किन्तु महादेवी पूरे साहित्य की कवयित्रियों में मूर्द्धन्य स्थान रखती हैं इस तथ्य को सभी ने स्वीकारा। पृथ्वी सा व्यक्तित्व और हिमालय सा कृतित्व-उनके काव्य एवं गद्यकर रूपों में एक साथ देखा जा सकता है। इसी आस्था, निष्ठा और समर्पण ने महादेवी को ''निराला वैशिष्ट्य'' प्रदान किया है। भावना का सहज और स्वतः स्फूर्त उच्छलन उनकी कविता का श्रृंगार है तो अनुभूति का तमतमाता-ताप उनकी अभिव्यक्ति की सज्जा। चिंतन के गहराते ही प्रतीक उनके काव्याकाश में धिर आते हैं और महादेवी उन्हें खराद पर चढ़ाकर ढाल देती है। एक विशिष्ट मानसिक-स्थिति द्वारा भी साधारणीकृत करने की शक्ति जिस कवयित्री में है। उसकी कविता में किसी अलौकिक करुणा और परदुख-कातरता की इसी साकार प्रतिभा के गरिमामंडित व्यक्तित्व एवं कृतित्व का विवेचन एवं अध्ययन ही हम इस इकाई में करने जा रहे हैं।

11.2 युग परिवेश

महादेवी मानती हैं कि काव्य ही मानस के सुख-दुखात्मक संवेदनों की ऐसी कथा है जो उक्त संवेदनों को संपूर्ण परिवेश के साथ दूसरे की अनुभूति का विषय बना देती है। महादेवी का कविता-संसार एक तरफ तो परिवेश से सिक्त होकर निखार पाता है तो दूसरी ओर एक विशेष-परिवेश का निर्माण कर जग को राह दिखाता है। महा-व्यक्तित्व वाली महादेवी अपने काव्य को भी युग और परिवेश की अपेक्षानुसार ही एक महाशक्ति से समृद्ध कर उसे जीवन्तता प्रदान करती है। प्रसाद का आनंद निराला का ओज तथा पंत का मार्दव जिस कल्याणकारी-त्रिशुल का निर्माण करते हैं, उसके तेज को बहुत लंबे समय तक अपने बाहुबल की मजबूत पकड़ से सहेजे रहने की शक्ति महादेवी ही बनती हैं। छायावाद के जिस ''प्रासाद'' को ये तीनों कवि मिलकर तैयार करते हैं, महादेवी वर्मा ही उत्कर्ष काव्य में उसे सजा-संवार कर ऐश्वर्य प्रदान करती है।

ऐसा युग जब मनुष्य वैज्ञानिक तथा बौद्धिक उन्नति से अहम् ग्रस्त होकर जीवन्तता के स्रोत (प्रकृति) से अपने संबंध विच्छिन्न कर बैठा तथा स्वयं को महाविजेता मानने लगा तो रवीन्द्रनाथ टैगोर एवं छायावादी कवियों ने ही इस अनर्थकारी भौतिकता के विरूद्ध विद्रोह के स्वर का शंखनाद किया था। महादेवी उसी युग की कवयित्री हैं। देश का सामाजिक, राजनीतिक तथा साहित्यिक जीवन, संयुक्त रूप से एक ही दुंदुभी-नाद से मुखरित हो रहा था- और वह नाद था प्रथम विश्व युद्ध की विनाशकारी समाप्ति तथा द्वितीय विश्वयुद्ध की भयावह संभावना से जन्म ले रही भौतिकता के विरुद्ध भावात्मक तथा आाध्यात्मिक चेतना की जागृति। अतः युग-चेतना के इस प्रतीक ने पूरे विश्व जीवन के विकास का स्वर-संधान किया। परम तत्व की भावात्मक तथा रहस्यमयी-सत्ता के इसी उद्घाटन का बीड़ा उठाया, महादेवी वर्मा ने।

कहा जाता है कि महादेवी वर्मा की कविता एकान्त क्षणों की वाणी है। किन्तु इन एकान्त-क्षणों में जब महादेवी स्वयं से साक्षात्कार करती हैं तो युग एवं जीवन की कटुता, विषमता,

दरिद्रता तथा उसमें व्याप्त अत्याचार, शोषण और उत्पीड़न के अनुभव को ही अपने काव्य का विषय बना देती हैं।

महादेवी संस्कारों से आबद्ध होने के कारण युगीन-मर्यादाओं और आदर्शों को तोड़ना या छोड़ना नहीं चाहतीं पर वे आत्मानुभवों को वैयक्तिक संदर्भों से अलग कर अमूर्त रूप में प्रस्तुत करती हैं।

पराधीन भारतवासियों को स्वतंत्रता के स्वागत हेतु संघर्ष की जो राह महर्षि अरविन्द, महात्मा गांधी, रामकृण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द तथा रवीन्द्रनाथ टैगोर आदि महान आत्माओं ने दिखाई उसी पर महादेवी ने भी अथक-यात्रा की। अंधकारमय-क्षितिज पर निर्मल ज्योति की प्रभा-विकीर्ण करते रहने के लिए उन्होंने मधुर-मधुर तथा अकम्पित दीप की प्रज्जवलित जीवन ज्योति को बुझने से ही नहीं रोका, अपितु उसे अपनी श्वासें प्रदान कर ''सदाजीवी'' भी बना दिया। अतः महादेवी का युग-बोध छायावाद के उत्कर्ष का युग-बोध है। प्रसाद, पंत और निराला छायावाद के जिन मूल्यों, स्थापनाओं और संदेशों की धरोहर सौंप कर जा रहे थे, उनकी रक्षा तथा पालन पोषण का दायित्व महादेवी को मिला था, और महादेवी ने श्वास छोड़ी पर दायित्व नहीं छोड़ा।

11.3 महादेवी वर्माः जीवन वृत्त

महादेवी वर्मा का जन्म होली के दिन सन् 1907 ई. में उत्तर प्रदेश के अंतर्गत फर्रुखाबाद नामक नगर में हुआ था । इनकी प्रारंभिक शिक्षा इन्दौर में हुई तथा प्रयाग से मैट्रिक में उत्तीर्ण होकर प्रयाग विश्वविद्यालय से ही महादेवी ने संस्कृत में एम.ए. भी किया। उनके पिता का नाम श्री गोविन्द प्रसाद वर्मा था तथा भक्त-हृदय वाली हेमरानी उनकी जन्मदात्री थीं। पिता एम.ए., एल.एल.बी करके कचहरी में वकालत करते थे। वे कर्मनिष्ठ और दार्शनिक प्रकृति के व्यक्ति थे तो माता धार्मिक प्रवृति की एक विदुषी महिला थीं।

बचपन से ही चित्रकला, संगीतकला तथा काव्यकला में रुचि और पारंगता हासिल कर लेने वाली महादेवी विद्यार्थी जीवन से ही साहित्य-जगत में प्रर्याप्त ख्याति प्राप्त कर चुकी थी। सात वर्ष की अवस्था में ''आओ प्यारे तारे आओ, मेरे आँगन में बिछ जाओ'' जैसी कविता लिखने वाली महादेवी के जीवन और साहित्य-दोनों में ही माता पिता तथा पारिवारिक परिवेश को संस्कार रूप में देखा जा सकता है। नाजुक मिज़ाज तथा नफासत पसंद लड़की आँगन लीपने और गेहूँ फटकने से लेकर रसोई बनाने और परोसने तक के कामों में भी सिद्धहस्त थी। सफाई उन्हें अत्यंत प्रिय थी। संस्कार और परिवेश से प्राप्त प्रेरणा एवं प्रतिभा को वे स्वयं स्वीकारते हुए लिखती भी हैं- ''एक व्यापक विकृति के समय निजी संस्कारों के बोझ से जड़ीभूत वर्ग में मुझे जन्म मिला है। परन्तु एक ओर साधनापूत, आस्तिक और भावुक माता तथा दूसरी ओर सब प्रकार की सांप्रदायिकता से दूर, कर्मनिष्ठ दार्शनिक पिता ने अपने-अपने संस्कार देकर मेरे जीवन को जैसा विकास दिया, उसमें भावुकता बुद्धि के कठोर धरातल पर, साधना एक व्यापक दार्शनिकता पर और आस्तिकता एक सक्रिय, पर किसी वर्ग या संप्रदाय में न बंधने वाली चेतना पर ही स्थित हो सकती थी। जीवन की ऐसी पार्श्वभूमि पर माँ से पूजा आरती के समय सुने गाए मीरा, तुलसी आदि के तथा स्वरचित पदो के संगीत पर मुग्ध होकर मैंने ब्रजभाषा में पद-रचना आरंभ की थी।

माता-पिता की पहली संतान ''महादेवी'' का जन्म बहुत लंबी प्रतीक्षा और मनौती के पश्चात हुआ था। बाबा ने ही इन्हें कुलदेवी दुर्गा के विशेष अनुग्रह का ''प्रसाद'' मानकर इनका नाम महादेवी रख डाला था। कौन जानता था कि आने वाले समय में ''महादेवी'' अपने व्यक्तित्व एवं कृतित्व से इस नाम की सार्थकता को भी सिद्ध करेंगी।

नौ वर्ष की अवस्था में महादेवी का विवाह हो गया तथा एक सप्ताह के लिए महादेवी की विदाई भी कर दी गई। परन्तु इसके तत्काल बाद महादेवी ने शिक्षा की राह चुनी और प्रथम

श्रेणी में मिडिल पास कर पूरे प्रान्त में प्रथम स्थान हासिल किया। राजकीय छात्रवृत्ति भी प्राप्त होने लगी। महादेवी की कविताएँ पत्र-पत्रिकाओं में छपने लगीं। काव्य रचना का सृजन अबाध गति से चलता रहा। ग्यारहवाँ दर्जा पास करते-करते कविता सम्मेलनों तथा वाद-विवाद प्रतियोगिताओं में भाग लेकर सैकड़ों तमगों और पुरस्कारों से सुशोभित हुई। उस समय की प्रचलित प्रसिद्ध कविताएँ प्रकाशित होने लगीं तो काव्य मर्मज्ञों का ध्यान भी इस नवीन प्रांजल-प्रतिभा की ओर आकर्षित होने लगा।

नारी-शिक्षा, नारी-जागृति और नारी आत्मसम्मान के प्रति सदैव सजग रही हैं। गरीब विद्यार्थियों की आर्थिक सहायता में उन्हें आनन्द मिलता था। सुभद्रा कुमारी चौहान से आपकी प्रगाढ़ मैत्री थी तो निराला, पंत और प्रसाद के प्रति आत्मीय अगाध-श्रद्धा। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने महादेवी के प्रति समादर व्यक्त करते हुए लिखा है- ''मेरी प्रयाग-यात्रा केवल संगम-स्नान से पूर्ण नहीं होती। उसको सर्वथा बनाने के लिए मुझे सरस्वती के दर्शनों के लिए प्रयाग महिला-विद्यापीठ भी जाना पड़ता है।

''महादेवी'' वर्षों तक प्रयाग महिला विद्यापीठ की प्राचार्या रही हैं। इलाहाबाद से प्रकाशित होने वाली ''चाँद'' मासिक पत्रिका की संपादिका भी रहीं हैं तो साहित्यकारों के साहित्य-सृजन हेतु इन्होंने प्रयाग में गंगा तट पर ''साहित्यकार संसद'' नाम संस्था की स्थापना भी की है। जीवन की विविधता का यही वैशिष्ट्य महादेवी की साहित्यिक और कलात्मक अभिव्यक्तियों में भी देखा जा सकता है। कविता, गद्य, चित्र, संगीत, राष्ट्रीय आंदोलन, नारी चेतना आदि-आदि कितने ही क्षेत्र हैं जिनमें वे अपने महीयसी-जीवन का पुण्य स्पर्श देती हुई उसे अमरता प्रदान करती चली गईं। सौंदर्य और माधुर्य की छटा बिखेरती हुई ही प्रकृति-पुत्री महादेवी 11 सितम्बर सन् 1987 को प्रकृति के अंचल में जा सोई। लेकिन उनका अमर-साहित्य सदैव जागरण का दायित्व निभाता रहेगा। महादेवी की इसी सृजनात्मक अमरता से अब हम साक्षात्कार करेंगे।

11.4 सृजनात्मक व्यक्तित्व

कवयित्री के साथ-साथ विद्रोही-गद्य-लेखिका का दायित्व निभाने वाली महादेवी कुशल चित्रकत्रीं भी रही हैं। ''दीपशिखा'' नामक काव्य कृति के प्रथम संस्करण की साज-सज्जा तथा कविता के भावानुकूल चित्र-योजना करने वाली इस अप्रतिम-विदुषी ने हिंदी, संस्कृत, पालि, प्राकृत, बंगला, गुजराती, उर्दू तथा अंग्रेजी भाषाओं पर पूरे अधिकार से अपनी ज्ञान-तूलिका का सार्थक प्रयोग किया। वेदों और उपनिषदों के साथ बौद्ध-दर्शन में गहन रूचि रखने वाली महादेवी की काव्यधारा की मूल प्रवृत्ति चिरन्तन-पीड़ा, करुणा और व्यथा से आपूर्त्त रही तो अतीत के चलचित्रों और स्मृति की रेखाओं से पथ के साथियों को रूपायित करने वाली गद्य भाषा में उनका एक अमर चित्रकार तथा अक्षय स्मृति-कोशकार का स्वरूप भी उभरकर सामने आया।

श्वेत-वस्त्र-धारण किए रहने से महाश्वेता कहलाने वाली महादेवी, विद्यार्थी जीवन से ही अत्यंत, सहज, सरल और सादे पहनावे में विश्वास रखती थी। उनको इसी सादगी भरी आत्मीयता, निर्मलता, निश्चलता तथा अकृत्रिमता में आदर, श्रद्धा तथा स्नेहिल भाव समर्पित करवा लेने की अद्‌भुत अलौकिक शक्ति भी थी। उनके गीतों और चित्रों के मूल में एक ही भाव विद्यमान रहता है, किन्तु अभिव्यक्तिगत अनिवार्य-प्रथकता के कारण गीतों में एकाग्रता और तनम्यता मिलती है तो चित्रों में संपूर्ण परिवेश, वातावरण और परिस्थिति भी साकार तथा सजीव हो उठते हैं। यह उनके सृजनात्मक-व्यक्तित्व का ही वैशिष्ट्य है कि कला के सूक्ष्म तथा गहन-संसार से उतर कर वे सहज ही हृदय तक चली आती है।

बातचीत में मोह-लेने वाला स्नेहिल व्यक्तित्व, वात्सल्य, करूणा और ममत्व-मिश्रित-पवित्रता, निर्झर की तरह अबाध गति एवं स्वर से प्रस्फुटित मुक्त हास्य, पर दुःख कातरता, पशु एवं प्रकृति-परिवार की सदस्यता, हिरण और बिल्ली की मित्रता, निर्धन, असहाय तथा

दुःखी लोगों से आत्मीयता-सभी महादेवी के विशाल संसार तथा उनकी सुरुचिमय दुनिया के परिचायक हैं। महादेवी जी के व्यक्तित्व में श्री गंगाप्रसाद पाण्डेय ने लिखा है- ''महादेवी जी के व्यक्तित्व से तुलना करने के लिए हिमालय ही सबसे अधिक उपयुक्त जान पड़ता है। उनके व्यक्तित्व का वही उन्नत और दिव्य रूप, वही विराट और विशाल प्रसार, वही अमल धवल तथा अचल-अटल धीरता-गंभीरता, वही करुणा एवं तरलता और सबसे बढ़कर सुखकर शुभ हास। यही तो महादेवी है।'' (आजकल, जुलाई 1951)

एकान्तप्रिय और अन्तर्मुखी व्यक्तित्व वाली तथा आत्मपरक भावभूमि पर विचरण करने वाली महादेवी बाल्यावस्था में फूलों को इसलिए न तोड़ती थीं कि वे मुरझा जाएंगे। पशु-पक्षियों का लालन-पालन, आहत जीवों की सेवा-सुश्रुषा, बहेलियों द्वारा पकड़े गए पक्षियों को खरीदकर पिंजर-मुक्त कर देने का दायित्व, प्रकृति की जड़ता में चेतना को संचरित करने की अतृप्त-लालसा-सभी महादेवी की आन्तरिक शक्ति तथा उसके अक्षय-कोष के परिचायक हैं।

ब्रहम्-वियुक्त-आत्मा के आर्द्र-क्रन्दन तथा दृढ़ अडिग और अकंपित आस्था के उज्वल प्रकाश से जिसका समस्त जीवन और काव्य आलोकित है- वह महादेवी निःसंदेह महान हैं। आठ वर्ष की अवस्था में जो प्रतिभा इन पंक्तियों का सृजन करती है, उस सर्जनात्मक-व्यक्तित्व के विषय में और कहा भी क्या जा सकता है-

धूलि से निर्मित हुआ है यह शरीर,
और जीवन-वर्ति भी प्रभु से मिली अभिराम।
प्रेम का ही तेल भर जो हम बने निःशोक,
तो नया फैले जगत के तिमिर में आलोक।

नारी वर्ग के प्रति हो रहे अत्याचार और अन्याय के विरुद्ध आवाज़ बुलन्द कर उसकी सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक समस्याओं का एक समाज-शास्त्री की भांति विश्लेषण-विवेचन करने वाली महादेवी की गद्य रचनाओं में गाम्भीर्य, प्रौढ़ता तथा उनके व्यक्तित्व की प्रांजलता देखी जा सकती है। विधवाओं, वैश्याओं और अवैध सन्तानों के प्रति सहानुभूति के पुण्य अर्पित करने वाली महादेवी, कारण बनने वाले समाज को क्रान्ति के स्वर में ललकारती भी हैं। विवेक, दूर-दृष्टि, गहन अध्यवसाय तथा व्यापक एवं विस्तृत अनुभव के आधार पर वे तटस्थ होकर विचार प्रस्तुत करती हैं- ''स्त्री में माँ का रूप ही सत्य, वात्सल्य ही शिव और ममता ही सुन्दर है। जब वह इन विशेषताओं के साथ पुरुष के जीवन में प्रतिष्ठित होती है तब उसका रिक्त स्थान भर लेना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य हो जाता है।''

इस प्रकार संगीत, चित्र, काव्य,गीत, रेखाचित्र, संस्मरण, संस्मरणात्मक रेखाचित्र, निबन्ध, अनुवाद, काव्यमय चित्र, चित्रमय काव्य तथा चित्रगीत जैसी अनेक विधाएँ, जिनमें अन्य कई विधाएँ भी समा जाती हैं- महादेवी के सृजनमय- व्यक्तित्व की पहचान है। भाव हो या कला-सभी स्थानों पर महादेवी अप्रतिम हैं, अतुलनीय हैं, श्लाघनीय हैं। नीरजा, सान्ध्यगीत और प्रौढ़तम- कृति-''दीपशिखा'', सब के सब मील के पत्थर बनते चले जाते हैं।'' ''दीपशिखा'' को देखकर ही निराला और राष्ट्रकवि गुप्त जी ने भी मुक्त-कंठ से प्रशंसा की थी-

हिंदी के विशाल मन्दिर की वीणा-वाणी,
स्फूर्ति-चेतना-रचना की प्रतिभा कल्याणी
-निराला

सहज भिन्न दो महादेवियों के एक रूप में मिली मुझे,
बता बहन साहित्य-शारदा या काव्यश्री कहूँ तुझे।
-मैथिलीशरण गुप्त

स्पष्ट है कि जिसका कृतित्व भूमि सा महान तथा व्यक्तित्व अम्बर सा असीम ठहरता है, वह महादेवी हिंदी साहित्य में ही नहीं, विश्व साहित्य में ''ओज के शंख'' तथा ''आस्था की वंशी'' की तरह सदैव गुंजरित होती रहेंगी।

11.5 महादेवी वर्मा और उनकी रचनाएँ

भाव विचार और कर्म के सौन्दर्य से सहज ही आकर्षित हो जाने वाली महादेवी गद्य और पद्य में बराबर अधिकार रखती हैं। अपनी जीवन यात्रा निरंतर साहित्य- सृजन की राह से पूर्ण करने वाली महादेवी वर्मा की प्रमुख काव्य कृतियाँ हैं- नीहार (1930), रश्मि (1932), नीरजा (1935), सांध्य गीत (1936), इन्हीं कृतियों के 185 गीतों का संग्रह यामा (1936), दीपशिखा (1942), साधिनी (1964), तथा प्रथम आयाम (1984)। इसके अतिरिक्त ''सप्तपर्णा'' (1959), एक ऐसा काव्य संग्रह है जिसमें ऋग्वेद के आधार पर तथा अन्य भाषाओं से अनूदित कुछ कविताएँ संकलित की गई हैं। बाल्मीकि, कालिदास, अश्वघोष तथा भवभूति जैसे कवियों के मार्मिक एवं महत्वपूर्ण काव्यांशों का काव्य-बद्ध अनुवाद महादेवी ने स्वयं किया है। ''बंग-दर्शन (1943-44), नामक काव्य संग्रह में बंगाल के अकाल पर विभिन्न कवियों की कविताओं को संकलित किया गया है। प्राचीन काल से आधुनिक काल तक के कवियों की हिमालय पर लिखी राष्ट्रीय गौरव और साहस जुटाने वाली कुछ कविताएँ ''हिमालय'' (1963) नामक संग्रह में संकलित की गई हैं।

महादेवी की गद्य रचनाओं में ''अतीत के चलचित्र'' (1941), श्रृंखला की कड़ियाँ (1942) ''स्मृति की रेखाएँ तथा ''विवेचनात्मक गद्य'' (1943), ''पथ के साथी'' एवं ''क्षणदा'' (1956) और आलोचनात्मक निबंध संग्रह ''साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध (1962) प्रमुख हैं। इनके अतिरिक्त महादेवी जी द्वारा लिखित भूमिकाएँ, उनके द्वारा दिए गए भाषण एवं साक्षात्कार भी उनके गद्य-गौरव की घोषणा करते हैं। विवेचनात्मक एवं आलोचनात्मक नारी-समस्या प्रधान तथा संस्मरण और रेखाचित्र विषयक गद्य में महादेवी अपने अनूठे और अप्रतिम रूप में सामने आती हैं। पाठक वर्ग की चेतना को झकझोर कर हृदय के मर्म को छू लेना उनकी सूक्ष्म एवं प्रखर गद्य लेखिका का महानतम गुण है।

महादेवी की काव्य-यात्रा उनकी काव्य कृतियों तक पहुँचकर अव्यक्त के प्रति जिज्ञासा या विस्मय का अनुभव करते हुए प्रिय वियोग की वेदना को अभिव्यक्त करती है तो कभी प्रिय के अभाव में विवल होकर प्रिय-मिलन को आतुर हो उठती है। कल्पना, चिंतन और अनुभूति का अद्‌भुत मिश्रण करती हुई आनन्द की ओर अग्रसर महादेवी अश्रुमुखी वेदना के कणों को भी आत्मानन्द के मधु में कर इस शुष्क जग का आर्द्र-सिंचन कर देती है। सघनतम-अनुभूति की पूर्णतम-तपस्या, जीवननिष्ठा तथा आध्यात्मिक आस्था की ऊर्जा बनकर महादेवी के निष्काम-कर्म और द्वन्द्वरहित प्रेमभाव का ''प्रसाद'' तैयार करती है। अहंभाव से ऊपर उठकर सर्वव्यापी आत्मा की ''व्यक्ति-रहित'' स्थिति विकसित होती है और परमसत्ता के साथ भावनात्मक एक्य स्थापित करती हुई असीम प्रेम के दिव्यानन्द तक पहुँच जाती है। अतः प्रौढ़ से प्रौढ़तम तथा असीम से असीमतम तक की इस काव्य यात्रा में भाषा के अनुपम, अद्‌भुत और अप्रतिम उपकरण ''दीपशिखा'' लेकर कवयित्री का मार्ग प्रशस्त करते चलते हैं और महादेवी कोमलतम स्वर लहरियों की नौका पर सवार होकर इस महायात्रा को संपन्न करती हैं। छायावादी साहित्य के जाने-माने आलोचक डॉ. नगेन्द्र ने महादेवी जी की कविता का मूल्याकंन करते हुए कहा भी है -''महादेवी के काव्य में हमें छायावाद का शुद्ध अमिश्रित रूप मिलता है। छायावाद की अंतर्मुखी अनुभूति, अशरीरी प्रेम जो बाह्य-तृप्ति न पाकर अमांसल-सौंदर्य की सृष्टि करता है, मानव की प्रकृति के चेतन संस्पर्श, रहस्य-चिन्तन (अनुभूति नहीं), तितली के पंखों और फूलों की पंखुड़ियों से चुराई हुई कला और इन सबसे ऊपर स्वप्न-सा पूरा हुए एक पायवी वातावरण-ये सभी तत्व जिसमें घुले मिलते हैं, वह है महादेवी की कविता।'' (विचार और अनुभूति पृ. 130)

महादेवी की कृतियों की और इनमें मिलने वाली संवेदना की इस संक्षिप्त चर्चा के बाद अब हम महादेवी के काव्य-सौंदर्य पर सोदाहरण विचार करेंगे।

बोध प्रश्न

टिप्पणी: i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।
ii) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1. नीचे दिए गए कुछ कथन सही हैं तथा कुछ गलत। उपयुक्त चिन्ह से चिह्नित कीजिए:

   i) महादेवी छायावाद में ही नहीं, पूरे आधुनिक हिंदी साहित्य की कवयित्रियों में भी मूर्द्धन्य स्थान रखती हैं ( )

   ii) महादेवी ने कविता-लेखन कॉलेज की शिक्षा के उपरांत प्रारंभ किया। ( )

   iii) महादेवी नारी-शिक्षा, नारी -जागृति और नारी आत्म सम्मान के प्रति सदैव सजग एवं जागरुक रहीं ( )

   iv) महादेवी जितनी उच्च कोटि की कवयित्री हैं उतनी ही उच्च कोटि की गद्यकार नहीं ( )

   v) महादेवी को संस्कार और परिवेश से ही साहित्यिक प्रेरणा प्रतिभा एवं आस्था प्राप्त हुई। ( )

2. एक दो पंक्तियों में उत्तर लिखें:

   i) महादेवी को किन दो उपाधियों से विभूषित किया जाता है?

   .....

   .....

   .....

   .....

   ii) महादेवी कौन-सी पत्रिका का संपादन करती थीं?

   .....

   .....

   .....

   .....

   iii) महादेवी ने कौन-सी ''साहित्यिक-संस्था'' की स्थापना की थी और कहाँ की थी?

   .....

   .....

   .....

   .....

iv) महादेवी कौन-कौन सी भाषाओं में निपुण थी?

.....

.....

.....

.....

v) महादेवी काव्य के अतिरिक्त अन्य किन विधाओं एवं दिशाओं में प्रवीण थीं।

.....

.....

.....

.....

3. नीचे प्रश्न के साथ कुछ विकल्प दिए जा रहे है। उत्तर के लिए सही विकल्प को चिन्हित कीजिए।

i) महादेवी का जन्म सन् 1911/1924/1907 में हुआ।

ii) महादेवी का विवाह 18/12/9 वर्ष की अवस्था में हो गया था।

iii) महादेवी के काव्य संग्रह ''दीपशिखा'' का प्रकाशन सन् 1942/1964/1936 में हुआ।

iv) महादेवी का आलोचनात्मक निबंध संग्रह ''साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध'' कृति सन् 1954/1962/1942 में प्रकाशित हुई।

v) ''बता बहन साहित्य-शारदा या काव्यश्री कहूँ तुझे'' - महादेवी के लिए ये पंक्तियाँ निराला/प्रसाद/मैथिलीशरण गुप्त ने कही थीं।

11.6 काव्य सौंदर्यः अन्तर्वस्तु

जीवन-नदिया सुखःदुःख के दो किनारों के बीच निरंतर बहते हुए परम आनन्द के महासागर में मिलकर ही अपनी यात्रा के स्थूल अंत की घोषणा करती है और पुर्नयात्रा की तैयारी में जुट जाती। सृष्टि का यह चक्र ही मिलन और विरह के खेल खेलता है तथा संवेदनशील मानव हृदय को इस संसार के अविच्छिन्न न छोड़ने का हठ ''शाश्वत प्यास'' बनाए रहता है तो प्रियतम में मिलकर लीन और तदाकार हो जाने की आंकाक्षा जीवन के विकास की चरम-सीमा पर लेना चाहती है। महादेवी ने जीवन के इसी गूढ़ तथा गहन रहस्य से वेदना के आनन्द में साक्षात्कार किया तथा उसे काव्य-संसार के पावन बंधनों में जकड़ दिया-

चिर मिलन-विरह-पुलिनों की
सरिता हो मेरा जीवन,
प्रतिपल होता रहा हो
युग फूलों का आलिंगन।

योग से वियोग में आने की स्थिति की मार्मिक वेदना के उपहार स्वरूप प्राप्त अश्रुओं से एक नया संसार बना लेने वाली महादेवी की कविता प्रकृति से साक्षात्कार की ही नहीं तदाकार की भी कविता है। मनुष्य इसी प्रकृति का पुत्र है और वही कविता में ढल-ढल

कर रूपायित होता है। 'रश्मि' की भूमिका में महादेवी कहती भी हैं - ''मेरे लिए तो मनुष्य एक सजीव कविता है। कवि की कृति तो उस सजीव कविता का शब्दचित्र मात्र है जिससे उसका व्यक्तित्व और संसार के साथ उसकी एकता मानी जाती है। वह एक संसार में रहता है और उसे अपने भीतर एक और इस संसार से अधिक सुकुमार संसार बसा रखा है। मनुष्य में जड़ और चेतन दोनों एक प्रगाढ़ आलिंगन में आबद्ध रहते हैं। उसका बाह्यकार पार्थिव और सीमित संसार का भाग है और अन्तस्तल अपार्थिव असीम का- एक उसको विश्व से बांधे रखता है तो दूसरा उसे कल्पना द्वारा उड़ाता ही रहना चाहता है।''

प्रकृति और प्रकृति पुत्रों के मधुर तथा अनुपम चित्रों को शब्दांकित करने वाली इस कवयित्री के हृदय में स्नेह, संवेदना, सहानुभूति, करुणा तथा साधना के भाव जगाने की सहज क्षमता है। साधना पथ की अथक पथिक बनी महादेवी आँसू के कणों को अपना पाथेय बनाकर चलती चली जाती है। महादेवी की पथ-यात्रा में पथ ही साथी है और वेदना की साधनात्मक सजगता तथा जीवन के सभी संकल्पों का समन्वय ही उत्साह साहस और कर्म-प्रेरणा का आवेगमय उन्मेश बनता है। विरह रूपी कमल के इस जीवन मूल में भी जल ही (द्रवणशीलता) है और नयन पात्र भी इसी से आपूरित है-

i) विरह का जल जात जीवन, विरह का जल जात।
वेदना में जन्म करुणा में मिला आवास,
अश्रु चुनता दिवस इसका अश्रु गिनती रात।

x x x

ii) मैं नीर भरी दुख की बदली
रज -कण पर जल -कण हो बरसी नवजीवन अंकुर हो निकली।

x x x

iii) प्रिय इन नयनों का अश्रु-नीर।

x x x

iv) क्यों अश्रु न हों श्रृंगार मुझे?
मेरी मृदु पलकें मूँद-मूँद,
छलका आँसू की बूँद-बूँद,

x x x

v) आँसूओं के दश में
खोज ही चिर प्राप्ति का वर।

इस प्रकार आत्मा की जीवनव्यापी भावात्मक-अनुभूति को जन-जन में बाँट रही महादेवी सेवा, सहानुभूति और अदम्य प्रेरणा की प्रतिमूर्ति बनकर काव्याकाश में उभरती हैं तथा अपने अपराजेय साहस से सर्वस्व न्योछावर कर मिट जाती हैं। उनके अश्रुओं की वर्षा में कल्पना और वेदना तथा रहस्य और करुणा का समाहार हो जाता है तो अश्रु-छाया और आलोकित नेत्र-लोक में संस्कृति मूल्यों की अवधारणा झिलमिलाने लगती है। महादेवी की काव्य वस्तु के इसी अनुपम सौन्दर्य का अवलोकन हम यहाँ करेंगे।

11.6.1 प्रणय एवं वेदनानुभूति

अपने काव्य-पथ को आध्यात्मिक-जल निखार कर अमर-यात्रा की ओर निरंतर अग्रसर रहने वाली इस प्रेयसी का अराध्य चिर-चेतन तथा परम तत्व ब्रह्म ही है और अलौकिक प्रिय के प्रति अपनी प्रणयानुभूति की मौलिक तथा मधुर अभिव्यक्ति करने वाली इस विरह साधिका ने इसे लौकिकता से जोड़ने या अनुभूति शून्य भावना मानने वालों के आक्षेपों को निराधार भी सिद्ध किया है-

''जो न प्रिय पहचान पाती
दौड़ती क्यों प्रति शिरा में प्यास विद्युत सी तरल बन?

''अश्रुमय कोयल कहाँ तू आ गई परदेशिनी सी'' कहने वाली महादेवी की मार्मिक एवं व्यापक वेदना भी उनके जीवन दर्शन तथा साधना-पथ के अनुरूप ही ढल जाती है। आत्मचेतना धीरे-धीरे ब्राह्मी चेतना का स्वरूप धार होती है। इसीलिए कभी तो वे स्नेह-क्षणों को अनुभूत करते हुए कहती हैं-

कौन तुम मेरे हृदय में?
कौन मेरी कसक में नित मधुरता भरता अलक्षित?

x x x

प्रिय मुझी में खो गया, अब दूत को किस देश भेजूँ?

और कभी प्रेम की पीर में करुणा तथा वेदना की सजलता का पुट भरकर वे मिलन का तिरस्कार करते हुए विरह को ही प्रेम साधना का एक मात्र साध्य और एक मात्र साधन समझते हुए कहती हैं:

क्या अमरों का लोक मिलेगा, तेरी करुणा का उपहार?
रहने दो हे देव अरे यह मेरा मिटने का अधिकार?

दुःख मार्ग से आने वाले प्रियतम के मग-शूल भी उन्हें परम प्रिय हैं। इसलिए ''दूर तुमसे हूँ अखंड सुहागिनी भी हूँ'' कहकर वे विरह में ही मिलन और मिलन में ही विरह का साक्षात्कार करने लगती है। उनका प्रियतम तो ''प्राणों का अंतिम पाहुन'' है। उसकी प्रतीक्षा का सुख तो चिर-काम्य है। उससे वे दुखी नहीं। वह कष्टप्रद कदापि नहीं। वह तो प्रतीक्षा के इस अंधियारे का विरह-दीपक जलाकर परिष्कार करती है:

अपने इस सूनेपन की मैं हूँ रानी मतवाली,
प्राणों का दीप जलाकर करती रहती दीवाली।

प्रिय के उस मूक-मिलन की स्मृति अमर है। उनका दुख तो संसार-समग्र को एक सूत्र में बाँधता है। उनकी पीड़ा ही उन्हें आनन्द की चरम अवस्था तक ले जाती है क्योंकि यह पीड़ा भी तो प्रियतम की दी हुई ही है। ''बीन भी हूँ मैं तुम्हारी रागिनी भी'' कहकर जब वे ''मैं और तुम'' को एकीकृत करती हैं तो अनायास कह उठती हैं:

''पर शेष नहीं होगी यह, मेरे प्राणों की क्रीड़ा।
तुमको पीड़ा में ढूँढा, तुम में ढूँढूंगी पीड़ा।।

आत्मा, साध्य, को तलाशते हुए- वहाँ तक पहुँचने के लिए सभी सोपानों को पार करते हुए, निरन्तर यात्रा पर रहती हैं और अततः जब मिलन की घड़ी आती भी है तो आत्मा अपना अस्तित्व ही खो देती है। उस परम सत्ता में ही लीन हो जाती है। प्रकृति के साथ ऐसी एकरूपता कदाचित् हिंदी के किसी अन्य कवि द्वारा अभिव्यक्त नहीं हुई जैसी महादेवी ने की है। ''उस असीम का सुंदर मंदिर, मेरा लघुतम जीवन रे।'' कहते-कहते वे आत्मदान की महायात्रा संपूर्ण करती चलती हैं और अंततः प्रतीक्षा-करता, प्रेम-परवशा यही अनुभव करने लगती हैं:

जब असीम से हो जाएगा तेरी लघु सीमा का मेल,
देखोगे तब देव अमरता खेलेगी मिटने का खेल

अतः स्पष्ट है कि महादेवी का प्रेम वेदना के साधारण घात-प्रतिघातों से प्रभावित होने वाला प्रेम नहीं है। वे सब तो उस प्रेम के पोषक और संवर्द्धक बनकर रह जाते हैं। सुख-दुख, विरह-मिलन तथा अमृत विष सभी का उस प्रेम की महाधारा में विलय हो जाता है और

वे सब भी प्रेममय हो जाते हैं। जलबिन्दु से ये घात-प्रतिघात प्रेम महासागर में डूब जाते हैं।

11.6.2 जड़ चेतन का एकात्म्य भाव

महादेवी की यह महान विशेषता है कि वे प्रकृति में अपने व्यक्तित्व को समाहित कर, उसी के माध्यम से अपनी मनःस्थिति का चित्रण बाखूबी कर देती है। यह विशेषता छायावाद के अन्य कवियों में भी पर्याप्त मिलती है किन्तु अराध्य की उपस्थिति प्रकृति में और प्रकृति का एकात्म्य व्यक्ति से करा देने की कला में महादेवी परम-निपुण हैं-

प्रिय सांध्यगगन, मेरा जीवन।
यह क्षितिज बना-धुंधुला विराग,
नव अरुण-अरुण मेरा सुहाग,
छाया-सी काया वीतराग,

प्रकृति जड़ नहीं, पूर्णतः चेतन है, सजीव है। वह महादेवी से निरपेक्ष नहीं और महादेवी उससे सापेक्ष है। कभी वे- ''मैं बनी मधुमास आली।'' कह कर अपना परिचय कराती है तो कभी ''मैं नीर भरी दुख की बदली'' कहकर अपने स्वरूप का परिचय कराते हुए प्रकृति से पूर्ण तादात्म्य स्थापित कर लेती हैं। प्रकृति का मानवीकरण करने की यह छायावादी विशेषता महादेवी के काव्य तक आते-आते पूरी तरह मुखर हो जाती है। मानव-आचरणों का साक्षात दर्शन प्रकृति में करते हुए भी वे ''वसन्त-रजनी'' रूपी नायिका को आमंत्रित करती हैं-

धीरे-धीरे उतर क्षितिज से
आ बसन्त रजनी।

कभी वे प्रकृति का शृंगार बनाकर सामने लाती हैं। यही प्रकृति प्रियतम की और संकेत करने वाली सहचरी भी है, उस परम-प्रिय की आत्मिक छाया भी है और इसीलिए जीवन का अनिवार्य अंग भी। इसीलिए वे महसूस करती हैं-

फैलते हैं सान्ध्यनभ में भाव ही मेरे रंगीले,
तिमिर की दीपावली हैं रोम मेरे पुलक गीले''

''वसन्त-रात्रि'' रूपी नायिका को वे तारों के वेणी-बंधन तथा चन्द्रमा के शीर्ष-फूल से सुसज्जित ही नहीं देखती, वर्षा में भी नायिका का मनोरम रूप ''रूपसि तेरो धन केश-पाश। श्यामल-श्यामल, कोमल-कोमल'' देखते हुए आनन्दित होती हैं। अपनी गहन और विशाल दृष्टि से वे प्रकृति के कण-कण को अनुभूत करती हैं। महादेवी ने स्वयं लिखा है- ''छायावाद ने मनुष्य के हृदय और प्रकृति के उस संबंध में प्राण डाल दिए जो प्राचीन काल से बिम्ब-प्रति-बिम्ब के रूप में चला आ रहा था और जिसके कारण मनुष्य को अपने दुख में प्रकृति उदास और सुख में पुलकित आन पड़ती थी।''

प्राकृतिक-प्रतीकों के अद्‌भुत प्रयोग से व्यक्तित्व का स्पष्टीकरण यथा, उषा का लालिमा में प्रिय का सौन्दर्य- ''उषा के छू आरक्त कपोल किलक पड़ता तेरा उन्माद'' तथा सूर्य की प्रथम किरण में उसे परम-सत्ता का आभास- सभी कुछ जैसे महादेवी की कल्पना-शक्ति के विराटत्व को रूपायित करते हैं। प्रकृति प्रेम को उद्‌दीप्त भी करती है और परम-प्रिय के रूप में स्वयं भी ढल जाती है। ऐश्वर्यमयी दृष्टि से प्रकृति का यह दर्शन, जिसमें- सान्ध्य गगन की स्वर्णमराग-लालिमा, माती सी रात, कनक से दिन, प्रवाल-सी उषा, नीलम से बादल और चाँदी की किरणें अनुपम वैभव का परिचय देते हैं। भ्रमरों की गुंजार, पल्लवों का मर्मर संगीत, विहंगों का मधुर गान और निर्झरों की जलमय गीतात्मकता-जैसे मधुमय-वंशी की तान काव्यकाश में छिटक दी गई हो। इस प्रकृति संसार में मुस्काता संकेत भरा नभ प्रिय के आने की सूचना लाता है और कोकिला का अन्तर्धान ऋतुराज के जाने का

संदेश। पुष्प अपने विस्फाटित **नेगों** से किसी की प्रतीक्षा करते हैं तो अंधकार बिजली का दीप जलाकर किसी को खोजता है। पवन अपने प्रिय से विमुक्त होकर दीर्घ श्वास छोड़ता है तो रजनी बाला नभ के झकझाोरों से अपने दीप को अंचल में छिपाकर प्रिय-प्रतीक्षा में साधनारत रहती है। प्रकृति के इस भावनात्मक रूप में मुखर-रहस्य है और रहस्यात्मक-मुखरता है। बेसुध कोकिल, प्यासी चातकी, निश्चल-तृण तथा झरते सुमनों का यह समृद्ध प्रकृति-भंडार गंधमयी ध्वनि से बरबस मोह लेता है। नभ की दीपावलियाँ उस परिवेश को रौशन कर देती हैं। निश्चय ही प्रकृति महादेवी की भावनाओं की पृष्ठ भूमि बनकर उभरती है। साधन बनी प्रकृति महादेवी की विराट तक पहुँचने की यात्रा में पूरा साथ निभाती है।

11.6.3 सौन्दर्यानुभूति

अपने अहं रूप-यौवन पर गर्व करने वाली नारी महादेवी प्रिय-पुरुष को विराट मानकर भी अपने अकेले और सूनेपन को उसकी अनंत-करुणा के सामने तुच्छ नहीं मानती। अपनी इसी सौंदर्यानुभूति से साक्षात्कार करते हुए वे अत्यंत मार्मिक एवं सौंदर्यमयी शैली में भावुकता, कल्पनाशीलता एवं आंतरिक शक्ति का समाहार करते हुए उसे चित्रित करती हैं। प्रकृति, संतान-नारी और पुरुष, जगत और जीवन तथा इसकी विविध परिस्थितियाँ कवयित्री की कल्पनाशील सौन्दर्य दृष्टि से बच नहीं पाते और यही दृष्टि, सुन्दरता के यथार्थ तथा उसके अन्तर्जगत को अनावृत करने में पूर्णतः सफल होती है। नारी वेदना और उसका त्रास, उसका दमन और पीड़ा उसकी साधना और आत्म-मंथन, उसका आत्मिक रहस्य और आध्यात्मिक पूजा तथा उसका सतीत्व एवं समर्पण- पूरी यात्रा उन्हें संघर्ष का संकल्प देती है तथा आत्मनिर्भरता का प्रण। कविता के अश्रुओं में वेदना का दुख नहीं, आनन्द होने लगता है और प्रेम के सुन्दर प्रतीक अपनी सत्ता और पहचान का सौंदर्य स्थापित करने लगते हैं। यह सौंदर्य अनिवर्चनीय-सौंदर्य है जो केवल अनुभूति का विषय है। महादेवी सौंदर्य का अन्वेषण भी करती है और उसके प्रति लालयित भी होती है। पूरा छायावादी काव्य इसी सौंदर्य प्रेम का पर्याय सा बन गया है। यहाँ वस्तु, दृश्य या रूप का बहिरंग-सौंदर्य नहीं, यहाँ तो केवल सौंदर्य की विराटता और असीमता का प्रवेश ही स्वीकार्य है। प्रसाद तो सौंदर्य को एक ईश्वरीय विभूति ही मानते हैं और उसी में ब्रहम् के साक्षात अंश की झलक देखते हैं। महादेवी में भी सौंदर्य की इसी पवित्रता और निर्बाध तृप्ति मिलती है। छायावादी पुरुष-कवि नारी के आत्मिक सौंदर्य की भाव लहरियों में उतरता तैरता है तो कवयित्री पौरुष, पुरुष-सौंदर्य का मर्यादित बखान करता है-

रजत रश्मियों की छाया में धूमिल घन-सा वह आता,
इस निदाध से मानस में करुणा के स्रोत बहा जाता।

महादेवी की कविताओं में अव्यक्त के प्रति जिज्ञासा और विस्मय की करुणा का मार्मिक सौंदर्य मुखरित होता है। मिलनातुर कवयित्री स्वयं को बेबस और विकल महसूस करती हुई कहती है-

हाथ में लेकर जर्जर बीन,
इन्हीं बिखरे तारों को जोड़
लिए कैसे पीड़ा का भार,
देव आऊं अनन्त की ओर।

तो अनायास उसे आध्यात्मिक मिलन की कल्पना आनन्द-विभोर कर देती है-

जब असीम से हो जाएगा, मेरी लघु सीमा का मेल।
देखोगे तुम देव अमरता, खेलेगी मिटने का खेल।।

इस महा-गर्विता का समर्पण विराट-प्रिय की अस्मिता में समन्वित हो जाता है। कल्पना के साथ-साथ चिन्तन और अनुभूति का गठन होते ही भाव-सौंदर्य का उत्कर्ष सामने आने

लगता है। हृदय की विह्वलता आत्मानन्द के मधुर-मधु में समा जाती है। लघुतम जीवन ही उस असीम का मन्दिर बन जाता है। ''क्या पूजन क्या अर्चन दे'' कहने वाली महादेवी समात्मभाव के शिखर तक पहुँच जाती हैः

चित्रित तू मैं हूँ रेखाक्रम
मधुर राग तू, मैं स्वर संगम,
तू असीम मैं, सीमा का भ्रम,
काया छाया में रहस्यमय
प्रेयसी प्रियतम का अभिनव क्या?

इस प्रकार निष्काम-कर्म और लोक मंगल का ध्येय तथा आध्यात्मिक साधना के विविध सोपानों की यात्रा, कवयित्री को निरंतर वैयक्तिक स्तर के अहं भाव से ऊपर उठाते हुए उस सर्वव्यापी परम सत्ता के साथ दिव्य आनन्द की अनुभूति तक ले जाती हैं। गर्विता का समग्र गर्व और दर्प उस असीम सत्ता के परम सौंदर्य एवं प्रेम में समाहित होकर अद्भुत एवं अमर सौंदर्य की स्थापना करते हैं।

11.6.4 मूल्य चेतना

भारतीय संस्कृति एवं एकत्व, ममत्व तथा समत्व की अक्षय सांस्कृतिक पहचान एवं उसकी महान उपलब्धि को जीवन्त तथा क्रियाशील बनाए रखने में महादेवी अग्रगण्य हैं। सांस्कृतिक आध्यात्मिक उत्तराधिकार का निर्वाह वे बखूबी करती हैं। भारतीय नारी की आधुनिक अस्मिता, पवित्रता, दृढ़ता तथा आत्म-सम्मान का सृजनात्मक-सौन्दर्य उनकी कविता की चेतना को पोषित करता है तो करुण हृदय का स्पंदन, सत्य और कुटुम्ब की रक्षा के लिए हो रहे विद्रोह की ज्वालाओं को त्याग का ताप भी देता है-

सजनि मैं उतनी करुण हूँ, करुण जितनी रात
सजनि मैं उतनी सजल जितनी सजल बरसात।

महादेवी, मुक्ति की आकांक्षा का वह अकम्पित दीप जलाने वाली शक्ति हैं जो गुलामी के बड़े-बड़े तूफानों में भी सजग प्रहरी बनकर स्वतंत्रता के लक्ष्य तक पहुँचता है। यही दीपक अंतस को भी आलोकित करते हुए अखिल सामाजिकता की युग-चेतना का दीपक बन जाता है। निराशा, अवसाद और परतंत्रता की अंधकारमयी लहरियों को लील जाता है। यही उनकी संकल्प की अनुभूति है। यही दीप भारतीय नारी के स्नेह भरे आत्मदानी-व्यक्तित्व को भी रेखाकिंत करता है। इसी दीप की प्रकाश पुंज स्वरूपा-लौ दुर्गा बनकर संपूर्ण व्यथा का अंत करती है। साम्राज्यवादी अंधकार से निरंतर जूझने वाली वह महाशक्ति सूर्य, चन्द्रमा तथा तारे रूपी सभी सैनिक जुटाकर प्रकाश के संकल्प बिखेरती रहती है। होली के दिन जन्मी महादेवी के व्यक्तित्व की मूल्यवान शक्ति एवं सांस्कृतिक गंध को रेखांकित करते हुए गंगा प्रसाद पाण्डेय लिखते हैं- ''होली धरती का निज उत्सव है, क्योंकि धरती के रूप, रंग, रस तथा गंध होली में सजीव हो उठते हैं। अन्नमयी नवीन फसल आत्म-त्याग द्वारा मानवीय जीवन-साधना का उपहार लेकर उपस्थित होती है और चारों ओर राग-रंग की पिचकारियाँ छूटने लगती हैं। सभी लोग पिछला बैर-भाव भूलकर परस्पर गले मिलते हैं। नये वर्ष का आरंभ होता है। प्रह्लाद प्रकष्ट आह्लाद की रक्षा और पूतना (जो पवित्र नहीं है) का अंत होता है। जन्म दिन की सारी विशेषताएँ महादेवी जी के साहित्य में चरितार्थ हैं।'' (छायावाद के आधार स्तंभ, पृष्ठ 255)

सांध्य गगन के सप्त रंगों में रंगी महादेवी नीर भरी दुख की बदली या ''दीपक'', ''फूल'' और ''सरिता'' बनकर भी लोक-मंगल की भावना से ही अभिभूत जान पड़ती है। आत्म-सुख से पहले वे विश्व-सुख की कामना करती हैं। आत्म त्याग से विश्वमंगल का विधान करना चाहती हैं। ''सृष्टि का यह अमिट विधान, एक मिटने में सौ बरदान'' कहकर नीर भरी बदली को वे त्याग की प्रेरणा देती है-

प्यासे की जान ग्राम, झुलसे का पूछ नाम,
धरती के चरणों पर नभ के धर शत प्रणाम,
गल गया तुषार-भार बनकर वह छवि शरीर।
मिट चली घटा अधीर।

धरती-सी महान और हिमालय-सी विशाल महादेवी ''हे चिर महान'' गीत में हिमालय के प्रति एकसूत्रता तथा एकात्मकता के भावों को उजागर करते हुए उससे समात्मभाव स्थापित करती है और अभेद-भावना के चरम सौंदर्य को आत्मसाक्षात्कार के रूप में प्रस्तुत करती हैं-

मेरे जीवन के आज मूक,
तेरी छाया से हो मिलाप।

स्पष्ट है कि हिमालय के समान अडिग आत्म-सम्मान वाली महादेवी को जीवन के लघुतम रूपों से भी पूरी सहानुभूति है। योगी की तरह समाधिस्थ तथा सभी राग-द्वेषों से ऊपर उठकर संसार व्यापी दुखों को शीतल शांत जल-स्रोतों की गंगा-धारा बहाकर कोमल सहृदयता का लेप लगाने का जो दायित्व हिमालय निभाता है, उसका पूरा निर्वाह महादेवी भी करती है। मनुष्य-जाति के सर्वदा-हित की कामना रखने वाली, भारतीय संस्कृति की चिर-प्रहरी बनी रहने वाली तथा नैतिक मूल्यों की दृढ़ता से स्थापना और रक्षा करने वाली इस हठी तथा विद्रोही कवयित्री ने संसार की प्रत्येक बाधा और रुकावट का जमकर विरोध किया तथा अपने पक्ष से विमुख न होकर सदैव प्रशस्त-मार्ग की अनन्त यात्रा करती रहीं-

घिरती रहे रात!
न पथ रूँधती ये गहनतम शिलायें,
न गति रोक पातीं पिघल मिल दिशायें,
चली मुक्त मैं ज्यों मलय की मधुर बात।

11.6.5 काव्य-संवेदना का विस्तार या शक्ति

इन्द्रीयातीत सत्य के प्रति अधिक रूझान रखने वाली अंतर्मुखी तथा भावप्रधान कवयित्री महादेवी वर्मा बुद्धि के सूक्ष्म धरातल पर जीवन की अखंडता का मापन करती हैं तथा हृदय की ही भावभूमि पर प्राकृतिक सौंदर्य की रहस्यात्मक-अनुभूति को भी महसूस करती हैं। रहस्य-गीतों में व्यक्तित्व के साथ स्थापित रागात्मक संबंध को वे लौकिक प्रेमानुभूतियों के साथ घुला-मिलाकर अभिव्यक्त करती हैं। अपने गीतों में वे अखंड चेतन को पुरुष-व्यक्तित्व के रूप में देखती हैं तथा विरहिणी प्रेमिका बनकर अपनी विनय-पत्रिका से निवेदन करती रहती है। यही कारण है कि ''प्रिय इन नयनों को अश्रु-नीर, बहता है युग-युग से अधीर'' कहने वाली महादेवी के विरह से ही उनकी सृष्टि जन्म लेती है। अद्वैत को वे ''खोना'' नहीं आत्म विस्तार मानती हैं। दीपक की लौ प्रभात के सूर्य से मिलकर और उसमें समाकर पूरे संसार को आलौकित करने लगती है। इसीलिए ''द्वैत-अद्वैत'' दोनो ही उन्हें स्वीकार्य हैं-

मैं तुम से हूँ एक, एक हैं
जैसे रश्मि प्रकाश
मैं तुम से हूँ भिन्न, भिन्न ज्यों
धन से तड़ित-विलास।

महादेवी ने भौतिक अभाव दारिद्रय और कष्ट को कभी दूर से भी नहीं देखा उनकी उदात्त-आत्मा तथा सूक्ष्म-चेतना सदैव सुख-सम्पन्नता के ऐश्वर्य से घिरी रही। किन्तु अपने मन के सुख-दुख को बाँटने के लिए वे प्रवृत्ति तथा प्रकृति संतानों को मित्र एवं सहचर बनाकर अपनी कविता को अदम्य शक्ति प्रदान करती हैं। उस अज्ञात- अरुप की वेदना से

छटपटाने वाली महादेवी का हृदय अनेकों दीन-हीनों पर अपनी ममता बरसाने लगता है। वे दुलार का ''प्रसाद'' और वेदना माधुर्य का ''चरणामृत'' मुक्त-कर से बाँटती हैं। महादेवी ने स्वयं अपने बारे में तथा अपनी अटूट-काव्य, साधना की ताकत और प्रसार के बारे में लिखा भी है-''.....विशाल साहित्य-परिवार के हर्ष-शोक मेरे अपने हैं, परन्तु उससे बाहर खड़े व्यक्तियों की सुख-दुख कथा मुझे पराई नहीं लगती। .....मैंने उस अपेक्षित संसार में बहुत कुछ भव्य पाया है, अन्यथा सभ्य समाज में इतनी दूरी असह्य हो जाती है। अनेक बार लोकगीत सुनकर ऐसा भी लगता है कि यह भाव मेरे गीत में होता। एक बहुत बड़े मानव समूह को हमने ऐसे दुर्दशा में रख छोड़ा है जहाँ साहित्य का प्रवेश कल्पना की वस्तु है। वह समाज हृदय की बात समझता है, पर व्यक्ति के माध्यम से।''

निःसन्देह, उस अपेक्षित समाज की दुर्दशा को भीतर पैंठकर आंकने और मापने का जो अनुभूति परक दायित्व महादेवी ने गद्य परक साहित्य से निभाया वह कल्पना की वस्तु नहीं, जीता-जागता प्रामाणिक सत्य है। उस समान की पीड़ा, अभाव, वेदना और त्याग भरी भावना को समझकर, उनक हृदयगत भावों को समस्त जग के सामने प्रस्तुत कर सहृदयता का जो वातावरण तैयार किया उसका विस्तार असीम है उसकी संवेदना शक्ति अतुलनीय और अपरिमेय है। जिसके गीतों में भाव, शब्द, तन्मयता तथा अन्विति को एक लय में पिरोया गया हो, जिसके शब्द स्निग्ध लौ की तूलिका बनकर सभी की उज्जवल कोह को आँकते हो तथा बिम्ब और प्रतीकों की भुजाएँ जहाँ विस्तृत नभ को मापने की शक्ति रखते हों, मुहावरे और अमर-उक्तियाँ जहाँ भूमा की गंध को प्रमाणिक बनाकर जन-जीवन से जोड़ते हों उस कविता की शक्ति सर्वथा ही विवाद रहित है।

बोध प्रश्न 2

टिप्पणी: i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।
ii) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1. महादेवी की वेदनानुभूति में प्रणय की मौलिक भावना की मार्मिक-अभिव्यक्ति है। लगभग दस पंक्तियों में स्पष्ट करें।

.....

.....

.....

.....

.....

2. महादेवी की कविता में प्रकृति-चित्रण का सौन्दर्य, अद्‌भुत अभिव्यक्ति पाता है। लगभग दस पंक्तियों में सिद्ध करें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3. महादेवी की काव्य संवेदना के मूल में उनकी मूल्यवाद सांस्कृतिक चेतना की शक्ति है। इस कथन की पुष्टि में लगभग दस पंक्तियाँ लिखो।

.....

.....

.....

.....

11.7 काव्य सौन्दर्यः रचना-विधान

काव्य में कथ्य और शिल्प का आन्योन्याश्रित संबंध है। काव्य यदि काव्यात्मा है तो शिल्प उसका शरीर। आत्मा अपने गुणों को शरीर के माध्यम से ही अभिव्यक्त करती है। जैसे आत्मा स्वयं के शरीर में रूपायित करती है वैसे ही काव्यानुभूति भी स्वयं को रचना-विधान के विभिन्न उपकरणों के माध्यम से अभिव्यजित करती है। छायावाद की सिद्ध कवयित्री महादेवी वर्मा के काव्य में भी अनुभूति, कथ्य एवं शिल्प स्वभावतः तथा सहजतः ही एक रूप हो जाते हैं। उनका कथ्य शिल्पगत तत्वों को अनुभूति से पृथक नहीं करता। महादेवी की काव्य भाषा, काव्य रूप तथा बिम्ब, प्रतीक एवं अप्रस्तुत-विधान आदि काव्य-उपकरण इसी तथ्य का प्रमाण हैं। यहाँ हम महादेवी के इसी अद्‌भुत रचना विधान की परख करेंगे। प्रधानतः महादेवी गीति कवयित्री हैं। परम्परा और मौलिकता का अद्‌भुत समन्वय उनके गीति काव्य में देखने को मिलता है। अतः सर्वप्रथम हम उनके काव्य रूप पर ही विचार करते हैं।

11.7.1 काव्य-रूप

काव्य के मुख्यतः तीन रूप माने जाते है 1. प्रबंध 2. गीति एवं 3. मुक्तक। कोई भी कवि काव्य रूप का चयन अकारण ही नहीं करता अपितु उसके पीछे एक नेक आधार होता है। महादेवी ने वेदना और करुणा से श्रृंगार करके गीतों को ही काव्य रूप का प्रमुख माध्यम चुना और इसके लिए ''दीपशिखा'' की भूमिका में कहा भी-''काव्य की ऊँची-ऊँची हिमालय-श्रेणियों के बीच में गीति मुक्तक एक सजल कोमल मेद्य खंड है जो न उनसे दबकर टूटता है और न बंधकर रुकता है, प्रत्युत किरण से रंग स्नात होकर उन्नत चोटियों का श्रृंगार कर आता है और हर झोंके पर उड़-उड़कर उस विशालता के कोने-कोने में अपना स्पन्दन पहुँचाता है।'' दरअसल महादेवी ने जिस रहस्य एवं पीड़ा की अनुभूति को अपने काव्य का विषय बनाया है, इसकी अभिव्यक्ति गीति के माध्यम से ही संभव थी। यों भी छायावाद अपने आप में ही गीति प्रधान युग था। 'साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध' में महादेवी कहती भी है-''छायावाद व्यथा का सवेरा है, अतः उसके प्रभाती गीतों की सुनहली आशा पर आँसुओं की नमी है। स्वानुभूति को प्रधानता देने वाले इन सुख-दुख भरे गीतों के पीछे भी इतिहास है। .....संगीत के पंखों पर चलने वाले ह्रदयवाद की छाया में गीत विविध रूपी हो उठे स्वानुभूत सुख-दूखों के भावगीत, लौकिक विरह मिलन, आशा-निराशा पर आश्रित जीवन-गीत, सौन्दर्य को सजीवता देने वाले चित्र-गीत सबकी उपस्थिति सहज हो गई। (पृष्ठ कृ125)

स्पष्ट है कि महादेवी के काव्य में अभिव्यक्ति के समर्थ माध्यम के रूप में गीति का प्रयोग हुआ है और यह अपने आंतरिक एवं बाह्य सौंदर्य की रश्मियों से उनके काव्य को आलोकित भी करता है। उनके गीतों में व्याप्त अलौकिक प्रेम के स्वरूप में साधना और भावना का अद्‌भुत समन्वय मिलता है। नितान्त वैयक्तिक अनुभूतियों पर आधारित उनके गीत भावना की चरम सीमा का स्पर्श करते हैं। महादेवी स्वयं कहती हैं-''साधारणतः गीत व्यक्तिगत सीमा में तीव्र सुख-दुखात्मक अनुभूति का वह शब्द रूप है जो अपनी

ध्वन्यात्मकता में गुम हो सके।'' इस आधार पर भी महादेवी सफलतम गीतकार ठहरती हैं। स्वर-संगीत तथा शब्द-योजना की लय का समवेत-संयोजन, गति-नियम, यति बन्धन एवं तुक पालन की सावधानी आरोह-अवरोह का कुशल निर्वाह तथा इन सभी के अनुकूल स्वरों का उतार चढ़ाव, विचित्र सौन्दर्य निर्मित करता है।

महादेवी के गीतों में भावों के अनुकूल ही भाषिक व्यवस्था भी बनती चलती है। भाषा, गीतों की खन-झुन-नयी लय को अपने प्रवाह के संगीत में पिरोती चलती है। बिहंगम के मधुर स्वरों की तुलना महादेवी अपनी वीणा के हर मंदिर तार से करती हुई चलती हैं तो माधुर्य और मादकता का सन्निवेश पल्लवित होता जाता है-

उड़ा तू छन्द बरसाता,
चला मन स्वप्न बिखराता,
अमित छबि की परिधि तेरी,
अचल रस-पार है मेरा।
बिछी नभ में क्या झीनी,
धुली भू में व्यथा भीनी,
तड़ित उपहार तेरा, बादलों,
सा प्यार है मेरा।

इसी प्रकार ''ओ चिर नीरव'', ''सपने जगाती आ'', ''मैं चिर पथिक वेदना का'', तथा ''मिट चली घटा अधीर'' आदि बहुत से गीत देखे जा सकते हैं जहाँ ध्वन्यात्मकता और संगीतात्मकता की लयपूर्ण योजना सहज ही उपलब्ध है। ''यह मंदिर का दीप इसे नीरव जलने दो'' जैसे गीतों में वर्ण, अर्थ और ध्वनि का अनुपम सौन्दर्य विराजमान है। आध्यात्मिकता में लौकिक-गीतों की लय का बरसाती-मिश्रण गीतों को भाव प्रवण बना देता है। आवेश से कोसों दूर शान्त, सहज और नीरवता के परिवेश में सत्य की अभिव्यक्ति का मार्मिक साहस अत्यंत प्रभावित करता है। संयम और चिंतन का अनुशासन तथा बिम्ब और प्रतीकों का शृंगार उनकी अनुभूति को स्पंदित करता है ''क्या पूजा क्या अर्चन रे?'', ''पंथ रहने दो अपरिचित प्राण रहने दो अकेला'', ''पूछता क्यों शेष कितनी रात'', तथा ''मैं नीर भरी दुख की बदली'' जैसे कितने ही गीत देखे जा सकते हैं जहाँ गीतों की मार्मिकता के लिए अपेक्षित सभी विशेषताएँ सहज ही उपलब्ध हैं। अतः कह सकते हैं कि महादेवी गीति मुक्तक लिखने वाली हिंदी साहित्य की अतुलनीय गीत लेखिका हैं। उनके गीतों में आत्मानुभूति की गहराई, वेदना की व्यापक करुणा, संगीत की मधुर लहरियाँ तथा साहित्यिक स्तर की भावमिश्रित भाषा का अनुपम एवं अद्‌भुत मिश्रण है और इसी के कारण महादेवी का गीति काव्य एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है।

11.7.2 काव्य-भाषा

महादेवी के कवि रूप की इस अपूर्व सफलता का मुख्य कारण उनकी गीतोपयुक्त मधुर तथा कोमल भाषा ही है। महादेवी छायावाद द्वारा प्रदत्त अनेक कला- विषयक विशेषताओं को ग्रहण करते हुए अपनी भाषा का सहज शृंगार करती हैं। कहा जाता है कि खड़ी बोली को काव्योचित भाषा का रूप देने का श्रेय प्रधानतः पंत जी को है किन्तु यह भी सत्य है कि उसे सुकोमल मार्मिकता देने का गौरव जितना महोदवी को है उतना अन्य किसी को नहीं। महादेवी प्रत्येक शब्द को ध्वनि, वर्ण और अर्थ की दृष्टि से नाप-तोल और काट-छाँटकर सूक्ष्मतम भावनाओं को कोमलतम कलेवर देती हैं। उनकी शैली में तरलता और मार्दव है तो भाषा संस्कृत गर्भित खड़ी बोली होकर भी अत्यन्त परिष्कृत, शिल्पित तथा मधुर कोमल है। व्याकरणिक नियमों से स्वच्छन्द रहने वाली महादेवी कभी शब्दों का अंग-भंग, रूप-परिवर्तन और अंग-वार्द्धक्य कर नए शब्द गढ़ लेती है तो कभी शब्दों के निरंतर प्रयोग से उसमें एक विशिष्ट अर्थ कर देती है। ''पंत और महादेवी'' निबंध में छायावाद के जाने-माने आलोचक शांतिप्रिय द्विवेदी लिखते हैं- ''पंत ने जिस खड़ी बोली को रमणीयता दी,

महादेवी ने उसे मार्मिकता देकर प्राण प्रतिष्ठा कर दी। ताजमहल के भीतर उन्होंने दीपक जला दिया। भाषा के सौंदर्य में पंत बेजोड़ हैं, अभिव्यक्ति की मार्मिकता में महादेवी।''

भाब्द-निरूपण, वर्ण-विन्यास, नाद-सौन्दर्य एवं **उचित सौन्दर्य-** सभी दृष्टियों से महादेवी का भाषा पर सहज अधिकार है। शब्द-कवयित्री महादेवी के शब्द- शब्द में काव्य के दर्शन होते हैं। साधना की उष्मा से दमकते शब्द-माणिक्य कविता के परिवेश एवं वातावरण को जीवन्त बना देते हैं। **''शलभ मैं शापमय वर हूँ''** या **''गई वह अधरों की मुस्कान मुझे मधुमय पीड़ा में बोर''** जैसी अनेक पंक्तियाँ जिनका प्रत्येक शब्द अपने में एक चित्र को समेटे हैं- वास्तव में सराहनीय है। ''नीहार'' से ''दीपशिखा'' तक की यात्रा में तत्सम, तद्भव, देशज तथा विदेशी शब्दों का सटीक प्रयोग महादेवी के संयमी शिल्पी होने का प्रमाण हैं। महादेवी भाव तथा चित्रों के अनुरूप वर्णों का संकलन एवं परिमार्जन करती हैं। भीर (भीड़), पंखुरियाँ (पंखुड़ियाँ), सपने (स्वप्न) आदि अनेकों ऐसे उदाहरण दिए जा सकते हैं जो लालित्य-विधान में सहायक होते हैं पीड़ा और करुणा को माधुर्य-गुण से संकलित करने की कला निश्चित ही अनोखी है-

रूपसि तेरा-घन-केश-पाश
श्यामल-श्यामल कोमल-कोमल
लहराता सुरभित केश-पाश

करुण, मधुर, सुन्दर, श्यामल आदि शब्दों की द्विरुकित माधुर्य गुण को भी द्विगुणित कर देती है। इसी प्रकार ''गया गया क्या-क्या उत्पात'', ''भरकर छलक-छलक जाती'', ''चाह-चाह थक-थक कर'', ''सिहर-सिहर उठता सरिता उरे तथा पलक-पलक, रोम-रोम, साँस-साँस, बुझ-बुझ, फैला-फैला, घुल-घुल, घिर-घिर कन-कन, झूम-झूम तथा पल-पल'' जैसे अनेकों प्रयोग देखे जा सकते हैं।

महादेवी की कविता में ओज तथा प्रसाद गुण के दर्शन भी होते हैं। जागरण का एक गीत देखिए जिसमें पौरुष पूर्ण ''ओज गुण'' प्रशंसनीय है-

बाँध लेंगे क्या तुझे यह मोम के बंधन सजीले?
पंथ की बाधा बनेंगे तितलियों के पर रंगीले?

इसी प्रकार चातक, दीप, कुल बुल एवं कांह अभी अप्रस्तुतों द्वारा जिस करुण भाव को वे व्यंजित करती है, उसमें सरलता एवं बोधगम्यता से प्रसाद गुण का निर्वाह हो जाता है। 'मधुर-मधुर मेरे दीपक जल 'कहकर वे प्रसाद-गुण की अभिव्यक्ति को सहज-सरल बना देती है। देशज शब्दों का सुन्दर प्रयोग देखिए-''मुखर पिंक हौले-हौले, हठीले हौले-हौले बोल।'' शब्दावली में समान कोटि के वर्णों के प्रयोग से जो समता आ जाती है, उसे वर्णमैत्री कहते हैं। महादेवी ने सजल, धवल, अलज, चरण जैसे शब्दों का एक साथ प्रयोग कर ''स'', ''ज'', ''ल'', तथा ''ध'', ''व'', ''ल'', और ''अ'', ''ल'', ''स'' तथा ''च'', ''र'', ''ण'' आदि सम-मात्रिक तथा समानधर्मी वर्णों का प्रयोग और अलंकारी भाषा का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत किया है। इसी प्रकार, वर्णमैत्री, विपरीत ध्वनि वाले वर्ण-प्रयोग एवं नाद सौंदर्य आदि के भी अनेक उदाहरण देखे जा सकते हैं। नाद सौंदर्य में तो संगीत का पुट भी है जो अर्थ घ्वनन में भी सहायक होता है। ''सजल लोचन, तरल चितवन, सरल भू विरल श्रम कण'' जैसे पंक्तियों में सजल, सरल, तरल, विरल जैसे वर्णों के प्रयोग से यहाँ तरल संगीत के साथ-साथ एक विराट बिम्ब भी उभरता है। इसी प्रकार-सुनहले, सजीले, रंगीले, छबीले, किंकिण, मर्मर, झंकार नुपुर, कम्पन आदि शब्द भी नाद सौन्दर्य के निर्माता बनते हैं।

इसके अतिरिक्त महादेवी की भाषा में उक्ति सौन्दर्य, वक्रोकित-सौन्दर्य लिंगात्मकता, ध्वन्यात्मकता एवं व्यंग्य सौन्दर्य आदि के भी दर्शन होते हैं। ''घोरतम छाया चारों ओर, घटाएँ घिर आई घनघोर'' में अभिधा का सुंदर प्रयोग है तो ''कौन है वह सम्मोहन राग,

खींच लाया तुमको सुकुमार?'' में सुंदर लाक्षणिक प्रयोग देखा जा सकता है। ''खींच लाना'' सजीव का ही काम है और यहाँ मुख्यार्थ बाधित है। किसी व्यक्ति विशेष की ओर संकेत है। इसी प्रकार लक्ष्मार्थ से आगे व्यंजति होने वाला व्यंग्यार्थ भी उनकी कविता में कई स्थानों पर प्रखर है। परिवेश को चित्रित कर महादेवी प्रेमिका के मिलन क्षणों की सुखद अनुभूति को व्यंजित करने में कितनी सिद्धहस्त है, देखिए-

गुलालों से रवि का पथ लीप
जला पश्चिम में पहला दीप
विहँसती संध्या भरी सुहाग
दुर्गों से झरता स्वर्ण पराग।

भाव विह्वलता के अनेकों उदाहरणों में प्रेमी-ह्रदयों की दशाओं को चित्रांकित करने की कौशलता भी दृष्टव्य है। वे स्वयं एक कुशल चित्रकत्री भी हैं और इस क्षणों में उन्हें सफलता भी सब हासिल हुई है-

पुलक पुलक कर सिहर तन
आज नयन आते क्यों कर भर।

प्रसिद्ध आलोचक प्रकाश चन्द्र गुप्त ने ''महादेवी की काव्य साधना'' नामक निबंध में कहा भी है- ''दीपशिखा के गीतों में भाषा मोती के समान स्वच्छ और निर्मल है। उसके शब्द चित्र अनायास ही ह्रदय मथ डालते हैं किन्तु इस प्रौढ़ काव्य प्रेरणा के पीछे किसी प्रबल झंझावत का अनुभव भी देखा जा सकता है-

i) झुक-झुक, झूम-झूम कर लहरें
भरती बूंदों के मोती।

X x x

ii) चल अचल से झर-झर झरते
पथ में जुगनू के स्वर्ण फूल।

शब्दावली की चर्चा हम पहले कर चुके हैं किंतु यहाँ इतना स्पष्ट करना अभी बाकी है कि ग्रामीण, लौकिक तथा विदेशी शब्दों का प्रयोग भी उनके काव्य को सहज-स्वाभाविक स्पर्श देता है। रैन (रात्रि), बतास (वायु), लीप, चितचोर, विछोह, होले, करतार, मरम, बिछलना तथा धावा आदि ग्रामीण और ब्रजभाषा के शब्द भी यहाँ मिलते हैं तो अरबी-फारसी के बन्दीखाना, दाग, साकी, अरमान, बेहोश, परदा, बेहाल, तूफान तथा निशानी आदि शब्दों का प्रयोग भी काव्य भाषा को समृद्ध करता है। गद्य में तो महादेवी ने अंग्रेजी के भी बहुत से शब्दों का प्रयोग किया है किन्तु काव्य में यह कम है। शब्दावली में महादेवी ने ''मय'' मुक्त शब्दों का अधिक प्रयोग किया है। मधुमय, विषमय, श्रवणमय, जलकणमय, कविमय, परिमलमय, नयनमय रहस्यमय, विषादमय तथा स्वप्नमय आदि अनेक ऐसे शब्द देखे जा सकते हैं। कुल मिलाकर कह सकते हैं कि महादेवी की भाषा किसी अनमोल एवं बेजोड़ सांचे में ढली एवं गढ़ी हुई भाषा है। भाषा का यह सौष्ठव और गंभीर्य ही उन्हें कुशल-शिल्पी ठहराता है।

11.7.3 प्रतीक योजना

कवि के सूक्षत्म भावों को लाक्षणिक प्रयोग द्वारा ही वाणी प्राप्त होती है। महादेवी ने भी अपने काव्य की समृद्धि के लिए प्रतीकात्मक संकेत-भाषा का आश्रय लिया। महादेवी छायावादी प्रतीकों के साथ-साथ मौलिक प्रतीकों का प्रयोग भी सकुशल करती हैं। आंतरिक वेदना की मुखर अभिव्यक्ति बना ''दीपक'' प्रतीक तो महादेवी की पहचान ही बन गया है। यों महादेवी ने सैकड़ों प्रतीकों का प्रयोग एवं निर्माण भी किया है। छायावाद में

पूर्व-प्रचलित कली, भ्रमर, झंझा, इन्द्रधनुष, ऊषा, चंचला, मेघ, पवन, दीपक आदि प्रतीकों को तो वे ग्रहण करती ही हैं साथ ही दीपक को साधनारत आत्मा, करुण जीवन के अर्थ में भी प्रयोग करती हैं। ''सांध्यगगन''- लौकिकता के प्रति विराग का प्रतीक है, यामिनी सेवारत साधिका है, गोधूलि-करुण मिलन की बेला है तथा सरिता-करुणा की अविरल धारा है।

इनके अतिरिक्त तेल-आंतरिक स्नेह, झंझावत-विघ्न बाधाएँ, अंधेरा-विषाद, बदली-संतों या भक्तों की गंभीरता से सेवा करने वाली, वर्षा-करुणा, मकरन्द-आँसू, नभ की दीपावली-तारागण, वीणा-हृदय, वीणा के तार-हृदय के भाव, गायक-साधक, प्याली-जीवन का प्रतीक, कालिन्दी-अश्रुधारा, पतवार-साहस भाव, लहर-हृदय का भावावेग, शृंगार-मन का उत्साह, सागर-संसार चक्र तथा इन्द्रधनुष-मधुर मिलन की स्मृतियाँ आदि कई प्रतीक महादेवी के काव्य सौन्दर्य को समृद्ध करते हैं।

महादेवी के ऋतु तथा लौकिक-भावों संबंधी प्रतीक भी मौलिक एवं सराहनीय हैं। वे प्रतीकों का प्रयोग रूप, उपमान तथा लक्षणा के रूपक में अलग-अलग ढंग से भी करती हैं। ''मैं नीर भरी दुख की बदली'' में रूपक का प्रयोग है तो ''धूप सा तन दीप सी मैं'' में उपमान का सुन्दर प्रयोग दृष्टव्य है। कहीं-कहीं महादेवी की प्रतीक योजना दुरूह भी हो गई है किन्तु भावाभिव्यंजना को वह सशक्त एवं समर्थ भी बनाती है। आध्यात्मिक एवं भावात्मक प्रतीकों का बाहुल्य महादेवी की सूक्ष्म एवं गहन कल्पना शक्ति का परिचायक है ही उनकी मनोवैज्ञानिक पकड़ को भी वह स्पष्ट करता है। लौकिक प्रतीकों से वे अलौकिक को व्यक्त कर देती हैं। काव्य संग्रहों के शीर्षक तक महादेवी ने प्रतीकात्मक रखे हैं। यथा नीहार (नैराश्यपूर्ण वातावरण का प्रतीक), रश्मि (आश, उल्लास का प्रतीक), नीरजा (सूर्य अर्थात, परमतत्व की ओर उन्मुख रहने वाली आत्मा का प्रतीक), सान्ध्यगीत (साधना के विकास और आस्था का प्रतीक) तथा दीपशिखा (विरह-निशा को झेलती एवं साधना प्रारंभ करती आत्मा का प्रतीक) आदि ऐसे ही शीर्षक हैं। ''दीपक'' प्रतीक से जलन, पीड़ा, वेदना का ही अर्थ स्पष्ट नहीं होता अपितु स्वयं जलकर जग को प्रकाश देने का अर्थ भी प्रसारित होता है-

मधुर-मधुर मेरे दीपक जल।
युग-युग प्रतिदिन प्रतिक्षण प्रतिफल
प्रियतम का पथ आलोकित कर।

इसी प्रकार-

पंथ रहने दो अपरिचित प्राण रहने दो अकेला।

x x x

मधुर राग तू मैं स्वर संगम

x x x

बीन भी हूँ मैं तुम्हारी रागिनी भी हूँ

जैसे भावात्मक, मनोवैज्ञानिक, रूपात्मक, प्रकृति संबंधी, पौराणिक-ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक तथा कला संबंधी क्षेत्रों से भी बहुत से प्रतीक लेकर काव्य-सौन्दर्य को समृद्ध किया गया।

11.7.4 बिम्ब योजना

मानव के मानस में अनेक मूर्त-अमूर्त रूप का भाव व्यापार अप्रत्यक्षता भी रहते हैं। इन्हें आकार (फार्म) प्रदान करने के लिए ही बिम्बों का विधान करना आवश्यक होता है। किसी भी वस्तु को अपनी किसी इन्द्रिय के द्वारा अनुभव करने पर हमारा हृदय जो प्रभाव ग्रहण करता है और उससे जिस प्रकार की मानस अभिव्यक्ति होती है, उसे ''बिम्ब'' कहा जाता

है। स्पष्ट है कि बिम्ब किसी व्यक्ति, वस्तु या यथार्थ की ऐसी प्रतिच्छवि है जिसके मूल में भाव की प्रेरणा रहती है। छायावादी कवियों ने बिम्ब को चित्र-शब्द (चित्रविधान) भी कहा है। छायावाद की इसी चित्रभाषा पर आलोचक मुकुटधर पाण्डेय लिखते भी हैं- ''छायावाद में किसी दृश्य का ज्यों का त्यों चित्र उभारा जाता है, पर शब्द ऐसे वेग वाले प्रयुक्त किये जाते हैं कि भाषा उड़ती है। पाठक उस चित्र को पकड़ना चाहता है, पर अभी वह उसकी आँखों के सामने हुआ ही था कि न जाने कहाँ अनन्त आकाश में लीन हो जाता है। .. .. ऐसी कविताओं में शब्द सजीव होते हैं। वे आदमियों की तरह चलते-फिरते और इशारा करते हैं, बोलते भी हैं ..... उनमें रूप-रंग और छाया तथा प्रकाश भी पाये जाते हैं''। (श्री शारदा, खंड 1, पृष्ठ 341)

अतः यह तो स्पष्ट है कि छायावादी काव्य में प्रारंभ से अंत तक बिम्बों (चित्रों) की प्रचुरता है। महादेवी के काव्य का तो वास्तविक सौन्दर्य ही बिम्ब है। उनकी भावाभिव्यंजना का तो सौन्दर्य ही इन बिम्बों में निहित है। महादेवी तो सौन्दर्य के मूल की खोज ही सार्थक बिम्बों की रूपांतरित अभिव्यक्ति में करती है। जीवन की गोधूली, रजनी का पिछला पहर, स्वप्न संध्या, नक्षत्र, बदली, रजनी, प्रभात, पवन तथा बसंत आदि के अनेकों चित्र महादेवी के काव्य में मिलते हैं। दीपशिखा की भूमिका में महादेवी लिखती हैं- ''व्यक्तिगत रूप से मुझे मूर्तिकला विशेष आकर्षित करती है क्योंकि उसमें कलाकार के अंतर्जगत का वैभव ही नहीं, बाह्य आभास भी अपेक्षित रहता है। .....कुछ अजन्ता के चित्रों पर विशेष अनुराग के कारण और कुछ मूर्तिकला के आकर्षण से चित्रों में यंत्र-तंत्र मूर्ति की छाया आ गई है। यह गुण या दोष, यह तो मैं नहीं बता सकती, पर इस चित्रमूर्ति-सम्मिश्रण ने मेरे गीत को भार से नहीं दबा डाला है, ऐसा मेरा विश्वास है।'' (पृष्ठ 22)

महादेवी का वर्ण-परिज्ञान उनके बिम्ब-विधान की प्रमुख विशेषता है। रंग बोध की इसी सूक्ष्मता से बिम्बों में एन्द्रियता और अभिव्यक्ति में व्यंजक वक्रता तो आती ही है कवि की आंतरिक मनोवृत्ति भी स्पष्ट हो जाती है। ''गुलाब से रवि का पथ लीप'' कविता में संध्या का कितना सुंदर, मार्मिक और साकार बिम्ब उभर कर आता है। यहाँ गुलाल, दीप, स्वर्ण पराग आदि में उपमेय दिया है और महादेवी उपमान मात्र के माध्यम से स्वयं को सौभाग्यवती मानकर आनन्दानुभूति में लीन नायिका का चित्र अंकित करती हैं। महादेवी के काव्य-बिम्बों में राकेश, चाँदनी, ओस, मोती और चाँदी आदि श्वेत रंग वाले यथार्थों का प्रचुर प्रयोग हैः

मधुर चाँदनी धो जाती है,
खाली कलियों के प्याले।

X x x

निशा को धो देता राकेश, चाँदनी में जब अलके खोल
कली से कहता था मधुमास, बता दो मधु मदिरा का मोल

महादेवी की ''मोम सा तन धुल चुका, अब दीप सा मन जल चुका है'' जैसी कई रचनाओं में व्यापार-विधायक बिम्बों की भी प्रचुरता है। जलने-धुलने के ये व्यापार विरह की वेदना और बेचैनी को व्यंजित कर देते हैं। इसी प्रकार महादेवी ने प्रकृति के चित्रों में कल्पना की उदात्त संयोजन शक्ति का प्रयोग कर सूक्ष्म भावों को गोचर बना दिया है। सहानुभूति के व्यापार को चित्रित करते हुए ''मत'' शब्द के प्रयोग से सहानुभूति की वर्जना का कितना सहज और मार्मिक बिम्ब है देखिए-

अब तरी पतवार लाकर
तुम दिखा मत पार देना
आज गर्जन में मुझे बस
एक बार पुकार लेना।

''चाह की मृदु उँगलियों'' का गोचर-विधान देखिए महादेवी के सूक्ष्म भाव विधान को कैसे साकार कर देता है-

चाह की मृदु उँगलियों से छू हृदय के तार,
जो तुम्हीं ने छेड़ दी, मैं हूँ वहीं झंकार।

महादेवी के काव्य में जीर्ण तथा विश्रृंखल बिम्ब भी मिलते हैं पर वस्तुओं और व्यापारों की संश्लिष्ट योजना में उनका कोई जवाब नहीं। कहीं-कहीं अस्पष्टता भी है जिसका कारण लाक्षण्किता के प्रति अधिक मोह रहा है। किन्तु कुल मिलाकर बिम्ब इतने प्रभावी हैं कि अनायास ही पाठक भाव-विभोर हो उठता है। चित्रोद्धत-शैली का सुंदर बिम्ब देखिए-

मैं नीर भरी दुख की बदली
विस्तृत नभ का कोई कोना
मेरा न कभी अपना होना
परिचय इतना इतिहास यही
उमड़ी कल थी, मिट आज चली।

वास्तव में महादेवी के बिम्ब जहाँ-जहाँ भी टूटते या बिलगते लगते हैं वहाँ चित्र मोह ही कारण बनता है, काव्यानुभूति की सच्चाई का अभाव नहीं। महादेवी स्वयं दीपशिखा में लिखती भी हैं- मेरे गीत और चित्र दोनों के मूल में एक ही भाव का रहना जितना अनिवार्य है, उनकी अभिव्यक्तियों में अंतर उतना ही स्वाभाविक। गीत में विविध रूप, रंग, भाव, ध्वनि सब एकत्र हैं, पर चित्र में इन सबके लिए स्थान नहीं रहता।

इसमें प्रायः रंगों की विविधता और रेखाओं के बाहुल्य में भी एक ही भाव अंकित हो पाता है, इसी से मेरा चित्र गीत को एक मूर्त पीठिका दे सकता है, उसकी संपूर्णता बाँध लेने की क्षमता नहीं रखता। (पृष्ठ 61)

महादेवी के काव्य में यों तो सभी प्रकार के बिम्बों का विधान किया गया है किन्तु उनकी विशेष रुचि चाक्षुष, श्रव्य और स्पार्शिक बिम्बों की ओर रही है। इसी प्रकार स्मृति बिम्ब भी यहाँ हैं तो परंपरागत, सांस्कृतिक एवं सामाजिक बिम्ब को भी महादेवी ने रूपायित किया है। महादेवी के रूप बिम्ब का एक सुंदर उदाहरण देखिए-

धीरे-धीरे उतर क्षितिज से आ बसंत रजनी।
तरकमय नव वेणी बंधन
शीश फूल कर शशि का नूतन,
रश्मि वलय सित धन अवगुंठन
मुक्ताहल अभिराम बिछा दे
चितवन से अपनी
पुलकित आ बसन्त रजनी।

इस प्रकार कुल मिलाकर कह सकते हैं कि लघु बिम्ब हो या विराट बिम्ब महादेवी अनुभूति को मार्मिक अभिव्यंजना देती है। यों बिम्ब विधान के अंतर्गत महादेवी के अन्य सैकड़ों उदाहरण भी दिए जा सकते हैं किन्तु वह इतना महत्वपूर्ण नहीं। ''आज मेरे नयन के तारक हुए जलजात देखो'' या'' यह मंदिर का दीप इस नीरव जलने दो'' जैसी अनेकों पंक्तियों से यह स्पष्ट हो जाता है कि महोदवी की काव्याभिव्यंजना बिम्ब मूलक ही है। ऐसा जान पड़ता है जैसे ''यामा'' में बनाये गये चित्र ही कविताओं में ढल जाते हैं और इसी से भाव सौन्दर्य समृद्ध होता जाता है। शब्द चित्रों के माध्यम से भी महादेवी लघु विराट बिम्बों का निर्माण करती हैं। सक्रिय बौद्धिकता और उर्वर कल्पना का अद्भूत मिश्रण यहाँ देखने को मिलता है। निश्चित ही महादेवी के बिम्बों में कवयित्री का सौन्दर्य बोध उभर कर आता है।

11.7.5 अप्रस्तुत विधान

सूक्ष्म भावों की अभिव्यक्ति के लिए मूर्त्त तथा मूर्त्त के लिए अमूर्त्त की योजना छायावादी काव्य शैली की प्रमुख विशेषता मानी जाती है। महादेवी के काव्य में उपमेय-उपमान के अमूर्त्त रूप पर विशेष रूप से ध्यान दिया गया है। काव्य में अलंकारों का प्रयोग (प्रस्तुत का अप्रस्तुत) सौन्दर्य उपादान के रूप में ही होता रहा है। महादेवी की तो मूल वृत्ति ही सौन्दर्य वृत्ति है इसीलिए वे अलंकारों को आंतरिक सौन्दर्य के रूप में ही अधिक ग्रहण करती हैं। अप्रस्तुत के द्वारा प्रस्तुत के साम्य गुणों का अधिक चित्रण उनकी खास पहचान बनती हैं। रूपक, अन्योकित, समासोकित तथा उपमा उनके प्रिय अलंकार रहे हैं इनके अतिरिक्त प्रतीप, व्यक्तिरेक, उल्लेख, यमक, वैषम्य, मूलक, अपहनुति तथा विशेषण विपर्यय आदि के कई उदाहरण हैं जो काव्य कला के साधक के रूप में प्रयुक्त हुए हैं। यहाँ कुछ उदाहरण दिए जा रहे हैं-

उपमाः बिखर जाती जुगनुओं की पाँति भी
जब सुनहले आँसुओं के हार सी।

रूपकः प्रिय सान्ध्य गगन मेरा जीवन।
X x x
मैं नीर भरी दुख की बदली।
X x x
शून्य मंदिर में बनूंगी आज मैं प्रतिमा तुम्हारी।
X X X
मैं बनी मधुमास आ ली।

समासोक्तिः थोड़े में बहुत कुछ कह देने की शक्ति समासोक्ति में निहित है महादेवी के काव्य में समासोक्ति सौन्दर्य सृष्टि का प्रमुख साधन है। ''गुलालों से रवि का पथ लीप'' पंक्तियों में तो ये है ही यहाँ भी देखिएः

निशा की धो देता राकेश
चाँदनी से जब अलकें खोल।

विभावनाः वृन्त बिन नभ के खिले थे
तारकों के वे सुमन
मत चयन कर अनमोल ही।

वृन्त बिन अर्थात् बिना कारण के नभ में तारक सुमन का खिलना प्रदर्शित है। अतः विभावना स्पष्ट है।

उल्लेखः चित्रित तू मैं हूँ रेखा-क्रम
मधुर राग तू मैं स्वर संगम
तू असीम में सीमा का भ्रम

''तू तथा मैं'' का उल्लेख कई रूपों में किया गया है।

यमकः ''जगती जगती की मूक प्यास''

एक ही शब्द के दो भिन्न अर्थ हैं। पहला ''जगती'' जागृति के लिए प्रयुक्त है तथा दूसरा ''संसार के लिए।

विशेषण-विपर्ययः किरणों के प्यासे चुम्बन में।
X X X
आँखों की नीरव भिक्षा में।

यहाँ ''प्यासे'' और ''नीरव'' क्रमशः ''चुम्बन'' और भिक्षा के विशेषण बन कर आए हैं और यह वक्रतापूर्ण व्यंजना की दृष्टि से किया गया है। किन्तु वास्तव में ये विशेषण है नहीं। इसी प्रकार ''जिन चरणों की नखज्योति ने हीरक जाल लजाये'' में **प्रतीप** अलंकार, ''रूपसि तेरा घन-केश-पाश'' में **पुनरूक्ति** भी है और **अनुप्रास** भी है। ''रजत रश्मियों के तारों पर बेसुध सी गाती थी रात'' आदि में मानवीयकरण देखा जा सकता है। ''कीर का प्रिय आज पिंजर खोल दो'' में **अन्योक्ति** है। अतः स्पष्ट है कि महादेवी की अप्रस्तुत योजना का अत्यंत सहज, स्वाभाविक एवं सौन्दर्य-वर्द्धक है और इसका श्रेय उनकी सृजनात्मक-कल्पना शक्ति एवं सूक्ष्म सौन्दर्य-दृष्टि को ही जाता है।

इस प्रकार, महादेवी के रचना-विधान के इस विस्तृत अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि महादेवी की मार्मिक अनुभूति के अनुकूल ही उसमें लाक्षणिकता, व्यंजकता, प्रतीकात्मकता, भावानुकूल भाषा तथा शब्द-भंण्डार बिम्बात्मकता तथा चित्रात्मकता की मार्मिक अभिव्यक्ति हुई है। ये सभी साधक तत्व महादेवी के काव्य-सौन्दर्य को समृद्ध करते हैं। बिम्बगत उपलब्धि एवं नव्यतम प्रतीकों का सुंदरतम प्रयोग कवयित्री की प्रौढ़ दृष्टि एवम् अनूठी समझ का परिचायक है। गीतिकाव्य की मार्मिक एवं व्यापक करुणभिव्यक्ति के कारण ही उन्हें आधुनिक युग की मीरा भी कहा जाता रहा है।

11.8 छायावादी काव्य और महादेवी वर्मा

इस प्रकार हम देखते हैं कि महादेवी वर्मा छायावाद की अंतिम किंतु सशक्त स्तंम्भ हैं, जो छायावाद का सबसे अधिक साथ निभाती हैं। छायावादी-वृहत्चतुष्टयी की एक कड़ी बनकर महादेवी पंत और निराला की तरह काव्य-चेतना के पड़ाव नहीं बदलती, छायावादी शहतीर को आधार दिये रहने में ही अपनी संपूर्ण शक्ति लगा देती हैं। यही उनके वैशिष्ट्य और निरालेपन का भी सूचक है। छायावादी शैली को सभी प्रमुख-विशेषताओं की सफलतम अभिव्यक्ति उनके काव्य में मिलती है किंतु रहस्य भावना, आध्यात्मिक चेतना, वेदना की व्यापकता तथा रचना-विधान की कुशल-प्रस्तुति उनके वैशिष्ट्य को रेखांकित करते हैं। विनय मोहन शर्मा ने सत्य ही कहा है कि छायावाद ने महादेवी वर्मा को जन्म दिया और महादेवी ने छायावाद को जीवन। अतः कह सकते हैं कि प्रेम की उदात्ता, वेदना की गहराई एवं व्यापकता तथा रहस्य भावना की जींवतता का यह अद्भुत मिश्रण अन्यत्र दुर्लभ है। निःसंदेह महादेवी की सौंदर्य भावना एवं सौंदर्य दृष्टि सहज रूप में ही छायावादी काव्य के भावजगत एवं कला-जगत को सौंदर्य एवं गरिमा मंडित कर हिंदी साहित्य के इतिहास को समृद्ध ही नहीं, उपकृत भी किया है। अनूठी काव्य-शैली, कल्पना का ऐश्वर्य, मुक्तक काव्य की गीति-दृष्टि एवं अनुभूति की गहराई के कारण महादेवी को और महादेवी के कारण छायावाद को सदैव याद रखा जाएगा।

बोध प्रश्न 3

टिप्पणीः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।
ii) इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1. लगभग दस पंक्तियों में उत्तर लिखें। महादेवी सफलतम गीतिकाव्य का सृजन किस प्रकार कर सकीं?

.....

.....

.....

.....

2. महादेवी की काव्य-भाषा किन विशेषताओं से सम्पन्न थी?

.....

.....

.....

.....

3. महादेवी के प्रतीक उनकी विशिष्ट पहचान बनाते हैं। बताइये कैसे?

.....

.....

.....

.....

4. महादेवी के बिम्ब-विधान का एक सुंदर उदाहरण दीजिए।

.....

.....

.....

.....

5. महादेवी के अप्रस्तुत-विधान से किन्हीं तीन अलंकारों के उदाहरण दीजिए?

.....

.....

.....

.....

11.9 सारांश

इस इकाई में आपने छायावाद की अंतिम आधार-साम्य महीयसी महादेवी वर्मा के युग-परिवेश, जीवन, कृतित्व एवं उनकी रचनाओं के बारे में जानकारी प्राप्त की। इसके बाद महादेवी के काव्य की अंतर्वस्तु का अध्ययन करते हुए उनकी प्रेमानुभूति, वेदनानुभूति, प्रकृति वर्णन, सौंदर्यानुभूति, मूल्य-चेतना, तथा कथ्य-संवेदना के विस्तार को भी समझा। इसके साथ ही रचना-विधान के बिम्ब, प्रतीक, अप्रस्तुत विधान भाषा तथा काव्य रूप आदि के सौंदर्य का अध्ययन किया। छायावाद का यह खंड यहीं समाप्त होता है। हमें विश्वास है कि अब आप ''छायावाद'' को पूरी तरह समझ गए होंगे।

11.10 शब्दावली

गरिमामंडित : गौरव से सुशोभित।

पर दुःखकातरता : दूसरों के दुख से दुःखी होने वाला।

आत्मपरक कविता : स्वयं तक (अपनी आत्मा तक) केन्द्रित रहने वाली कविता।

पार्श्वभूमि : आसपास या निकट की पृष्ठभूमि।

अंतर्मुखी व्यक्तित्व : ऐसा व्यक्तित्व जो अपने भीतर की ओर उन्मुख रहता है। अर्थात् कम बोलने वाला।

अतृप्त लालसा : ऐसी लालसा या इच्छा जिसकी तृप्ति न हुई हो।

आर्द्र-क्रंदन : रुदन और करुणा से भरा हुआ शोर।

प्रज्ज्वलता : लालसा एवं सुबोधता से युक्त।

अमांसक सौंदर्य : वह सौंदर्य जिसमें शारीरिक्ता की बू नहीं होती अर्थात् भीतरी सौंदर्य।

वायवीय-वातावरण : ऐसा वातावरण जो हवामय जान पड़ता हो अर्थात् हवाई।

पार्थिव : पृथ्वी संबंधी या पृथ्वी से उत्पन्न।

प्रणायानुभूति : प्रेम संबंधी अनुभूति।

अनिवर्चनीय सौंदर्य : ऐसा सौंदर्य जिसका बखान ही न किया जा सके अर्थात् अलौकिक सौंदर्य

समात्मभाव : एक आत्मा का दूसरी आत्मा के अनुकूल भाव रखना या महसूस करना।

इंद्रीयातीत : इन्द्रियों से परे।

अन्योन्याश्रित : परस्पर एक दूसरे पर आश्रित।

संस्कृत गर्भित : जिसमें संस्कृत भाषा का पुट अधिक हो।

चित्राद्धत-शैली : ऐसी शैली जिसमें वर्णन करते समय एक चित्र सा उद्धृत हो जाए।

11.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

महादेवी, सम्पादक डॉ. परमानंद श्रीवास्तवः लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद

महादेवीः नया मूल्यांकन, डॉ. गणपति चंद्रगुप्तः भारतेन्दु भवन, शिमला

साहित्यकार महादेवी, हर्षनन्दिनी भाटिया, कन्दर्य प्रकाशन, दरियागंज, दिल्ली।

महीयसी महादेवी, गंगाप्रसाद पांडेय, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद

छायावाद के आधार स्तम्भ, गंगाप्रसाद पांडेय, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद

महादेवी वर्मा के काव्य में सौंदर्य भावना, डॉ. गोविंद पाल सिंह लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद।

11.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1. i) ✓

ii) x

iii) ✓

v) x

v) ✓

2. i) महीयसी महादेवी और आधुनिक युग की मीरा

ii) ''चांद'' पत्रिका

iii) ''साहित्य का संसद'', प्रयाग में

iv) हिंदी, संस्कृत, पालि, प्राकृत, बंगला, गुजराती,उर्दू तथा अंग्रेजी

v) चित्रकला, रेखाचित्र, संस्मरण, निबंध, अनुवाद, गीत तथा संगीत आदि

3. i) 1907 ई.

ii) 9 वर्ष

iii) सन् 1942 में

iv) सन् 1962 में

v) मैथिलीशरण गुप्त

बोध प्रश्न 2

1. महादेवी की कविता में समग्रतः प्रियतम मिलन की अमर-प्रतीक्षा का अलौकिक-आनंद मिलता है। मिलन और विरह के दो किनारों की भी निरंतर बहते रहने वाली महादेवी आंसू के कणों को अपना पाथेय बना कर चलती चली जाती है। उनके विरह रूपी जीवन के मूल में जो जल हैं वह अश्रुजल है। ''विरह का जलजात जीवन'' कहकर वे कभी ''नीर भरी दुख की बदली'' बन जाती है तो कभी आराध्य की प्रतीक्षा में इन नयनों के अश्रुनीर का अर्ध्य चढ़ाती हैं। विरह-साधिका महादेवी मिलन का तिरस्कार करती हैं। मिलन तो अद्वैत का सूचक है और महादेवी द्वैत बनाये रखना चाहती हैं। वे ''प्राणों'' के अंतिम पाहुन का आजीवन इंतजार करने वाली अमर साधिका हैं। उनका विरह, जीवन की मौलिक अनुभूति की मार्मिक एवं प्रामाणिक अभिव्यक्ति है।

2. आराध्य को प्रकृति में और प्रकृति को आराध्य में देखने-समझने वाली महादेवी मानवीयकरण की कला में परम-निपुण हैं। ''प्रिय सांध्य गगन मेरा जीवन'' या ''मैं नी भरी दुख की बदली'' जैसे कई उदाहरण हैं जिनमें प्रकृति को वे अपने व्यक्तित्व में समाहित करके देखती हैं और मनःस्थिति की आयत-स्नेहिल-अभिव्यक्ति करती हैं। ''मैं बनी मधुमाश आधी'' कहकर वे प्रकृति से तादात्म्य स्थापित कर लेती हैं। ''बसंत रजनी'' को वे नायिका बनाकर क्षितिज से उतरने का निमंत्रण देती है। उनकी रात्रि नायिका तारों के बेणी-बंधन तथा चंद्रमा के शीश-फूल से सुसज्जित रहती हैं। प्राकृतिक प्रतीकों और बिम्बों का अद्‌भुत प्रयोग तथा निर्माण महादेवी की कलात्मक समझ का ही परिचायक है। अतः प्रकृति महादेवी की भावनाओं की सुदृढ़ पृष्ठभूमि बनकर अनंत-यात्रा में पूरा साथ देती है।

3. महादेवी की काव्य-संवेदना में जो भाव, शक्ति बनकर सम्पादित होते हैं उनके मूल में लौकिक प्रेमानुभूतियों के साथ रहस्यात्मक आध्यात्मिकता भी घुली-मिली है। अखंड चेतन को पुष्प व्यक्तित्व के रूप में रखने वाली महादेवी भारतीय नारी के आत्म सम्मान एवं उसकी श्रद्धेय पवित्रता को कविता की ऊर्जा बना कर उसमें त्याग और

तप का आलोक भर देती हैं। उनके संकल्प की अनुभूति भारतीय नारी के स्नेह भरे आत्मदानी-व्यक्तित्व को, अंधकार से टकराने वाली महाशक्ति को तथा दीपक के प्रकाश पुंज की भांति अकम्पित एवं नीरव प्रज्जवलित होते रहने वाली सांस्कृतिक चेतना को मार्मिक अभिव्यक्ति देती है। ''प्यासे का जान ग्राम, झुलसे का पूछ नाम'' कहकर अपने सेवा-दायित्व को निभाने वाली महादेवी का काव्य निश्चित ही शक्ति का और मूल्य वत्ता का शाश्वत काव्य है।

बोध प्रश्न 3

1. महादेवी के काव्य का मुख्य श्रृंगार उसका काव्य-रूप ही है और वह है सफलतम गीतिभाजन। इसी के कारण वे आधुनिक युग की मीरा भी कहलाई। उनका गीतिकाव्य एक कोमल मेंधु खंड की तरह बरसता है और युग की सभी ज्वालाओं को शीतलता प्रदान करता है। यह अभिव्यक्ति का समर्थ माध्यम बनकर यहां आता है। आत्मानुभूति का चित्रांकन, स्वर संगीत और शब्द-योजना की लाभ कर संयोजन, आरोह-अवरोह का निर्माण तथा भावानुकूल भाषा एवं शैली विधान सभी उनकी व्यापक-करुणा को शक्ति प्रदान करते हैं। निश्चित ही महादेवी का काव्य गीतिकाव्य की महत्वपूर्ण उपलब्धि है।

2. महादेवी की काव्य भाषा अनेकों गुणों एवं विशेषताओं का भंडार है। गीतोपयुक्त इस कथा को कोमल भाषा में खड़ी बोली का परिष्कृत एवं काव्योचित एवं सहज ही देखा जा सकता है। नए शब्दों का सृजन, विशिष्ट अर्थ भरने की कला, लाक्षणिकता, रमणीय बिम्ब एवं प्रतीक विधान की अभिव्यक्ति, शब्द, निरूपण, वर्ण-विन्यास, नाद-सौंदर्य एवं उक्ति सौंदर्य का मार्मिक निर्वाह उनकी कविता के प्राण हैं। तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशी तथा प्रतीक शब्दों का कौशल उन्हें संचयी-शिल्पी ठहराता है। द्विरुक्ति और पुनरुक्ति के साथ अन्य अलंकारों का सुंदर प्रयोग भी उनकी भाषा की प्रमुख विशेषताएं हैं।

3. महादेवी की प्रतीकात्मक-संकेत भाषा ही उनकी विशिष्ट पहचान है। दीपक का प्रतीकार्य तो महादेवी की मौद्रिक देन है। इसके अतिरिक्त छायावाद के पूर्व-प्रयादित प्रतीक इंद्रधनुष, झंझा, उषा, मेघ तथा पवन आदि है तो सांध्यगान, यामिनी, गोधूलि, बदली, वर्षा, पतवार आदि प्रतीक भी उनके काव्य-सौंदर्य को समृद्ध करते हैं। जीवन के विविध क्षेत्रों के लिए गए प्रतीक निश्चित ही महादेवी की सूक्ष्म एवं गहन कल्पना शक्ति के परिमापक हैं। इन्हीं से उनकी मनोवैज्ञानिक सूझ-बूझ का भी पता चलता है। प्रकृति, पुराण एवं संस्कृति के प्रतीकों के प्रति उनका विशिष्ट झुकाव रहा।

4. देखिए, उपभाग 11.7.4

5. देखिए, उपभाग 11.7.5